ख़ुदानख़्वास्ता

शौकत थानवी

खुदा-न-ख़्वास्ता

लेखक—
शौकत थानवी

अनुवादक -
महमूद अहमद 'हुनर'

सोल विक्रेता

लहर
प्रकाशन
२, मिन्टोरोड — इलाहाबाद — २

प्रथम संस्करण
१९५४

मूल्य २॥)

मुद्रक
टंडन प्रिंटिंग वर्क्स,
५-ए, एलबर्ट रोड,
इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रकाशन

"शौकत थानवी हास्य-रस के प्रसिद्ध लेखक हैं। हिन्दी-भाषा-भाषी उनसे पूर्णतः परिचित हो चुके हैं। प्रस्तुत उपन्यास उनकी उच्च-कोटि की हास्य रचना है। आशा है पाठकों का वह भली-भांति मनोरंजन कर सकेगी। पाठकों ने यदि इसे अपनाया तो श्री थानवी की अन्य रचनाओं को उनके समक्ष रखने का प्रयत्न किया जायगा।"

—प्रकाशक

ख़ुदा-न-ख़्वास्ता

एक

हमारी नौका एक हिचकोले के साथ जैसे किसी चट्टान से टकरा सी गई और हम दोनों मियाँ बीवी ख़ुदा को याद करते हुए एकदम हड़बड़ा कर उठ बैठे। देखा तो नौका किनारे से लगी हुई थी और औरतों की एक भीड़ हमारे स्वागत के लिए मौजूद थी। लेकिन किस तरह? किसी की निगाहों में शोले थे, किसी की भवें तनी हुई और किसी के माथे पर समुद्र की लहरों से कहीं अधिक बल पड़े हुए थे। मन को विश्वास हो गया कि नौका डूब चुकी है और हम मरने के बाद दूसरे लोक में पहुँच चुके हैं। अपने गुनाहों से तौबा करने का निश्चय कर ही रहे थे कि उस भीड़ की एक महिला ने गुस्से से भर्राये हुए स्वर में कहा—"इन दोनों ने तो क़ानून का उल्लंघन और बेशर्मी की हद कर दी है। गिरफ़्तार करलो इन दोनों को और सुबह मेरे सामने पेश करो।"

यह सुनना था कि कुछ स्त्रियाँ हमारी नौका में फाँद पड़ीं। उनमें से एक स्त्री ने मेरी बीवी का बुर्क़ा नोच कर मुझे पहिना दिया और फिर हम दोनों को नौका से उतार कर एक बन्द मोटर में बिठाया गया। यह मोटर बड़ी तेज़ी से चौड़ी और साफ़ सड़कों में ले जाकर एक विशाल इमारत के सामने रोकी गई जो देखने में कुछ-कुछ जेलख़ाने सी लगती थी। सींख़चोंदार बड़े से फाटक के सामने एक कोमलाङ्गी युवती साड़ी बांधे कंधे पर बन्दूक़ रक्खे पहरा दे रही थी। मोटर के ठहरते

ही उस स्त्री ने फाटक खोल दिया और हम दोनों मोटर से उतार कर उस इमारत के अन्दर इस शान से लाये गये कि मैं बुर्के में लिपटा हुआ था. बेगम बेपर्दा थीं और हम दोनों को कुछ स्त्रियाँ बन्दूकें कंधों पर रक्खे घेरे हुए थीं। उस इमारत में पहुँचा कर हम दोनों को एक और मीनाकारीदार कमरे में बन्द करके बाहर ताला लगा दिया गया और सिर्फ़ एक महिला कमरे के दरवाज़े पर बन्दूक़ लिये पहरा देती रही, बाक़ी सब चली गईं।

हम हैरान थे कि यह जाग रहे हैं या स्वप्न देख रहे हैं। यह दुनिया है या दूसरी दुनिया। बस इतना याद पड़ता था कि नौका जब तूफ़ान में घिर चुकी थी तब भूख और प्यास से निढाल होकर पालों की ओर से निराश हो जाने के बाद हमने अपने को मौत के सिपुर्द कर दिया था और मौत ही के इन्तज़ार में न जाने किस वक़्त हम ऊँघ गये और फिर जो आँख खुली तो अपने को इस हाल में पाया जिसके बारे में यह समझ में न आ रहा था कि यह कौन सी दुनिया है। ज़िन्दगीवाली दुनिया या ज़िन्दगी के बाद वाली दुनिया। हमारे ताज्जुब और हैरानी का यह हाल था कि हम दोनों आपस में भी कोई बात न कर सकते थे। अपनी-अपनी जगह पर बैठे सोच रहे थे कि एकाएक हमारे कमरे का दरवाज़ा खुला और एक स्त्री ने एक ट्रे लाकर हम दोनों के सामने रख दी। ट्रे में कुछ बिस्कुट, कुछ सूखे मेवे और गर्म काफ़ी थी। भूख का यह हाल था कि हम दोनों टूट पड़े उन चीज़ों पर और सारा सामान थोड़ी ही देर में साफ़ कर दिया। लेकिन पेट भर जाने के बाद अब यह चिन्ता और भी परेशान करने लगी कि आख़िर हम दोनों को क्या हो गया है और हम दोनों हैं कहाँ। जो स्त्रियाँ समुद्र तट पर मिलीं थीं या उसके बाद जिन स्त्रियों को देखा उन सब की शक्ल इन्सानों की सी

थी। बिल्कुल वैसी ही स्त्रियाँ जैसी हमारी दुनिया बल्कि हमारे देश में होती हैं। बड़ी साफ़ हिन्दी बोलती हैं। अलबत्ता ज़रा सा फ़र्क़ यह था कि हमारे यहाँ की स्त्रियाँ इतनी चुस्त-चालाक और इतनी ज़िम्मेदार नहीं हुआ करतीं जितनी यहाँ महसूस हो रही थीं। स्त्री और बन्दूक़, स्त्री और गिरफ़्तारी, स्त्री और पहरेदारी। अजीब पहेलियाँ थीं ये। हमसे ज़्यादा बेगम हैरान थीं। वह गुमसुम एक-एक चीज़ को आँखें फाड़े देख रही थीं। एकाएक हमारे कमरे का द्वार फिर खोला गया और दो तीन स्त्रियों ने, जो ख़ाकी रंग की साड़ी बाँधे, कमर में चमड़े की कानिस्टिबलों की सी पेटी में डंडे लगाये हुए थीं, अन्दर आकर कहा—"उठो, कचहरी का वक़्त आ गया। ए मर्दुए! बुर्क़ा पहन कर चल। बेहया कहीं का। यह मर्द ज़ात और यह बेशर्मी!"

हमने चुपके से बुर्क़ा पहन लिया और चुपचाप उनके साथ हो लिये। हम दोनों को फिर उसी मोटर में बिठा दिया गया और यह मोटर चौड़ी सड़कों और सुन्दर बाज़ारों में से गुज़रने लगी। हमने इस बद-हवासी की हालत में भी कम से कम यह तो देख ही लिया कि हमको कहीं रास्ते में एक मर्द भी नज़र न आया। चौराहों पर सफ़ेद रंग की साड़ियाँ बाँधे हुए स्त्रियाँ बिल्कुल उसी तरह खड़ी ट्रैफ़िक को कंट्रोल कर रही थीं जिस तरह हमने अब तक ट्रैफ़िक सिपाही देखे थे। दूकानों पर स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ नज़र आईं, दूकानदार भी वही और ग्राहक भी वही। कहीं-कहीं एकाध बुर्क़ा भी दिखा, लेकिन हमको फ़ौरन यह ख़याल आ गया कि इसमें हमारी ही तरह का कोई पुरुष होगा। वह मोटर इसी प्रकार के बाज़ारों से गुज़र कर एक बड़े ही सुन्दर पार्क में दाख़िल हुई और थोड़ी दूर जाकर एक शानदार इमारत की बरसाती में रोक दी गई जहाँ एक बहुत ही मोटी-ताज़ी महिला संगीन लिये टहल-टहल कर पहरा दे रही थीं। हमारी निगरानी करनेवाली स्त्रियों ने

हमको मोटर से उतार कर उसी इमारत के एक बड़े से हाल में पहुंचा दिया जहाँ अदालत का सा नक़्शा था। सामने ही जंगले से घिरे हुए एक प्लेटफ़ार्म पर बहुत बड़ी मेज़ के गिर्द कुर्सियाँ बिछाये हुए कुछ प्रतिष्ठित महिलायें बैठी थीं और जंगले के इस तरफ़ बहुत सी स्त्रियाँ खड़ी थीं। मेज़ पर बैठी हुई स्त्रियों में से बीच वाली महिला चश्मा लगाये बड़े ग़ौर से वह बयान सुन रही थीं जो जंगले के इस तरफ़ खड़ी हुई एक स्त्री बड़ी रवानी के साथ पढ़ रही थी। हमारी निगाहों के सामने बिल्कुल कचहरी का नक़्शा फिर गया और वहाँ के ढंग से समझ में भी यही आया कि यह अदालत है। वकील बहस में लगी है और अदालत सुन रही है। मुलज़िम के कटहरे में एक स्त्री सिर झुकाये खड़ी थी। कुछ स्त्रियाँ बराबर लिखती जा रही थीं। कुछ देर के बाद वकील ने अपनी बहस खत्म कर दी। हाकिम ने चश्मा ठीक करके कुछ लिखा और सब जंगले के सामने से हट गये तो वह महिला जो रात को समुद्र किनारे मौजूद थीं और जिनके हुक्म से हम गिरफ़्तार हुए थे, आगे बढ़ीं और एक काग़ज़ अदालत के सामने पेश कर दिया। हाकिम ने उस काग़ज़ को ध्यान से देखने के बाद पीछे खड़ी हुई एक स्त्री को इशारा किया। वह स्त्री डंडा लेकर आगे बढ़ी और आवाज़ दी—

"समुद्र किनारे के मुलज़िम अदालत के सामने हाज़िर हों।"

हमारी पहरेदारिनियाँ हम दोनों को लेकर आगे बढ़ीं और हम दोनों को मुलज़िम के कटहरे में खड़ा कर दिया गया। अदालत की कुर्सी पर विराजमान वृद्ध महिला ने हम दोनों को ग़ौर से देखा और उनकी बग़ल में बैठी एक अधेड़ अवस्था की महिला ने बेगम से पूछा—

"तुम्हारा नाम?"

बेगम ने कहा—"सईदा ख़ातून।"

उन महिला ने नाम लिखते हुए पूछा—"माँ का नाम?"

"हबीब फ़ातमा।"

"क़ौम?"

"मुसलमान, शेख़ सिद्दीक़ी।"

महिला ने सब लिखने के बाद कहा—"कहो, अम्माँ हव्वा की क़सम, जो कुछ कहूँगी सच-सच कहूँगी।"

बेगम ने क़सम खा ली तब उन महिला ने बड़ी गम्भीर आवाज़ में कहा—"तुम पर यह इलज़ाम है कि तुम इस राज्य के क़ानूनों के ख़िलाफ़ एक मर्द को बेपर्दा साथ लिये किश्ती में सैर कर रही थीं। यह जुर्म इस राज्य के संगीन-तरीन जुर्मों में से एक है और इस तरह के जुर्मों की तरफ़ ध्यान न देने के मानी यह हैं कि हम अपने राज-काज का सारा नियम-क़ानून तुम्हारी ऐसी बाग़ी औरतों के लिये उलट-पुलट दें। तुमने न सिर्फ़ मर्दों को बेशर्मी के लिये उकसाया है बल्कि राज्य का क़ानून भी तोड़ा है। इस सिलसिले में तुमको क्या कहना है?"

बेगम ने कहा—"सरकार, हम इस जगह के लिये बिल्कुल अजनबी हैं। हमको दरअसल यह भी पता नहीं कि हम एकाएक किस दुनिया में आ गये हैं। आज से बीस दिन पहले हम दोनों मियाँ बीवी ने......।"

अदालत ने टोका—"बीवी मियाँ कहो। मियाँ का दर्जा नीचा है। बयान जारी रहे।"

बेगम ने कहा—"हुज़ूर, आज से बीस दिन पहले हम दोनों बीवी मियाँ ने अपने अज़ीज़ों, दोस्तों और रिश्तेदारों से तंग आकर, ग़रीबी की हालत में अपनों की बेगानगी देखकर इस दुनिया और इस ज़िन्दगी

से मुँह मोड़ लेने की ठानी और आत्महत्या का यह प्रगतिशील तरीक़ा सोचा कि अपने को क़िस्मत पर छोड़ कर एक मामूली सी नौका पर बम्बई के समुद्र तट से रवाना हो गये। न हमारी कोई मंज़िल थी और न कहीं हमको पहुँचना था। हवा का रुख जिस-जिस तरफ़ हुआ उस-उस तरफ़ हमारी नौका बहती रही। तूफ़ानों के थपेड़े खाये. मौत आ आकर टली। लेकिन हम तो ख़ुद ही हर समय मौत का स्वागत करने को तैयार थे। मगर हमारी जान इतनी सख़्त थी कि कोई तूफ़ान हमारी किश्ती को डुबो न सका और हमको यह तजरबा हुआ कि मौत सिर्फ़ उन्हीं लोगों को आती है जो ज़िन्दगी की तमन्ना करते हैं। दस बारह दिन तक हमारे पास खाने-पीने का जो सामान था वह चलता रहा। फिर हम दोनों ने एक वक़्त खाना और तरस-तरस कर मीठा पानी पीना शुरू किया। आख़िर वह भी ख़त्म हो गया और आज चार दिन के बाद हमको इस जगह पर कुछ बिस्कुट, कुछ मेवा और काफ़ी मिल सकी। हमारे हिन्दुस्तान में औरतें पर्दा करती हैं और मर्द बेपर्दा रहते हैं। इसी रिवाज के मुताबिक़ मैं बुर्क़े में थी और मेरा शौहर बेपर्दा कि अचानक हम गिरफ़्तार कर लिये गये। इस देश के क़ानूनों का तो हमको अब तक पता नहीं। यह भी मालूम नहीं कि यह जगह कौन सी है, इसका क्या नाम है और यहाँ के क्या क़ानून और नियम हैं।"

अदालत ने बेगम का सारा बयान ध्यान से सुना और कुछ लिखने के बाद सवाल किया—"तुम्हारे देश में क्या किसी को यह पता नहीं कि अरब सागर में एक नारी देश भी है जहाँ हिन्दुस्तान और आस-पास के देशों से वह स्त्रियाँ आ आकर बस गई हैं जो मर्दों की ज़्यादतियों, ख़ुदग़र्ज़ियों और हुकूमत से तंग आ चुकी थीं पर अपने स्वाभिमान को अब तक बिल्कुल त्याग न चुकी थीं।"

बेगम ने कहा—"हुजूर, यह बात मैं आज सुन रही हूँ, नहीं तो अब तक तो मैं यह समझ रही थी कि या तो यह स्वप्न है, नहीं तो हमारी किश्ती डूब चुकी है और हम दूसरी दुनियाँ में पहुँच कर अपने पिछले कर्मों का हिसाब देने के लिये हाज़िर हुए हैं।"

हाकिम ने मुस्करा कर कहा—"ख़ूब, अच्छा हम तुमको अज्ञानता के कारण कोई सज़ा नहीं देते पर तुम दोनों सरकारी शिक्षालय में छः महीने तक नज़रबन्द रहोगे। इस बीच में तुमको इस देश में रहने के ढंग आ जायँगे। शिक्षालय के नियमों का पूरा पालन किया जाय। वहाँ तुम्हारे आराम की सारी चीज़ें मिलेंगी। अगर तुमको किसी तरह की कोई ज़रूरत हो तो मंत्राणी जी वहाँ मौजूद रहती हैं, उनसे तुम मदद ले सकती हो। अपने शौहर से कह दो कि अब हिन्दुस्तान की हवा भूल जायँ। यहाँ उनको शरीफ़ बेटों दामादों की तरह शर्म-हया का ख़याल रखकर पर्दे में रहना पड़ेगा और यह आठ साल की उम्र से ज़्यादा किसी लड़की के सामने न हो सकेंगे। बाक़ी सारे क़ायदे-क़ानून और तौर-तरीक़े शिक्षालय की मंत्राणी स्वयं ही सिखा पढ़ा देंगी।"

अदालत ने यह फ़ैसला सुनाकर फ़ैसले की एक नक़ल उन महिला को दे दी जिन्होंने यह मुक़दमा पेश किया था और वही महिला हम दोनों को उसी मोटर में बिठाकर रवाना हो गईं। मोटर बड़ी ही साफ़-सुथरी और चौड़ी सड़कों से होकर थोड़ी ही देर में एक कोठी के सामने आकर रुकी और हमारी निगरानी करने वाली महिला ने हम दोनों को उस कोठी के एक कमरे में बिठाकर इन्तज़ार करने का आदेश दिया और स्वयं खटपट-खटपट करती चली गईं। थोड़ी ही देर में वे अपने साथ एक बड़ी ही सुन्दर, सुसंस्कृत नवयुवती को ले आईं और

बेगम से कहा—"यह सेक्रेट्री साहबा हैं इस शिक्षालय की, और अब आप इनकी ही मेहमान रहेंगी। आपको अगर किसी क़िस्म की कोई तकलीफ़ हो तो इनसे ही कह दीजिएगा।"

सेक्रेट्री साहबा ने बड़े ही मधुर स्वर में कहा—"मैं आपके लिये किसी ऐसे क्वार्टर का प्रबन्ध किये देती हूँ कि आपको भी तकलीफ़ न हो और आपके घरवाले भी आराम से रह सकें। अब आप इसी को अपना घर समझिये। अच्छा कोतवालिनी साहबा, अब आप जा सकती हैं।"

हमारी निगरानी करने वाली महिला, जिनके सम्बन्ध में अब यह मालूम हुआ कि कोतवालिनी हैं, सेक्रेट्री साहिबा से हाथ मिला कर खटपट करती हुई चली गईं और सेक्रेट्री साहिबा हमारे रहने-सहने के प्रबन्ध में लग गईं।

दो

शिक्षालय में जो क्वार्टर हमको रहने के लिये दिया गया उसके दो भाग थे। अन्दर मर्दाना और बाहर ज़नाना। मर्दाना हिस्से में पर्दे का विशेष प्रबंध था। घर में काम करने के लिये दो मर्द थे और बाहर ज़नाने के लिये दो औरतें मिली थीं। शिक्षालय की ओर से आराम और सुविधाओं का बड़े ऊँचे पैमाने पर इन्तज़ाम था पर खाना घर पर बनता था और सारा इन्तज़ाम भी घर में हमको और बाहर बेगम साहबा को ख़ुद ही करना पड़ता था। दरअसल राज्य की तरफ़ से छः महीने तक पाँच सौ रुपया महीने की एक पेन्शन बेगम को मिलने लगी थी कि इसी में अपना ख़र्च चलाओ। नौकरों को तनख़्वाह दो और जो चाहो करो। चुनांचे सेक्रेट्री साहबा की सलाह से बेगम सारा इन्तज़ाम करती थीं। महीने भर की जिन्स लाकर घर में भर दी गई थी। दूध, मक्खन, डबल रोटी, अंडों और तरकारियों के राशन बँध गये थे। अब मुसीबत यह थी कि घर चलाना था हमको। खाना पकाने के लिये जो नौकर घर में था वह पकाता तो बहुत अच्छा था पर उसके कर्त्तव्यों में यह भी था कि वह हमको खाना पकाना सिखाये और सेक्रेट्री साहबा का भी विशेष आदेश था कि एक महीने की इस ट्रेनिंग के बाद हमारा खाना पकाने का इम्तहान होगा इसलिये सुबह से उठकर चूल्हे-हाँडी की फ़िक्र होती थी। हमको भला चूल्हा-हाँडी से क्या मतलब? अबसे पहले कभी रसोईघर का रुख़ भी न किया था। बहुत से मर्दों को खाना बनाने का शौक़ होता है।

.खुद हमारे बहुत से दोस्त अपने हाथ से अच्छी-अच्छी चीज़ें पका लिया करते थे मगर हम इस सिलसिले में बिल्कुल कोरे थे। न कभी यह शौक़ हुआ और न अब तक ऐसी मुसीबत पड़ी थी कि .खुद खाना पकाते। लेकिन अब हम मजबूर थे कि रसोईघर में धुएं से आँखें फोड़ें और चूल्हे के सामने अपना मुंह झुलसा करें। हमारे बावर्ची ने, जो बावर्ची होने से ज़्यादा हमारा उस्ताद था, हमको सबसे पहले आटा गूँधना सिखाया। कुछ न पूछिये कितनी उलझन होती थी जिस वक़्त गीला आटा दोनों हाथों में लुथड़ कर रह जाता था। आटा गूँधने की तालीम के बाद लोई बनाने का सबक़ याद कराया गया और फिर रोटी पकाने की तालीम दी जाने लगी। .खुदा बचाये, हमारे .ख्याल में दुनिया का सबसे मुश्किल काम यही रोटी बनाना है। शुरू-शुरू में तो हमारी चपातियाँ तवे पर अजीब-अजीब नक़्शे बनाया करती थीं। कोई चपाती होती थी बिल्कुल सीलोन के नक़्शे की, कोई चपाती इधर से उधर फटकर आस्ट्रेलिया का नक़्शा बन जाया करती थी। कोई चपाती आधी हाथ में चिपक कर रह जाती थी, आधी चूल्हे में और तवा बिल्कुल साफ़। .खैर, यह तो अभ्यास न होने के कारण था, लेकिन तवे के ऊपर चपाती डाल कर फिर उसको पलटना, बस क़यामत का सामना होता था। कभी उँगलियाँ तवे से चिपक गईं, कभी रोटी जल कर रह गई। सच पूछिये तो हम तंग आ चुके थे इस ज़िन्दगी से। बेगम से अगर कभी इस मुसीबत का ज़िक्र किया तो वह हँसकर कह दिया करती थीं—"ज़रा से घरेलू कामों से घबरा गये आप? पड़ जायगी आदत धीरे-धीरे। सवाल यह था कि आख़िर किस-किस बात की आदत डाली जाती? ज़िन्दगी ही कुछ अजीब सी होकर रह गई थी। वह आदमी, जिसका घर पर कभी पता ही न चलता हो, अब जैसे .कैद होकर रह गया था। घर से बाहर जाने की नौबत ही न आती और घर का काम इतना कि किसी वक़्त दम

लेने की मोहलत ही न थी। सुबह उठते ही चाय और नाश्ते के इन्त-ज़ाम के लिये रसोईघर में सर खपाना पड़ता था। चाय और नाश्ते के ख़त्म होते ही दिन के खाने का इन्तज़ाम शुरू हो जाता था। एक बजे दिन तक इससे .फ़ुरसत पाई तो दूसरा नौकर घर की सफ़ाई वग़ैरा की ट्रेनिंग देने के अलावा सीने-पिरोने की तालीम दिया करता था। वहाँ हम थे कि क़मीज़ का एक-एक बटन बेगम से टकवाया करते थे। सुई पकड़ने तक की तमीज़ न थी। और अब हमारे लिये सिंगर मशीन अलग थी, सीने-पिरोने की थैली अलग और .कैंची अलग। दिन भर कपड़ों का ढेर लगाये कुछ न कुछ सिया करते थे। .ख़ुदाबख़्श यानी हमारा वह नौकर जो हमें सीना काढ़ना सिखाया करता था, हमसे बराबर कहा करता था कि यह बड़ी ख़राब बात है कि मर्दाने कपड़े भी बाज़ार में दर्ज़ी सियें। आपको तो चाहिये कि बेगम साहिबा के कपड़े सीना भी सीख लें। और जब हमने कहा कि उनको आप सीना आता है तो उसने बड़े ताज्जुब से कहा कि तब तो और भी शर्म की बात है कि वे औरत होकर सीना-काढ़ना जानें और आप मर्द होकर, जिनका काम ही सीना-काढ़ना है, सुई तक न पकड़ सकें। उससे हमको यह भी मालूम हो चुका था कि बेगम साहिबा लाख सीना-काढ़ना जानें, लेकिन अब उनको इन कामों की .फ़ुरसत ही न मिलेगी। वे चार पैसे कमाने की फ़िक्र करेंगी या ये घरेलू काम लेकर बैठेंगी। और सचमुच बेगम के बाहर के काम इतने बढ़े हुए थे कि घर में उनका पता ही न चलता था। बस हमको इतना ही मालूम था कि उनको पुलिस ट्रेनिंग स्कूल में भरती कर दिया गया है। इसलिये दिन भर वह स्कूल में रहती थीं और शाम को वहां से वापस आकर बाहर ज़नाने में ही उनकी बहुत सी सहेलियाँ आ जाती थीं जिनसे बैठी बातें बनाया करती थीं और हम अन्दर से भर-भर थाली पान बना-बना कर भेजा करते थे। कभी-कभी शुबरातिन—

बाहर की नौकरानी, ड्योढ़ी में आकर आवाज़ देती कि बेगम साहिबा चाय मँगवा रही हैं और हमको चाय तैयार करके बड़े सलीक़े के साथ नाश्ते सहित बाहर भेजना पड़ती थी। कभी मालूम होता कि बाहर ज़नाने में ताश खेले जा रहे हैं और हम दिल ही दिल में ऐसी मजलिसें याद करके तड़प जाया करते थे। कभी यह मालूम होता कि बेगमाबाद की कोई मशहूर शायरा (कवियत्री) आई हुई हैं। उनकी शायरी सुनी जा रही है और हम अपनी साहित्यिक गोष्ठियाँ याद करके रह जाते थे। कभी .खुदाबख्श से कहा कि ज़रा झाँककर देखो तो बाहर क्या हो रहा है और मालूम यह हुआ कि बेगम साहिबा सेक्रेट्री साहिबा से कैरम खेल रही हैं। सारांश यह कि उनका दिल बहलने और उनकी दिलचस्पियों के तो नित्य नये सामान थे पर हम .कैद होकर रह गये थे घर में। अगर बेगम ही घर पर रहा करतीं तो उनसे बात करके जी बहलता पर उनको अपनी बाहर की दिलचस्पियों से ही .फ़ुर्सत न थी। और अगर हमने कभी इस सिलसिले में शिकायत भी की तो जवाब यह मिलता था कि तुम तो हो बेवकूफ़। तुम्हारे लिये तफ़रीहों की क्या ज़रूरत है। मैं दिमाग़ी काम करती हूँ, सर खपाती हूँ. दिन भर ट्रेनिंग स्कूल में मेहनत करती हूँ, अगर शाम को ज़रा तफ़रीह न करूँ तो .दिमाग़ को शान्ति कैसे मिले। तुम घरदारी करते हो, जिसमें दिमाग़ को काम में लाने की कोई ज़रूरत ही नहीं। बस गोश्त भून लिया, तुम ही बताओ, इसमें दिमाग़ की क्या ज़रूरत पड़ी? दाल बघारने, रोटी पकाने और थोड़ा बहुत सीने-पिरोने के अलावा तुम्हारा काम ही क्या है। मैं दिन भर की थकी-हारी इसीलिये तो घर में नहीं आती कि तुम यह रोना रोने बैठ जाओ। औरत तो इसलिये घर में आया करती है कि मर्द उसकी तमाम थकावट दूर कर देगा, उसका मन बहलायेगा, उससे अच्छी-अच्छी बातें करेगा। पर तुम्हारा तो ढंग ही निराला है

कि मैंने घर में क़दम रक्खा और तुम शिकायतों के दफ़्तर लेकर बैठ गये। मैं इसको सख़्त नापसन्द करती हूँ। और उनके जाने के बाद .ख़ुदाबख़्श और बावर्ची अब्दुल करीम भी हमको समझाते थे कि यह आपकी भूल है। बेगम का दिल हाथ में रखिये। उनके दम से आपकी सारी .ख़ुशी है, उनसे ही आपका सुहाग बना है। औरतज़ात को अगर कभी आपकी बातों पर .ग़ुस्सा आ ही जाय तब सब्र कर लीजियेगा। जब वह घर में आयें तब आप ख़ुद उठकर उनके सब काम किया कीजिये। हाथ मुँह धोने का पानी रख दीजिये, घर में पहनने वाली साड़ी देकर बाहर वाली साड़ी सँभाल कर रख दीजिये। जूता उतार कर सलीपर रख दीजिये। जब वह खाना खाने बैठें तब ज़रा पंखा लेकर बैठ जाया कीजिये। वह .ख़ुद आपसे ये ख़िदमतें न लेंगी। पर औरत का दिल मोहने के लिये मर्दों को यह करना ही पड़ता है। अब सेक्रेट्री साहिबा के मियाँ को देखिये कि बच्चों का पालन......।"

हमने उछल कर कहा—"बच्चों का पालन? क्या यहाँ यह भी होता है?"

अब्दुल करीम ने आश्चर्य से कहा—"इसमें ताज्जुब की क्या बात है। सभी मर्द बच्चों का पालन करते हैं। ऐ और नहीं तो क्या औरतें बच्चे पालने के लिये घर में बैठी रहती हैं?"

हमने निहायत घबरा कर कहा—"पर बच्चे तो औरत ही के पेट से होते हैं या वह भी......?"

.ख़ुदाबख़्श ने हँस कर कहा—"आपकी भी क्या बातें हैं। मर्द के पेट से बच्चा क्योंकर हो सकता है। मगर पैदाइश के बाद ही से सारी ज़िम्मेदारी तो मर्द की होती है।"

हमने इस सिलसिले में पूरी जानकारी हासिल करने के लिये कहा—"औरत के बच्चे की जिम्मेदारी मर्द कैसे ले सकता है?"

अब्दुल करीम ने कहा—"जिस तरह आपके देश में मर्द के बच्चे की जिम्मेदारी औरत ले लिया करती है।"

हमने कहा—"मगर हमारे देश में भी बच्चा मर्द के पेट से ख़ुदा नख़्वास्ता नहीं होता।"

ख़ुदाबख़्श ने समझाते हुए कहा—"देखिये, इसको यों समझिये कि औरत के सर तो रोज़ी कमाने की एक ज़िम्मेदारी है। दूसरे जब बच्चा पेट में होता है तो छठे महीने के बाद से उसको सवा चार महीने की छुट्टी बच्चा होने के सिलसिले में दी जाती है। यानी तीन महीने की बच्चा होने के पहले और सवा महीने की बच्चा होने के बाद। सवा महीने पर औरत नहा धोकर अपने बाहर के कामों में लग जाती है और अब बच्चे की पूरी देख-भाल की ज़िम्मेदारी मर्द पर आ जाती है। उसको दूध बना कर पिलाना, उसको नहलाना, उसको साफ़ रखना, उसको बहलाना, उसको सुलाना, मतलब यह कि सब कुछ मर्द ही करते हैं।"

अब्दुल करीम ने कहा—"यही तो मैं जिक्र कर रहा था कि सेक्रेट्री साहिबा के घरवाले का यह हाल है कि एक तो बेचारे घर का पूरा काम करते हैं उस पर से ख़ुदा रक्खे तीन छोटे-छोटे बच्चे हैं। उनकी देख-भाल अलग। फिर यह कि ज़रा सी भी छुट्टी मिली और वे बुनने की सीलियाँ या क्रोशिया लेकर बैठ गये। कभी किसी बच्चे का स्वेटर बुन रहे हैं कभी किसी का कनटोप, और कुछ नहीं तो मेजपोश और तकिये के ग़लाफ़ों पर फूल ही काढ़ा करते हैं। घर की सफ़ाई का यह हाल है कि

फँस गया। इससे अच्छा तो यह था कि हमारी किश्ती डूब ही जाती। अच्छा यह बताओ कि यहाँ से हमको कभी छुटकारा भी मिलेगा?"

.खुदाबख्श ने कहा—"बेगम साहबा जब चाहें आपको लेकर जा सकती हैं। आप अकेले नहीं जा सकते और न बग़ैर उनकी मर्ज़ी के जा सकते हैं। यह ट्रेनिंग के छः महीने बिता कर बेगम साहबा बिल्कुल आज़ाद होंगी कि वे जो जी चाहे करें।"

अब्दुल करीम ने कहा—"मगर बेगम साहबा भला क्यों जाने लगीं उस देश में जहाँ सुना है कि औरतों के साथ वहीं सुलूक होता है जो यहाँ मर्दों के साथ होता है। कौन औरत इसको पसन्द करेगी कि वह अपनी यह आज़ादी और यह हुकूमत छोड़ कर वह .कैद और .गुलामी लेले। अच्छा, यह बातें तो फिर हो सकती हैं। मुझे घबराहट हो रही है आप से। आप पहले शेव कर लीजिये।"

हम बुझे हुए दिल के साथ उठे और आईने के सामने शेव करने के लिये बैठ गये।

तीन

आज हमारे यहाँ सेक्रेट्री साहबा के घरवाले आने वाले थे। बेगम ने हमको ख़ास हिदायतें दे रक्खी थीं कि घर अच्छी तरह साफ़-सुथरा रहे और पूरी-पूरी ख़ातिर हो। इसके अलावा यह भी कह दिया था कि बाहर ज़नाने में सेक्रेट्री साहबा भी खाना खायेंगी। चुनांचे दावत का भी इन्तज़ाम था। हमको अब रोज का मामूली खाना बनाना तो आ गया था मगर अभी दावत के लिये अच्छे-अच्छे खाने बनाने नहीं आते थे। अब्दुल करीम ने इस दावत का इन्तज़ाम .ख़ुद ही किया और हमने .ख़ुदाबख़्श की मदद से सारे घर की सफ़ाई की, .ख़ुद भी नया सूट निकाल कर पहना और बाहर भेजने के लिये पान बनाने लगे कि ठीक उसी समय ड्योढ़ी में आवाज़ आई—"सवारी उतरवा लो।"

.ख़ुदाबख़्श ने कहा—"लीजिये, वह आ गये सेक्रेट्री साहबा के घरवाले।"

और हमने ड्योढ़ी तक जाकर उनका स्वागत किया। वह डोली में भी बुर्क़ा पहन कर बैठे थे। हालाँकि चार क़दम आना था उनको, मगर इतना कड़ा पर्दा था कि न पूछिये। डोली से उतर कर पहला सवाल यही किया कि "कोई औरत तो नहीं है घर में?" और जब हमने विश्वास दिलाया कि कोई नहीं है तब वह तशरीफ़ लाये अन्दर, और कमरे में पहुँच कर बुर्क़ा उतारने के बाद अपनी टाई ठीक की। हमने बातचीत का सिलसिला छेड़ने के लिये कहा, "आपसे मिलने की ऐसी

तमन्ना थी कि मैं क्या कहूँ। मगर मैं यहाँ अजनबी, और आपने कभी तकलीफ़ नहीं की।"

सेक्रेट्री साहबा के शौहर ने ख़ालिस घरेलू अन्दाज़ में कहा, "क्या बताऊँ, .ख़ुद मेरा बहुत जी चाहता था आपसे मिलने को। घर के झगड़े मोहलत ही नहीं देते। छोटे बच्चे की आँखें दुख रहीं थीं, उससे बड़े बच्चे को खाँसी ऐसी है, कि जब दौरा पड़ जाता है, पेट में साँस नहीं समाती। डाक्टरनी का इलाज महीने भर तक हुआ। जब उससे कोई फ़ायदा न देखा तो मैंने इनसे कहा कि किसी हकीमिन को दिखा दें। अब अहमदी ख़ानम साहिबा हकीमिन का इलाज हो रहा है और .ख़ुदा की मेहरबानी से फ़ायदा भी है। इनको अपने सरकारी कामों से .फ़ुरसत नहीं मिलती। दिन भर बाहर ही रहती हैं, और .फ़ुरसत मिले भी तो मैं इसको पसन्द नहीं करता कि मेरे होते मर्दाना काम यानी बच्चों की देख-भाल और दूसरे घरेलू काम वह औरत होकर करें।"

सेक्रेट्री साहबा के ये शौहर यों तो बड़े शानदार मर्द थे, अच्छे ख़ासे क़द और हाथ पाँव के आदमी, खुलता हुआ गोरा रंग, बड़ी-बड़ी ताबदार मूँछें, दाढ़ी मुँडी हुई, इसलिये कि .ख़ुदा रक्खे सुहागवान थे। बड़ा ही सुन्दर .फ़ैशनेबुल सूट पहने, क़ीमती टाई बाँधे, सर पर बड़े-बड़े अँग्रेज़ी बाल, जो हिन्दुस्तानी विधवा औरतों की तरह बिल्कुल उलटे हुए यानी बेमांग के थे, अच्छा ख़ासा रोबदार चेहरा, लेकिन बातें ऐसी कि लगता था कि वह बातें कर ही नहीं रहे हैं। हमने ताज्जुब से उनकी बातें सुनकर कहा—" मगर कमाल है, आप घरेलू काम-काज भी करते हैं और बच्चों की देख-भाल भी।"

उन्होंने मूँछों को ठीक करते हुए कहा—"तो फिर क्या करूँ। रिश्तेदारों में ऐसा कोई मर्द नहीं जो बेगम साहबा के सामने आ सके

और नौकरों पर मुझे इतना भरोसा नहीं कि घर उन पर छोड़ दिया जाय। अलबत्ता आप तो फिर भी आज़ाद हैं। अभी कम से कम बच्चों ही के झगड़े में नहीं फँसे।"

मैंने कहा—"अरे साहब, जितनी पाबंदियाँ बग़ैर बच्चों के मेरे सर हैं, मेरे लिये तो वही बरदाश्त से बाहर हैं। मैं तो जिन्दगी भर इस सारी मुसीबत से आज़ाद रहा। मेरे देश में भला मर्दों को घर के चूल्हा-हांडी और सीने-पिरोने से क्या मतलब?"

वह घबरा कर बोले—"अरे, तो फिर कौन करता है घर का सारा इन्तजाम?"

"वहाँ तो औरतें यह सब कुछ करती हैं।"

वह बोले—"और मर्द बैठे देखा करते हैं?"

हमने कहा—"जी नहीं, मर्द अपने रोज़ी-रोजगार के धंधे देखते हैं, नौकरी-चाकरी और रोज़ी कमाने के दूसरे काम उनके लिये होते हैं।"

मेकेंज़ी साहबा के शौहर ने ताज्जुब से कहा—"लाहौल विला .क़ुवत। और औरतें ऐसी बेहया होती हैं कि मर्दों की कमाई खाती हैं?"

हमने कहा—"इसमें हया और बेहयाई का क्या सवाल। वहाँ औरतें होती ही हैं मर्द की मोहताज।"

वह उसी तरह ताज्जुब से बोले—"अजीब मुल्क है आपका और अजब रिवाज है वहाँ का। यहाँ तो यह औरत के लिये मर जाने की बात है कि वह अपनी जिन्दगी में मर्द को बाहर निकाले कमाई करने के लिये और आप घर में बैठ कर मर्द की कमाई खाये। और वहाँ के मर्द भी .ख़ूब हैं जो बाहर निकलते हैं कमाई करने के लिये। तो क्या वहाँ पर्दा बिल्कुल नहीं है?"

हमने कहा—"है क्यों नहीं। वहाँ औरतें पर्दा करती हैं।"

वह एकदम इस बुरी तरह हँसे हैं जैसे किसी ने कोई बड़ा जबर्दस्त चुटकुला सुना दिया हो। बड़ी मुश्किल से हँसी को क़ाबू में लाकर बोले—"क्या सचमुच औरतें पर्दा करती हैं और मर्द बेपर्दा रहते हैं? यानी आपका मतलब यह हुआ कि औरतें बुर्क़ा पहनती होंगी और डोली में बाहर निकलती होंगी।"

हमने उनकी इस हँसी पर ताज्जुब करते हुए कहा—"जी हाँ, औरतें बुर्क़ा पहनती हैं और औरतें ही डोलियों में या पर्देदार गाड़ियों में निकला करती हैं। औरतों के लिये थियेटर और सिनेमा में, यहाँ तक कि रेलगाड़ियों में भी ज़नाने दर्जे होते हैं।"

वह बोले—"ख़ैर ज़नाने दर्जे तो यहाँ भी अलग होते हैं हर जगह, मगर वह बहुत बड़े होते हैं और उनमें ही एक तरफ़ पर्देदार दर्जा होता है मर्दाना जिसमें पर्दे का ख़ास ख़्याल रखा जाता है हम शरीफ़ बेटों, दामादों के लिये। मैं तो आपकी बातों को इस तरह ताज्जुब से सुन रहा हूँ जैसे कोई सपना देख रहा हूँ। और हँसी आ रही है इस बात पर कि कैसी अजीब बात मालूम होती होगी यह कि औरत डोली में चली जा रही है बुर्क़ा ओढ़े। तो क्या आपकी बेगम साहबा भी इसी तरह बुर्क़ा पहना करती थीं?"

हमने कहा—"जी हाँ, बिल्कुल पर्दे में रहती थीं, बस इसी तरह जिस तरह यहाँ आकर मैं मुसीबत में फंस गया हूँ।"

उन्होंने जैसे बड़े ताज्जुब से पूछा—"अच्छा, यह तो बताइये कि आप ख़ुद कैसे बेपर्दा बाहर निकलते होंगे। मुझे तो कोई अगर बग़ैर बुर्क़े के सड़क पर छोड़ दे तो मैं वहीं पर बैठ जाऊँ अपने कोट से मुँह छिपा कर। एक क़दम तो मुझसे चला न जाय। अभी मैं डोली पर आया हूँ तो जब तक कहारिनें ड्योढ़ी से बाहर नहीं चली गईं, मैंने डोली के बाहर क़दम नहीं रक्खा।"

हमने अचरज से कहा—"क्या कहा, कहारिनें? यानी औरतें आपको डोली में लाई हैं?"

वह हमसे भी ज़्यादा ताज्जुब से बोले—"और नहीं तो क्या मर्द डोली उठाते हैं?"

हमने कहा—"जी हाँ, हमारे यहाँ तो कहार होते हैं डोली उठाने के लिये।"

उन्होंने कहा—"आपके यहाँ की तो दुनिया ही निराली है। औरतें डोली में बैठती हैं, मर्द डोली उठाते हैं। यहाँ तो यह तसव्वुर (कल्पना) ही ऐसा अजीब मालूम होता है कि हँसी भी आ रही है और ताज्जुब भी हो रहा है।"

हम कुछ कहने ही वाले थे कि बाहर से बेगम की आवाज़ आई—"अरे, मैंने कहा, सुनते हो? भाई साहब से मेरा सलाम कह दो।"

सेक्रेट्री साहबा के शौहर ने इशारे से कहा कि मेरा भी सलाम कह दो। चुनांचे हमने ड्योढ़ी के पास जाकर कहा—"वह भी तुमको सलाम कह रहे हैं।"

बेगम ने जैसे डाँटते हुए कहा—"इतने ज़ोर से तो न बोलो। मालूम है कि बाहर ग़ैर औरतें बैठी हैं, वह क्या कहेंगी? वह भी अपने दिल में कहेंगी कि कैसा बेशर्म मर्द है। ज़रा तो तुमको ख़याल होना चाहिये। अपना नहीं तो कम से कम मेरा तो ख़याल किया करो कि बाहर इस औरत की जो थोड़ी बहुत इज़्ज़त है उसमें बट्टा न लगे। एक उनको देखो सेक्रेट्री साहबा के शौहर को, आख़िर वह भी तो मर्द हैं। मैंने सलाम कहलाया तो उसका जवाब भी उन्होंने तुमसे कहलवाया है। और एक तुम हो कि चिल्ला रहे हो ड्योढ़ी में खड़े हुए।"

हम अचरज से बुत बने जो कुछ क़िस्मत सुनवा रही थी, उन बेगम साहबा से, वह सब सुन रहे थे जिनसे हम .ख़ुद कभी इस तरह

की बातें किया करते थे। सच पूछिये तो हमारा यह ज़ब्त (सहनशीलता) क़ाबिले-तारीफ़ था। जिस मर्द ने हमेशा हुकूमत की हो, जिसने कभी किसी की आधी बात न सुनी हो, जो हमेशा सरताज और मालिक बन कर रहा हो, जो सही मानों में मर्द हो, औरत न हो, जिससे हमेशा बीवी ने यह कहा हो कि मैं तुम्हारी मामूली लौंडी हूँ, जिसकी नाराज़ी पर बीवी के पास सिवाय रोने-धोने के कोई चारा ही न हो वह आज .खुद बीवी से ये बातें सुने। .खुदा की शान नज़र आ रही थी हमको और हम चुप थे। आख़िर बेगम साहबा ने ड्योढ़ी में खड़े-खड़े ही हमारी अच्छी तरह गत बनाने के बाद कहा—".खुदा के वास्ते अब ऐसी कोई बात न कर डालना कि मैं कहीं मुँह दिखाने के क़ाबिल ही न रह जाऊँ। ट्रेनिंग की मुद्दत ख़त्म होने वाली है। अब हमको आज़ादी की ज़िन्दगी बितानी है। मेरा ख़याल है कि सेक्रेट्री साहबा के घरवाले इसीलिये आये हैं कि वह तुम्हारे तौर-तरीक़े देखकर सरकार में रिपोर्ट भिजवायें कि हमने इस देश के रहन-सहन का अपने को किस हद तक आदी बना लिया है। बाहर तो मेरे बारे में रिपोर्ट बहुत अच्छी है लेकिन .खुदा बचाये तुम अक़्ल के कोरे मर्दों से। न जाने कहाँ लुटिया डुबो दो।"

बाहर से सेक्रेट्री साहबा की खनकती हुई आवाज़ आई—"सईदा बहन, यह क्या ड्योढ़ी में गुपचुप बातें हो रही हैं जो किसी तरह ख़त्म होने में ही नहीं आतीं। मालूम होता है कि हमारे भाई साहब ने दामन पकड़ रक्खा है। और मेरा सलाम भी कह दिया था ?"

बेगम ने ऊँची आवाज़ में कहा—"बहन, वह .खुद तुमको सलाम कह रहे हैं। मैं इतनी देर से यही कह रही हूँ कि आख़िर तुम .खुद क्यों नहीं सलाम कह देते, लेकिन बेचारे शर्मा ही जाते हैं हालांकि मैंने इनको समझा दिया है कि मेरे और बहन जमाल आरा (सेक्रेट्री

साहबा) के ताल्लुक़ात ऐसे ही हैं कि अगर तुम्हारी आवाज़ उनके कानों तक पहुँच भी जाय तो कोई हर्ज नहीं है मगर वह गूँगों की तरह खड़े इशारे कर रहे हैं।"

जमाल आरा ने कहा—"ठीक है, मैं तो बहुत .खुश हूँ कि भाई साहब ने इस देश के भले और घरेलू मर्दों के तरीक़ों और तहज़ीब (सभ्यता) को बहुत जल्द अपना लिया।"

बेगम ने हमारी तरफ़ से, बिना हमारे कुछ कहे हुए कहा—"वह आपका शुक्रिया अदा कर रहे हैं और कह रहे हैं कि .खुदा करे आपने मेरा हौसला बढ़ाने के लिये यह सब न कहा हो बल्कि सचमुच ही ऐसा हो। और यह शिकायत कर रहे हैं कि आपने अपने शौहर नामदार को ऐसा छिपा कर रक्खा है कि इतने दिनों के बाद आज दर्शन हुए हैं।"

जमाल आरा ने अपनी उसी दिलरुबा आवाज़ में कहा—"अरे बहन, उनसे कह दो कि जब तक गोद ख़ाली है, जितना चाहें बढ़-चढ़ कर बातें बना लें। मेरे शौहर की तरह जब बच्चों के झमेलों में फँसेंगे उस समय पता चलेगा कि .फ़ुरसत किस चिड़िया का नाम है, और अब तो दोनों में मुलाक़ात हो ही चुकी है। अब भाई साहब से कह दो कि वह .खुद ग़रीबख़ाने पर तशरीफ़ लायें किसी दिन।"

बेगम ने हमारी तरफ़ से, बिना हमारे कहे कह दिया—"कह रहे हैं कि ज़रूर आऊँगा मगर इस ट्रेनिंग घर से तो निकल जाने दीजिये।"

जमाल आरा ने कहा—"आख़िर आप लोग बिला वजह ट्रेनिंगघर को जेल क्यों समझे हुए हैं। यहाँ तो राज्य के बहुत ही इज़्ज़तदार मेह-मान ठहराये जाते हैं और आप लोगों के अलावा अब तक तो यहाँ सिर्फ़ वही अपने फ़न की माहिर औरतें बुला कर रक्खी जाती थीं जिनकी मदद की इस राज्य को ज़रूरत हुआ करती थी और जो

'नाज़ुकिस्तान' के बाहर से आकर इस ट्रेनिंग घर में नाज़ुकिस्तान के तौर-तरीक़े और यहाँ की सामाजिक शिक्षा हासिल करती थीं। उनमें से अक्सर के साथ मर्द भी होते थे जिनको घरेलू और दूसरे मर्दाना कामों की तालीम दी जाती थी जिसमें कि वे नाज़ुकिस्तान से बाहर के तौर-तरीक़े यहाँ न फैला सकें। आप लोगों के साथ तो हुकूमत ने बड़ी रिआयत की है कि बिना किसी फ़न (कला) की महारत के और बग़ैर बाहर से बुलाये हुए आपको वही दर्जा दिया जो बुलाये हुए सरकारी मेहमानों को दिया जाता है। अब बहुत जल्द आप यहाँ की आज़ाद और ज़िम्मेदार ज़िन्दगी बिताने का हक़ हासिल कर लेंगी, और मिठाई खिलाइये तो एक .ख़ुशख़बरी और भी सुना दूँ।"

बेगम ने बेताब होकर कहा—"तुमको मेरी क़सम जमाल आरा बहन, .ख़ुशख़बरी सुना दो, फिर जितनी चाहे मिठाई खा लेना।"

जमाल आरा ने कहा—"आज ही होम मिनिस्ट्री की एक चिट्ठी आई है और तुमको सीतापुर सूबे की राजधानी राधानगर में शहर कोतवालिनी बनाया गया है। पहली जनवरी को तुमको यहाँ की गवर्नरिन के सामने पेश किया जायगा जो तुम्हें ख़ानम बहादुरनी का ख़िताब देंगी।"

बेगम ने .ख़ुशी से एक छलांग बाहर ज़नाने की तरफ़ लगाई और हमने झाँक कर देखा कि वह मारे .ख़ुशी के जाते ही जमाल आरा से लिपट गईं और हम यह सोचते हुए अपने मेहमान के पास वापस आ गये कि या .ख़ुदा यह ख़ानम बहादुरनी क्या बला है? लेकिन फिर एकदम हमारी समझ में आ गया कि यह 'ख़ानबहादुर' की तरह की कोई चीज़ होगी।

चार

पहली जनवरी की सुबह हमारी इस ज़िन्दगी के एक और इन्क़लाब को साथ लाई। आज ट्रेनिंग-घर में सुबह से ही चहल-पहल थी। दर-असल आज बेगम को गवर्नरिन साहिबा के दरबार में जाकर अपने ओहदे का चार्ज भी लेना था और वह 'ख़ानम बहादुरनी' का ख़िताब भी हासिल करने वाली थी। लेकिन ट्रेनिंग-घर में चहल-पहल इसलिये थी कि जमाल आरा ने इस ख़िताब की .ख़ुशी में और बेगम की विदाई के सिलसिले में एक पार्टी दी थी। बेगम ने हमको बता दिया था कि दो एक बेगमों के शौहर भी अन्दर मर्दाने में तुमसे मिलने और तुमको बधाई देने आयेंगे। इसलिये हमने भी घर में .ख़ूब इन्तज़ाम कर रक्खा था। अब हम कोई रंगरूट तो रहे नहीं थे कि इन्तज़ाम और मेहमान-दारी से घबरा जायें। अब तो एक से एक खाना हम बना लेते थे, एक से एक कपड़ा हम सी लेते थे। बेगम आजकल हमारे ही हाथ का बुना हुआ स्वेटर पहने घूम रही थीं और हम .ख़ुद अपना सिया हुआ कोट पहनते थे। बेगम के कपड़े अलबत्ता दर्ज़िनों के कारख़ानों में सिलते थे, इस-लिये कि वह ठहरीं हर तरफ़ आने-जाने वाली। उनके जम्पर की सिलाई-कटाई में हाथ की जो सफ़ाई चाहिये थी वह अब तक हमारे हाथों में न आई थी। फिर भी अब हमारे इन्तज़ाम के ढंग से बेगम को इतमीनान था और हम .ख़ुश थे कि हमारी सरताज अपने इस अदना .ग़ुलाम से अब .ख़ुश हैं।

आज बेगम बहुत .खुश थीं और होना भी चाहिये था। उनको इतना बड़ा ओहदा और इतनी बड़ी इज़्ज़त मिलने वाली थी। उनकी .खुशी देख-देख कर हम भी .फूले न समाते थे, इसलिये कि हमारी .खुशी जिसके दम से थी वह .खुश थीं तो हम क्यों .खुश न होते। दिल से दुआ निकल रही थी कि या अल्लाह! तू मेरी सरताज को रहती दुनिया तक सलामत रख। यह अपने हाथों मेरी मिट्टी ठिकाने लगा दें तो मैं समझूँ कि मैं .खुशनसीब हूँ। आज मैंने पाँच वक़्त की नमाज़ के अलावा शुक्राने की नमाज़ भी पढ़ी थी। जी हाँ, अब मैं नमाज़ भी पढ़ने लगा था इसलिये कि .खुदा को याद करने के लिये अब वक़्त मिल जाया करता था। अलबत्ता बेगम, जो पहले किसी वक़्त की नमाज़ न छोड़ती थीं, अब बड़ी मुश्किल से नमाज़ के लिये वक़्त निकाल सकती थीं। आज बेगम सुबह से ही गवर्नरिन साहिबा की पेशी में जाने की तैयारियाँ कर रही थीं। सुबह उठते ही उन्होंने हाथ पैरों में मेंहदी लगाई। आज के लिये वह ढूँढ़ कर निहायत क़ीमती लिपिस्टिक और निहायत आला दर्जे का सेन्ट लाई थीं। मगर हम हैरान थे कि हमको किसी ख़ास लिबास के बारे में कोई हिदायत नहीं दी है कि यह सी साड़ी निकाल देना, यह ब्लाउज़ हो, इस क़िस्म का जूता हो, ऐसे मोज़े हों। आख़िर हमने आप ही उनके सोने के कमरे में जाकर पूछा—"आपने यह नहीं बताया कि कपड़े कौन से निकाल दूँ?"

बेगम ने बड़े प्यार से हमको देखते हुए कहा—"नहीं डार्लिंग! तुम कपड़े निकालने की तकलीफ़ न करो। मेरी वर्दी आती ही होगी। मैं वही पहन कर जा सकती हूँ।"

हमने कहा—"और ज़ेवर?"

"मालूम नहीं मेरी वर्दी में कौन-कौन सा ज़ेवर शामिल होगा। फिर भी, वह भी वर्दी के साथ ही आयगा। सरकारी मामला है, घरेलू

ज़ेवर तो मैं पहन ही नहीं सकती।"

बेगम यह कह ही रही थीं कि बाहर की नौकरानी नफ़ीसा ने आवाज़ दी—".ख़ुदाबख़्श, यह वर्दी ले जाओ सरकार की और इस काग़ज़ पर दस्तख़त करा दो।"

.ख़ुदाबख़्श ने दौड़ कर नफ़ीसा से दरवाज़े की आड़ ही में से एक सूटकेस ले लिया और एक काग़ज़। हमने वह काग़ज़ बेगम के सामने पेश कर दिया। बेगम हाथों की मेंहदी छुड़ा रही थीं। हमसे क़लम माँगते हुए कहा—"रसीद देना है वर्दी की। ज़रा सूटकेस खोल कर हर चीज़ मिला तो लो इस 'लिस्ट' से। मैं बोलती जाती हूँ एक-एक चीज़।"

हमने सूटकेस खोलकर कहा—"हाँ बोलिये।"

बेगम ने सूची पढ़नी शुरू की—"सिल्क की साड़ी एक, ब्लाउज़ ब्रोकेड एक, बनियान सिल्क की एक, अंगिया एक, पेटीकोट सिल्क का एक, अंडरवियर सूती एक। मोज़े सिल्क के एक जोड़, हाई हील शू, एक जोड़, पर्स एक।"

हमने कहा—"हाँ, ठीक है सब। साड़ी बहुत ही अच्छी है।"

बेगम ने कहा—"अच्छा अब पर्स के अन्दर की चीज़ें मिला लो—पौडर पफ़ एक, पौडर केस एक, लिपिस्टिक एक कार्टेज, कंघा एक, आइना एक, दस्ती रूमाल एक।"

हमने कहा—"जी हाँ, यह भी ठीक है और सब सामान बहुत क़ीमती है।"

बेगम ने कहा—"इसमें जो गहने ज़ेवरों का बक्स है उसे भी खोल कर ज़ेवर मिला लो। सोने की आठ चूड़ियां, सोने की अंगूठी हीरे के नगवाली एक, सोने की अंगूठी लाल नगवाली एक, सोने का जड़ाऊ

हार, हीरा चार दाना, लाल आठ दाना, टीका जड़ाऊ सरकारी निशान सहित एक, चांदी की पेटी सुनहरी मोहर सहित एक।"

हमने कहा—"यह भी सब ठीक है। इतना बहुत सा ज़ेवर—यह सब वर्दी में शामिल है?"

बेगम ने कहा—"हाँ हाँ, वर्दी ही में तो शामिल है, और नहीं तो क्या मैं बनवाती? अच्छा और देखिये, पिस्तौल एक, कटार एक, कारतूस पिस्तौल के एक सौ, सीटी एक।"

हमने कहा—"जी हाँ, यह भी सब ठीक है।"

बेगम ने रसीद के काग़ज़ पर दस्तख़त करते हुए कहा—"लीजिये, यह बाहर नफ़ीसा को भिजवा दीजिये और उससे कह दीजिये कि मैं अभी नहाने आ रही हूँ, सामान ठीक रक्खे। और आप इस सूटकेस को ठीक से बन्द कर दीजिये।"

हमने बेगम की सारी हिदायतों पर अमल किया और इस बीच में बेगम ने अपने हाथों और पैरों की मेंहदी छुड़ाकर नहाने की तैयारियां शुरू कर दीं। वह सूटकेस भी बाहर ही चला गया। जब बेगम बाहर जाने लगीं तो हमने बड़ी .खुशामद से कहा—ज़रा वर्दी पहन कर जाने से पहले मुझे भी एक नज़र अपने को दिखा जाना।"

बेगम ने बड़ी मुस्तैदी से कहा—"हाँ हाँ, ज़रूर। भला तुम ही न देखोगे तो कौन देखकर .खुश होगा?"

बेगम के जाने के बाद हमने उनका कमरा .खुद ठीक किया और जल्दी-जल्दी उनके लिये नाश्ते का इन्तज़ाम कर दिया जिसमें कि वह योंही न चली जायँ बिना कुछ खाये पिये। नाश्ता तैयार हो ही चुका था कि बेगम अपनी कोतवालिनी की वर्दी में जगमग-जगमग करती अन्दर आ गईं और हमने सचमुच उनको देखते ही एक बार तो यह सोचकर आँखें बन्द कर लीं कि कहीं हमारी नज़र न लग जाय और

फिर फ़ौरन बढ़कर बलैयाँ ले लीं और उन पर से कुछ चाँदी उतार कर मोहताजों को देने के लिये रख लीं। बेगम ने जल्दी-जल्दी नाश्ता किया।

फिर जल्दी-जल्दी लिपस्टिक से अपने गुलाबी होंटों को और भी लाल बनाया और बाहर जाने लगीं तो हमने कहा—"बेगम, .खुदा तुम्हारी हिफ़ाज़त करे और तुम्हें और तरक़्क़ी दे।"

बेगम ने एक जान लेने वाले अन्दाज़ से हमको देखा और कमर-पेटी से बँधे हुए रिवाल्वर या उस पेटी में लगी हुई नाज़ुक सी कटार से नहीं बल्कि निगाहों के तीर और अबरू के उस ख़ंजर से, जो हर औरत की .क़ुदरती वर्दी के हथियार हैं, हमको बेमौत मारती हुई एक छलावे की तरह बाहर ज़नाने में चली गईं जहाँ मोटर उनको गवर्नरिन साहिबा के दरबार में ले जाने को तैयार खड़ी थी।

बेगम के जाने के थोड़ी ही देर बाद सिद्दीक़ भाई यानी जमाल आरा साहबा के घरवाले आ गये और हमारे साथ घर के इन्तज़ाम में घरवालों की तरह लग गये। हमने पानदान उनको सौंप दिया कि लो भाई बाहर ज़नाने और मर्दाने के लिये पानों का इन्तज़ाम तुम्हारे ही ज़िम्मे है। लेकिन उन्होंने बताया कि यहाँ का जश्न (उत्सव) चूँकि .खुद उनकी बेगम साहबा और उनके स्टाफ़ की तरफ़ से है इसलिये वह .खुद पानों का इन्तज़ाम करके आये हैं। मर्द मेहमान आयेंगे ज़रूर इसी घर में, लेकिन उनकी ख़ातिर भी हमारी तरफ़ से नहीं बल्कि ड्रेसिंग-घर के स्टाफ़ की तरफ़ से होगी।"

हम लोग ये बातें कर ही रहे थे कि बाहर से आवाज़ आई—"सवारी उतरवा लो।"

और सिद्दीक़ भाई ने ड्योढ़ी तक जाकर स्वागत किया। डोली का पर्दा उठा तो फ़ेल्ट हैट लगाये, क्लीन शेव किये ख़ालिस अंग्रेज़ी ढंग के एक नौजवान निकले। भाई सिद्दीक़ ने बड़े जोश से उनका स्वागत

करते हुए उनका तआरुफ़ (परिचय) हमसे कराया—"आप हैं मि० रफ़ी-उद्दीन, ख़ानम साहबा सरवरी बेगम, इन्स्पेक्ट्रेस पुलिस के शौहर, और रफ़ी भाई, ये हैं ख़ानम बहादुरनी सईदा ख़ातून साहबा के शौहर।"

रफ़ी साहब ने बड़े जोश मे हाथ मिलाया और हम दोनों बातें करते हुए उस कमरे तक आये जहाँ बैठने का इन्तज़ाम था और जहाँ से पर्दे के साथ बाहर ज़नाने की सैर हम लोग कर सकते थे। अभी हम कमरे तक पहुँचे ही थे कि फिर आवाज़ आई—"सवारी उतरवा लो।"

सिद्दीक़ भाई फिर स्वागत के लिये दौड़े और इस बार डोली से एक साहब को लाये जो सिर्फ़ धोती और कुर्ते में थे। सिद्दीक़ भाई ने उनका तआरुफ़ कराते हुए पहले हमारी तारीफ़ उनसे की और फिर हमसे कहा—"आप देवी बहादुरनी लाजवन्ती सक्सेना के पति श्री राज-किशोर हैं। आपकी श्रीमती जी यहाँ की बहुत मशहूर वकीलनी हैं और जल्द ही हाईकोर्ट की जजिन होने वाली हैं।"

उनके परिचय के बाद ही फिर किसी की सवारी आई। बाहर पर्दे माँगे गये, इसलिये कि सवारी मोटर में थी। पर्दे के बाद मोटर से जो सज्जन उतरे वह तुर्की टोपी और शेरवानी में थे। सिद्दीक़ भाई ने बढ़-कर उनसे हाथ मिलाया और हमको उनसे मिलाते हुए पहले तो हमारी तारीफ़ की इसके बाद हमको बताया कि आप हैं सर मुहम्मद अमीन यानी लेडी आमना ख़ातून फ़ाइनेन्स सेक्रेट्री के शौहर।

हमने ताज्जुब से कहा—"आप पहले साहब हैं जिनके नाम के साथ सर का ख़िताब है, नहीं तो मैंने यहाँ मर्दों के ख़िताब सुने ही नहीं।"

वह तो मुस्कुरा दिये पर सिद्दीक़ भाई ने कहा—"यहाँ 'सर' अपनी जगह पर कोई ख़िताब ही नहीं है। असल ख़िताब तो 'लेडी' है जो आपकी बेगम साहबा को मिला था, और यहाँ का तरीक़ा यह है कि

जिस किसी औरत को 'लेडी' का ख़िताब मिलता है उसके पति को सर कहा जाता है।" हम फ़ौरन इस 'सर' का मतलब समझ गये कि जिस तरह हमारे यहाँ सर की बीवी लेडी होती है उसी तरह यहाँ लेडी का मियाँ सर होता है। सारांश यह कि इसी तरह बहुत से ख़िताबधारी बीवियों के मियाँ, बहुत सी ऊँची ओहदेदारनियों के शौहर, बहुत सी ताल्लुक़ेदारनियों के घरवाले हमारे यहाँ जमा हो गये और उधर बाहर ज़नाने में प्रतिष्ठित महिलाएँ जमा होती रहीं जिनकी तादाद सैकड़ों के क़रीब थी। कोई महिला सिगरेट पी रही थी, किसी के हाथ में सिगार था जो उसी तरह बेतुका सा मालूम हो रहा था जिस तरह औरतों का डंडा हाथ में लेकर टहलना। लेकिन बाहर ज़नाने में बहुत सी नाज़ुक-बदन औरतें बड़े मोटे-मोटे डंडे लिये हुए थीं। हमारी बेगम अपनी उसी वर्दी में ख़ानम बहादुरनी का तमग़ा गले में पहने औरतों से मिल रही थीं या मिलाई जा रही थीं। आख़िर तालियों की गूँज में एक सोफ़े से जमाल आरा यानी ट्रेनिंग-घर की सेक्रेट्री साहबा उठीं और उन्होंने अपनी मीठी और रसीली आवाज़ में एक छोटा सा भाषण देकर हमारी बेगम की योग्यता और क्षमता को सराहते हुए कहा—

"मुझे गर्व है कि इस ट्रेनिंग-घर में आज से छः माह पहले आप एक नये गिरफ़्तार क़ैदी की हैसियत से आई थीं जिनको पहले अपराधिनी के रूप में हर लेडी मेह आरा चीफ़ जजिन की अदालत में पेश किया गया था। लेकिन हर लेडीशिप ने आपके अन्दर छिपी हुई योग्यताओं को देखकर आपको इस ट्रेनिंगघर में मेहमान के रूप में भेजा और आज वह अपराधिनी इस राज्य की एक ज़िम्मेदार पदाधिकारिणी होकर, राज्य से एक सम्मानित ख़िताब हासिल करके अपनी आज़ाद और ज़िम्मेदार ज़िन्दगी बिताने के लिये समाज में क़दम रख रही है। मैं इनकी सफलता पर ख़ुश हूँ मगर इनके इतने दिनों के साथ के बाद

इनकी जुदाई का जो सदमा मुझको है वह मेरी .खुशी को दबाये देता है। मेरी एक आँख हँस रही है और एक आँसू बहा रही है। लेकिन मैं .खुदग़रज़ी से काम न लेते हुए अपने इस रंज को इनकी .खुशी पर .कुरबान करके इनको .खुशी से विदा करती हूँ।"

जमाल आरा के इस भाषण के बाद बेगम ने भी एक ज़रा से भाषण में नाज़ुकिस्तान सरकार की इस ग़रीबनवाज़ी की तारीफ़ की और खुले शब्दों में .खुद अपने देश को कोसते हुए कहा—"वह मेरा देश सही लेकिन उसके जहन्नुम होने से इन्कार नहीं किया जा सकता। यह परदेश मेरे लिये जन्नत से कम नहीं और मैं इस जन्नत को छोड़कर फिर उस जहन्नुम की तरफ़ जाने को कभी तैयार नहीं हो सकती।"

वहाँ तो तालियाँ बजने लगीं और हम बेगम के मुँह से यह सुनकर कि वह अब कभी हमको इस .कैद से छूटने न देंगी, निढ़ाल होकर अपनी कुर्सी पर पड़े रह गये।

पाँच

राधानगर, जहाँ बेगम कोतवालिनी की हैसियत में तैनात हुई थीं, एक बड़ा अच्छा और .खूबसूरत शहर था। बेगमगंज से किसी भी हालत में कम सुन्दर नहीं कहा जा सकता। हालाँकि बेगमगंज नाज़ुकिस्तान की राजधानी है और बेगमगंज में छः महीने तक रह कर हम वहाँ के लिये बड़ी हद तक अजनबी न रहे थे। .खैर, हमारे लिये तो यहाँ भी .कैद थी और वहाँ भी। लेकिन वहाँ सिद्दीक़ भाई के कारण ज़रा मन बहल जाता था। वह तो कहिये बेगमगंज से चलने के वक़्त अब्दुल करीम और .खुदाबख़्श दोनों घरेलू नौकर हमारे साथ ही आये थे और बाहर की नौकरानियों में नफ़ीसा और गुलशन भी साथ आई थीं। इनके अलावा कोतवाली की सभी कानिस्टिबिलनियाँ, हवलदारनियाँ और थानेदारनियाँ हर वक़्त ख़िदमत के लिये मौजूद रहती थीं मगर घर में सिवाय इन दो नौकरों के और कोई न था। बेगम अपने सरकारी कामों के कारण घर में बहुत ही कम रहती थीं। आज इस जाँच में जा रही हैं तो कल उस तहक़ीक़ात में, आज शहर का गश्त है तो कल किसी राष्ट्रीय जलसे में शान्ति क़ायम रखने के लिये पुलिस पार्टी के साथ चली जा रही हैं। कभी मोटर पर रवानगी हो रही है तो कभी घोड़े पर। हमको ताज्जुब तो यह था कि बेगम ने अपने को कैसा बदल लिया था। यह वही बेगम थीं जिनका पैर ज़रा ऊँचा-नीचा पड़ा और मोच आई। ज़रा सी कोई भारी चीज़ उठाई और कलाई में वरम आ

गया। ज़रा सी किसी में लड़ाई हुई और इनको धड़का उड़ा। किसी ने पटाख़ा छुड़ाया और यह 'ऊइ' कह कर उछल पड़ीं। कोई बरसाती कीड़ा इन पर आ बैठा और यह सारे आँगन में डुपट्टा झाड़ती फिर रही हैं बदहवासी के साथ। रात को चूहों ने कोठरी में ज़रा खड़बड़ मचाई और इन्होंने अपने पलँग पर से आवाज़ दी, "आप सो रहे हैं? मैंने कहा ज़रा होशियार हो जाइये, कुछ खटका मालूम होता है।" एक बार तो बिल्ली ने दूध की पतीली जो गिराई तो उनकी घिग्घी बँध गई। और अब वही बेगम अच्छी घुड़सवारी करती थीं, बड़ी अच्छी निशानेबाज़ थीं, हर बात में चुस्त-चालाक। आधी रात को गश्त करने निकल जाती थीं। कहीं से डाके की ख़बर आई और यह डकैतिनों की गिरफ़्तारी के लिये रवाना हो गईं। कहीं से क़त्ल की ख़बर आई और इन्होंने छापा मारा। मीलों पैदल चलवा लीजिये, दीवारें फँदवा लीजिये। फिर यह कि हर काम में तेज़ी। .ख़ैर, ये सब बातें तो बहुत अच्छी थीं अलबत्ता मिज़ाज बहुत ख़राब हो गया था। बात-बात पर .ग़ुस्सा आता था और .ग़ुस्से में आपे से बाहर हो जाया करती थीं। बाहर तो अपना रौब क़ायम करने के लिये .ग़ुस्सा दिखाना ज़रूरी भी था लेकिन जब घर में हम पर .ग़ुस्सा करती थीं तब बड़ी तकलीफ़ होती थी। क्या मजाल कि कोई बात उनकी ज़बान से निकले और वह फ़ौरन पूरी न हो जाय। किसी काम में .ज़रा सी भी देर हो जाय, फिर देख लीजिये उनका .ग़ुस्सा। यह चीज़ फेंकी जा रही है, वह चीज़ तोड़ी जा रही है, चीख़-चीख़ कर घर सर पर उठाये लेती हैं। एक-एक की शामत आ रही है। जो सामने पड़ गया उसी पर उबली पड़ती हैं। उनकी नर्मी तो मशहूर थी। .ग़ुस्सा तो उनको आता ही न था। बल्कि हमारा ही .ग़ुस्सा हर तरफ़ मशहूर था। .ख़ुद हमने अपनी बेज़बान बेगम पर ऐसा-ऐसा .ग़ुस्सा किया था कि उनका दिल ही .ख़ूब जानता होगा। .ग़ुस्सा आ

गया है और घर में एक क़यामत मची है। हफ़्तों रूठे हुए घर के बाहर पड़े हैं और वह बेचारी .ख़ुशामदें कर रही हैं, मना रही हैं, बाहर से बुलवा रही हैं, माफ़ियों पर माफ़ियाँ माँग रही हैं। खाना-पीना छोड़े हुए हैं, रातों की नींद हराम किये हुए हैं, दिन का आराम तज दिया है। और अब यही हाल उनका था। हमको उन पर भी ताज्जुब था और उनसे ज़्यादा अपने पर कि हमारा .ग़ुस्सा क्या हुआ, और हम में यह सहनशीलता कहाँ से आ गई।

अब भला यह भी कोई .ग़ुस्से की बात थी। आप ने रात को यह कह दिया था कि सुबह उठकर मेरी जार्जेट की साड़ी में वह फ़ीता टाँक देना जो बनारसी साड़ी में टँका हुआ है। सुबह उठकर, आदमी तो आदमी है, दिमाग़ से यह बात निकल गई और .ख़ुद आप भी भूल गईं। अच्छी ख़ासी हँसती हुई सोकर उठीं। नाश्ता किया, चाय पी, सिंगार-मेज़ पर बनाव-सिंगार किया। अब एकदम जो मुझसे साड़ी माँगी तो मुझे भी याद आया। पाँव तले की .ज़मीन निकल गई। डरते-डरते मैंने कहा कि मैं फ़ीता टाँकना भूल गया था, अभी टाँके देता हूँ, ग़लती हो गई मुझसे। बस जनाब, न पूछिये। मालूम हुआ कि जैसे बारूद के क़िले में किसी ने दियासलाई दिखा दी। .ग़ुस्से में जो कुछ मुँह में आया कहती चली गईं। मेज़ पर जितनी चीज़ें थीं सब उलट दीं। कंघा और शीशा आंगन में उछाल दिया गया, सेन्ट की शीशी दीवार से टकरा कर चूर-चूर हो गई, पौडर का डिब्बा नाली में जा गिरा, नेल पालिश का बक्स तख़्त के नीचे गया। सारांश यह कि सिंगार-मेज़ का सारा सामान तितर-बितर होकर रह गया। हम सहमे हुए एक कोने में खड़े काँप रहे थे और वह आतिशबाज़ी की चर्ख़ी की तरह छूटती ही चली जाती थीं। आख़िर उन्होंने बकते-बकते यहाँ तक कह दिया कि "तुमको मेरी परवाह नहीं है तो तुम भी मेरी जूती की नोक

पर हो। तुमने अपना दिमाग़ क्यों ख़राब कर रक्खा है। मैं पूछती हूँ कि आख़िर तुमको घमंड किस बात का है। मैं ही हूँ कि तुम्हारे साथ दिन-रात सर खपाती हूँ। कोई और औरत होती मेरी जगह तो एक मिनट तुम्हारे साथ निबाह न कर सकती। हज़ार बार कहा कि अब वह दिन गये जब तुम्हारी ज़बरदस्तियाँ चला करती थीं। अब शरीफ़ घरानों के मर्दों की तरह आदमी बन कर रहो, सलीक़ा सीखो, मगर मैं तो जैसे कुतिया हूँ, भूँका करती हूँ। तुम्हारे कान पर जूँ भी नहीं रेंगती। दुनिया भर के मर्दों का सुघड़ापा देखती हूँ और आह करके रह जाती हूँ। क्या हैसियत है नज्मुन्निसा की। सवा सौ रुपये पाने वाली मामूली सी थानेदारिन है, मगर उसका घर जाकर देखो तो आँखें खुल जायें। आईना बना रक्खा है घर को उसके शौहर ने अपने सुघड़ापे से, और एक तुम हो कि कल मेरे हरे रंग के जम्पर में सफ़ेद धागे से बटन टाँक दिया। जी तो चाहा था कि जम्पर लाकर तुम्हारे मुँह पर मार दूँ लेकिन .ख़ून के घूँट पीकर रह गई। अगर तुम यह चाहते हो कि मैं इस घर में आग लगा दूँ तो साफ़-साफ़ कह दो कि बीवी, तुम्हारे नसीब में इस घर का आराम नहीं है। क़सम लेलो जो फिर उधर का रुख़ भी करूँ। अब आज से मेरे किसी काम में तुमने जो हाथ लगाया तो मुझसे बुरी कोई न होगी। तुम्हारा जो जी चाहे करो, जो मदद मुझसे हो सकेगी वह करती रहूँगी, मगर अब इस घर से मुझे कोई मतलब नहीं है।" और यह सब ज़बानी ही नहीं कहा गया बल्कि सचमुच वे बाहर ज़नाने ही में रहने लगीं। हमने माफ़ीनामे लिख-लिख कर भेजे, सब फाड़ दिये गये। नौकरों से कहलवाया तो उनको डाँट पड़ी, खाना भेजा तो वापस कर दिया गया। पान तक .क़ुबूल न किये। इधर घर में हम भूखे-प्यासे पड़े हुए थे और सचमुच खाते भी कैसे क्योंकि जब वही हमसे ख़फ़ा थीं जिनसे हमारी ज़िन्दगी

थीं। जब वही रूठ गईं जिनके दम से हमारी दाढ़ी मुँडती थी, जब वही नाराज़ थीं जो हमारी मलिका थीं, तो हम किस दिल से कुछ खाते-पीते। दिन-रात मुँह लपेटे पड़े रोया करते थे अपने नसीब को। .खुदाबख़्श और अब्दुल करीम दोनों समझाते थे कि सरकार .खुदा का शुक्र अदा कीजिये, मर्द कमबख़्त की क़िस्मत में ही यह लिखा है कि वह इसी तरह औरतों की जा-बेजा बात सुने और सहन करे। अब बेगम साहबा तो बाहर अच्छी तरह खा-पी रही हैं और आप पड़े सूख रहे हैं। आख़िर कब तक इस तरह हलकान होंगे। रो रोकर आपने यह हाल बना रक्खा है। .खुदा न करे आप बीमार पड़े तो और मुसीबत है। लेकिन नौकरों के इस समझाने-बुझाने के बावजूद भी हमारा दिल रो रहा था और हम समय के इस इन्क़लाब को देख रहे थे कि यह वही बेगम हैं जो हमको एक वक़्त भी भूखा-प्यासा न देख सकती थीं और अब इनको ख़बर है कि हम पड़े हुए सूख रहे हैं, हमारी आँखों के आँसू अब तक नहीं रुके हैं और हमारा दिल .खून हो चुका है मगर उनको ज़रा भी परवाह नहीं थी। .खुद उनके खाने-पीने का सामान बाहर ज़नाने में ही हो जाता था और घर से जैसे सचमुच उनको कोई मतलब ही न था। आख़िर हम कहाँ तक सहन करते, नतीजा यह हुआ कि बीमार पड़ गये। .खैर, शुक्र है कि बीमारी की ख़बर सुनकर और एकाध थानेदारिनी की .खुशामद से आप अन्दर तशरीफ़ लाईं तो हम बुख़ार बेहद तेज़ होने के बावजूद पहले तो भावावेश में लड़खड़ाते हुए ताज़ीम के लिये उठे और फिर ज़ब्त न हो सका तो उनके क़दमों पर गिर पड़े। बेगम ने बड़ी मुश्किल से हमको उठाकर बिठाया। मगर हमने उनसे यही कहा कि जब तक आप दिल से मुझे माफ़ न कर देंगी मैं न कुछ खाऊँगा न दवा पियूँगा। अगर आपने ही मुझसे मुँह मोड़ लिया है तो मुझको भी ज़िन्दगी से मुँह मोड़ लेने दीजिये।

इतने दिनों के भूखे फिर बुख़ार की तेज़ी, कमज़ोरी अलग नतीजा यह हुआ कि इस उठने की वजह से एकदम कुछ ग़श सा आ गया और फिर हमको ख़बर नहीं कि क्या हुआ। बहुत देर के बाद आँख खुली तो मालूम हुआ कि हम हर तरफ़ से एक चादर में लिपटे हुए पड़े हैं। सिर्फ़ हमारा एक बाज़ू चादर के बाहर है जिसमें डाक्टरनी इन्जेक्शन लगा रही है। हमने चादर उलटनी चाही तो बेगम ने घबरा कर कहा—"अरे अरे, डाक्टरनी साहबा बैठी हैं।" और हमने फ़ौरन अपने को और भी चादर में लपेट लिया।

डाक्टरनी ने कहा—"अब यह ठीक हो जायेंगे। दर असल आम कमज़ोरी के अलावा दिल बहुत कमज़ोर मालूम होता है। मैं एक दवा लिख रही हूँ। यह दीजिये और फ़ौरन इनको फलों का रस दिलवाइये। देखने में तो कोई मर्दानी बीमारी मालूम नहीं होती कि आप मर्द डाक्टर को बुलाये। मेरा ख़याल है कि इसी दवा से ठीक हो जायेंगे। कल सुबह टेलीफ़ोन पर हाल कहलवा दीजियेगा। इनको ताक़त बढ़ाने वाली ख़ूराक की बड़ी ज़रूरत है। इस तरफ़ से बेपरवाही न बरती जाय। फलों का रस, दूध, मक्खन वग़ैरह इनको ख़ूब खिलाइये। अच्छा, अब मैं चलती हूँ। आदाब अर्ज़।"

डाक्टरनी के जाने के बाद हम पर्दे से निकले तो देखा कि हमारे बिस्तर से कुर्सी मिलाये हुए बेगम सर झुकाये बैठी हैं। अब्दुल करीम और ख़ुदाबख़्श हमारे लिये फलों का रस निकाल रहे थे। हमने बहुत ही कमजोर आवाज़ में कहा—"तुम लोग उधर जाकर काम करो।"

और जब वह दोनों चले गये तो हमने अपने हाथ में बेगम का हाथ लेकर कहा—"आपने माफ़ कर दिया मुझे या......।"

बेगम ने बड़े प्यार से कहा—"मैं ख़ुद शर्मिन्दा हूँ।"

हमने आँख में आँसू भर कर कहा —"यह न कहिये, यह मेरा हिस्सा है। मेरी मरताज. मैं आपका .ग़ुलाम हूं। आपको शर्मिन्दा होने की जरूरत नहीं। मुझे माफ कर दीजिये।"

बेगम ने हमारा सर सहलाते हुए कहा —"मैं .ख़ुश हूँ कि तुम मेरे इस सलूक के बाद भी मुझसे यह कह रहे हो। अब आगे मैं .ग़ुस्सा न करूँगी। हालांकि यह तो सोचो कि मैं तुम पर .ग़ुस्सा न करूँगी तो किस पर करूँगी और तुम ही न सहोगे मेरा .ग़ुस्सा तो और कौन सहेगा ?"

हमने कहा —"मगर मैं शिकायत तो नहीं कर रहा हूँ। आप मेरी मलिका हैं। मुझे तो सिवाय आपकी .ख़ुशी के और कुछ नहीं चाहिये। इन्सान हूँ, ग़लती हो ही जाती है। अपनी ग़लती की सज़ा भुगतनी ही पड़ती है। लेकिन इसके बाद अगर आप माफ़ कर दिया करें तो मुझे कोई शिकायत नहीं।"

बेगम ने कहा "अच्छा .ख़ैर, अब इस ज़िक्र को छोड़ो। मैंने माफ़ किया, मेरे .ख़ुदा ने माफ किया। तुम भी तो आख़िर माफ़ कर दिया करते थे मुझे।"

हमने कहा —"इसीलिये तो और भी ग़लती होने का डर है कि ज़िन्दगी भर की पड़ी हुई आदतें छूटते-छूटते ही तो छूट सकती हैं। आप .ख़ुद इन्साफ़ कीजिये कि मैंने अपनी पिछली ज़िन्दगी को भुलाने की कितनी कोशिश की है। एक दो बातें तो हर एक भूल सकता है मगर यहाँ तो कायापलट ही है। मालूम होता है जैसे दुनिया क़लाबाज़ी खा गई है। ज़िन्दगी की ज़िन्दगी ही एकदम बदल कर रह गई है। फिर भी मैं कोशिश करता हूँ कि उस ज़िन्दगी को बिल्कुल ही भूल जाऊँ।"

बेगम ने कहा -"बेशक तुमने कोशिश की है। लेकिन इस कोशिश

में तुम मुझसे ज़्यादा कामियाब नहीं हो। हालांकि तुम्हारी दुनिया में औरतों को कम-समझ और बेवक़ूफ़ कहा जाता है, वह किसी ज़िम्मेदारी को निभाने के योग्य नहीं समझी जातीं मगर अब तुम देख रहे हो कि मैं ज़िम्मेदारी को किस तरह निभा रही हूँ। मेरी ही तरह की दूसरी औरतें राज्य का सारा इन्तज़ाम सँभाल रही हैं। हमारी इस दुनिया में तुम्हारी दुनिया से कहीं ज़्यादा अमन-शान्ति है। बेशर्मी और बद-चलनी भी यहाँ न होने के बराबर है। पुलिस और फ़ौज तक का सारा काम औरतें ही चलाती हैं। रेलें औरतें चलाती हैं, हवाई जहाज़ औरतें उड़ाती हैं। सारांश यह कि दुनिया के सारे कारबार औरतें ही तो करती हैं जिनको तुम्हारी दुनिया में बिल्कुल बेकार और निकम्मा समझा जाता है।"

हमने कहा—"ख़ैर, उस दुनिया का अब क्यों ताना दे रही हो। न वह दुनिया रही और न उस दुनिया के कारख़ाने। अब तो दुनिया ही बदल गई है इसलिये हमको भी बदलना ही पड़ेगा, और बदल रहे हैं। तुमने तेज़ी के साथ अपने को इसलिये बदल लिया है कि तुमको वह अधिकार मिल गये हैं जो तुम्हारे ख़्वाब-ख़याल में भी न होंगे और मेरे लिये तो यह इन्क़लाब मुसीबत ही मुसीबत है।"

बेगम ने बेपरवाही से कहा—"क्यों मुसीबत क्या है? न कोई ज़िम्मेदारी है न कोई फ़िक्र। घर के राजा बने बैठे रहो। अच्छे से अच्छा खाओ, अच्छे से अच्छा पहनो। आज मैं तुम्हारे लिये बिजली का सेफ़्टी रेज़र ला दूँगी। कहो, अब तो ख़ुश हो?"

हमने ठंडी साँस भर कर कहा—"दिल की ख़ुशी चाहिये मुझे मेरी मलिका। मैं सिर्फ़ आपकी मुहब्बत का भूखा हूँ।"

ख़ुदाबख़्श फलों का रस निकाल कर ले आया। बेगम ने तुरन्त

उठकर उस रस में ग्लूकोज़ अपने हाथ से मिला दिया और अपने ही हाथ से हमको रस पिलाती रहीं।

फिर नौकर को हिदायत की कि मुर्ग़ी के चूज़े (बच्चे) मैं मँगाये देती हूँ। उनका सूप थोड़ी देर के बाद साहब को मिलना चाहिये और फलों का रस हर वक़्त तैयार रहे। जिस वक़्त माँगें, फ़ौरन दिया जाय। हमको रस पिलाकर बेगम ने अपने कमरे में जाकर जल्दी-जल्दी वर्दी पहनी और वर्दी पहन कर कलाई की घड़ी देखती घबराती हुई बाहर आईं और हमसे यह कहती निकल गईं कि मुझे एक राजनीतिक सभा की मनाही के लिये फ़ौरन चूड़ीबाग़ पहुँचना है।

बेगम के जाने के बाद ख़ुदाबख़्श और अब्दुल करीम ने आकर हमको फिर घेर लिया। तीन दिन के बाद हमको फलों का रस मिला था। लगता था जैसे नशा सा छा रहा है। और वे लोग अपनी उड़ा रहे थे कि औरतों का यही हाल है। चुहिया को मार कर गोबर सुँघाना तो कोई औरत से सीखे।

: ७ :

बेगम ने एक दिन हमको बताया कि एक थानेदारिनी के लड़के की शादी है। लड़की अच्छी ख़ासी मिल गई है। ग्रेजुएट होने के अलावा हाल ही में वह मुंसिफ़िन के पद के लिये चुनी गई हैं। थानेदारिनी यह चाहती हैं कि तुम भी शादी के दिन उनके यहाँ चले जाओ। उनके शौहर भी बहुत-बहुत अनुरोध कर चुके हैं। मैं उनसे वायदा कर चुकी हूँ इसलिये तुम चले जाना। अब तक तुमने भी यहाँ की शादियाँ न देखी होंगी। कल सुबह उनके यहाँ से सवारी आयेगी। थानेदारिनी कह गई हैं। तुम तैयार रहना।

दूसरे दिन जब हम थानेदारिनी के यहाँ पहुँचे तो उनके पति, उनके ससुर और उनके पिता ने हमारा ड्योढ़ी में स्वागत किया। यों तो सारे घर में मेहमान भरे हुए थे लेकिन हम कोतवालिनी साहबा के पति थे इसलिए हमारी आवभगत ज़्यादा थी और हमको ख़ास तौर से उसी कमरे में ले जाकर बिठाया गया जहाँ दूल्हा मांझे बैठा हुआ था। हमको देखकर वह बेचारा और भी शरमा गया और उसने घुटने के ऊपर हाथ रख कर अपना मुँह छिपा लिया। हमारे लिये यह बड़ा अजीब दृश्य था कि लड़का मांझे बैठे और इस तरह शर्माये। थानेदारिनी के पति ने पान बनाकर थाली में हमारे सामने रक्खे और एक नौकर को हुक्म दिया कि कोतवाल साहब को पंखा झलता रहे। हम शायद कोतवालिनी साहबा के पति होने के नाते कोतवाल साहब

कहलाये थे। अब हमने भी थानेदारिनी के पति से कहा "थानेदार साहब ! यह तकल्लुफ़ छोड़ कर आप लड़के से कहिये कि वह ढंग से बैठे। इस तरह सर झुकाये-झुकाये गर्दन में दर्द होने लगेगा।"

थानेदार साहब ने हँसकर कहा—"जी नहीं. इनको इसकी आदत होनी चाहिये। आज तो खैर अपने घर में हैं. अब इनको पराये घर जाना है। न जाने कैसे लोग हों। लड़के ज़ात में अगर शर्म-हया ही न हो तो किस काम का लड़का। मगर ख़ुदा का शुक्र है कि मेरे दोनों लड़के बड़े शर्मीले हैं। खैर, छोटे की तो अभी उम्र ही क्या है। बारहवाँ साल है। लेकिन इसी उम्र में उसने अपने बड़े भाई के दहेज़ की एक-एक चीज़ ख़ुद सी है। सारे जोड़े इसी के हाथ के सिले हुए हैं, और आप की दुआ से घर का सारा इन्तज़ाम वही करता है। सीने काढ़ने के अलावा खाने-पकाने में भी बड़ा तेज़ है।"

हमने कहा—"वाह वाह, बहुत अच्छा है। लेकिन इन साहबज़ादे को, जब तक ये अपने घर पर हैं. थोड़ा बहुत आराम तो मिल जाना चाहिये। अगर ये मेरी वजह से इस तरह बैठे हों तो इनको बता दीजिये कि मैं इनके मायके ही का हूँ।"

थानेदार साहब ने कहा—"जी हाँ, वह तो जानता है कि आप कोतवाल साहब हैं, लेकिन आज तो वह हर एक से शर्मायेगा, चाहे कोई मायके का हो या ससुराल का। आज तो आज, इसका तो यह हाल है कि एक हफ्ते से इसी कोने में बिल्कुल इसी तरह बैठा है। अब तो खैर, बरात आने का वक़्त क़रीब है, इनको नहला धुलाकर दूल्हा बनाया जायगा। अब भला ये क्या सर उठायेंगे।"

हमने घड़ी देखते हुए कहा—"किस वक़्त आयेगी बरात। चार बजे सुना था, और अब तीन बजने वाले हैं।"

थानेदार साहब ने एक दम चौंक कर कहा—"अरे, तीन ? ओफ़्फ़ोह, अबतो सचमुच जल्द ही नहलाना चाहिये।"

यह कहकर वह बौखलाए हुए कमरे के बाहर चले गये और थोड़ी ही देर में एक और साहब ने आकर दूल्हा को गोद में उठाकर उस कमरे से मिले हुए नहानघर में पहुँचा दिया और उनका नहान शुरू हो गया।

नहाने से छुट्टी पाने के बाद एक शोर सा मच गया कि दूल्हा के कपड़े लाओ। और एक थाल में दूल्हा के कपड़े लाये गये और उसी नहानघर में दूल्हा को कपड़े पहना कर बाहर लाया गया। अभी दूल्हा को लाया ही गया था कि बाहर से ढोल ताशों की आवाज़ आने लगी और सब मर्द दरवाज़ों और खिड़कियों से झाँक-झाँक कर बरात का तमाशा देखने लगे। हमको भी थानेदार साहब ने एक खिड़की के पास लाकर खड़ा कर दिया। बारात का जलूस वैसा ही था जैसे जलूस हमने हज़ारों देखे होंगे। बस फ़र्क़ इतना था कि उस जलूस भर में एक भी मर्द का कहीं पता न था। बाजा बजाने वाली भी औरतें थीं और गाड़ियाँ हँकाने वाली भी औरतें। दुल्हन का हाथी तक औरत ही चला रही थी। बरात का स्वागत थानेदारिनी साहबा ने किया और सब बरातिनें जगमगाती हुई साड़ियों, शलवारों, ग़रारों और चूड़ीदार पाजामों में और उन्हीं के जोड़ के दुपट्टों, कुर्तों व ब्लाउज़ों में उतरीं और दुल्हन को उतारा गया जो लाल ज़रबफ़्त की साड़ी में लिपटी, सर पर सेहरा बाँधे, मुंह पर रूमाल रक्खे हुए धीरे-धीरे आगे बढ़ी और सास को अदब से सलाम किया। फिर महफ़िल के बीच से उस कारचोबी शामियाने के नीचे आ गई जो दुल्हन के लिए ख़ास तौर पर सजाया गया था।

इसके बाद एक बड़ी बी ने क़ाज़ी की तरह निकाह पढ़ाया। पहले

दुल्हन से दूल्हा को अपने पति के रूप में स्वीकार करने की शपथ ली गई फिर अन्दर मर्दाने में आकर दूल्हा से स्वीकृति ली गई। सारी रस्में उसी तरह पूरी की गईं जैसे हमारे देश में होती हैं। फ़र्क़ यही था कि वहाँ लड़की जब दुल्हन बनती है तो एक जानदार गठरी बनकर रह जाती है, उसका चेहरा लम्बे घूँघट में छिपा रहता है, वह किसी से बात नहीं करती, सारी रस्में दूल्हा पूरी आज़ादी से अदा करता है। पर यहाँ दूल्हा, दुल्हन की तरह पर्दे में बैठा था। 'हाँ' 'हूँ' के सिवा कोई बात नहीं करता था। सारी रस्में दुल्हन ने अदा कीं। और जब दुल्हन अपने पति को विदा कराके ले जाने लगी तो दूल्हा के बाप, चच्चा, मामा और भाइयों ने इस तरह फूट-फूट कर रोना शुरू किया कि हम तो अपने यहाँ की औरतों को भूल गये। और दूल्हा का रोना सुनकर तो सचमुच कलेजा मुंह को आता था। बार-बार ग़श पर ग़श आ रहा था। आख़िर जब मर्द लोग दूल्हा को विदा कर चुके तब थानेदारिनी साहबा आईं। पहले तो उन्होंने मर्दों को डाँट-डपट कर चुप कराया लेकिन आख़िर में न रहा गया तो आप भी रो पड़ीं। बेटे के पास आकर सर पर हाथ फेरते हुए कहा—"बेटा! अब मेरी लाज तुम्हारे हाथ है। तुम अब अपने घर जा रहे हो लेकिन मैं उसी समय तक तुमसे ख़ुश हूँ जब तक कि तुम अपनी बीवी के फ़रमाँबरदार (आज्ञापालक) रहोगे। आज से उनकी ख़ुशी तुम्हारी ख़ुशी है और उनको ही ख़ुश रखकर अपना लोक-परलोक दोनों को सँवार सकते हो।" यह कह कर रूमाल से आँसू पोंछती हुई थानेदारिनी साहबा हट गईं और कहारिनें दूल्हा की पालकी उठा कर ले गईं। विदाई के बाद रात गये हम भी घर आ गये।

सात

हमारी ज़िन्दगी दिन पर दिन सुखद होती जा रही थी। इसकी ख़ास वजह यह थी कि अब हम क़रीब-क़रीब इस घरेलू ज़िन्दगी के आदी हो चुके थे। बाहर जाने का अब कभी ख़याल ही न आता था। बेगम का मिज़ाज भी कुछ दिनों से अच्छा था। राधानगर में अनेक घरानों से मेल-जोल भी बढ़ गया था और सबसे बड़ी बात यह हुई थी कि बेगमगंज के ट्रेनिंग घर से सेक्रेट्री साहबा यानी जमाल आरा का तबादला भी राधानगर में हो गया था और वह राधानगर में डिप्टी कलक्टरनी होकर आ गई थीं और उनके साथ सिद्दीक़ भाई भी आ गये थे। जमाल आरा बेगमगंज से आकर हमारे ही घर ठहरी थीं और उस समय तक के लिये ठहरी थीं जब तक कि कोई अच्छा बँगला न मिल जाय। सिद्दीक़ भाई के कारण घर में काफ़ी चहल-पहल हो गई थी। उनके बच्चों से, ख़ुदा उन्हें जीता रक्खे, घर भर गया था। हम जमाल आरा से और सिद्दीक़ भाई बेगम से पूर्ववत पर्दा करते थे। इसीलिये सिद्दीक़ भाई के कारण बेगम भी घर में कभी-कभी ही आती थीं, ज़्यादातर बाहर ही जमाल आरा बहन के साथ रहती थीं। आज न आने क्या बात थी कि उन्होंने ड्योढ़ी से आवाज़ दी और बोलीं—"मैं अन्दर आना चाहती हूँ। सिद्दीक़ भाई से कहो ज़रा आड़ में हो जायें।"

सिद्दीक़ भाई आप ही लपक कर कमरे में घुस गये तो बेगम ने आते ही कहा—"ज़रा मेरा दुपट्टा चुन दो। जमाल कह रही हैं कि सिनेमा

चलो। मैं उनके साथ जा रही हूँ।"

हमने कहा—"कभी हमको भी दिखा देतीं सिनेमा।"

बेगम ने कुछ सोचते हुए कहा—"ठहरो, सिद्दीक़ भाई वाली से पूछ लूँ कि वे अपने चहेते को भी ले जा सकती हैं या नहीं।"

सिद्दीक़ भाई ने दरवाज़े पर थपकी दी और हमने घूम कर देखा तो उन्होंने इशारे से बुलाकर चुपके से कहा—"उनसे मेरा नाम लेकर न कहें नहीं तो बेकार लाखों बातें सुनाकर रख देंगी।"

बेगम ने पूछा—"क्या कह रहे हैं?"

हमने कहा—"कह रहे हैं कि बहन से कह दो कि मेरा नाम लेकर उनसे न कहें नहीं तो लाखों बातें सुनाकर रख देंगी मुझे।"

बेगम ने कहा—"उस चुड़ैल की क्या मजाल है कि कुछ कहे। अच्छा, मैं अभी आती हूँ। तुम डुपट्टा तो चुन दो तब तक।"

बेगम तो यह कह कर बाहर चली गईं और हमने जल्दी से डुपट्टा निकाल कर चुनना शुरू कर दिया कि इतने में वह फिर आकर ड्योढ़ी से बोलीं—"मैं आ सकती हूँ अन्दर।"

हमने कहा—"हाँ हाँ, आ जाओ न। वह तो अन्दर ही घुसे बैठे हैं।"

बेगम ने कहा—"तुम दोनों भी जल्दी से तैयार हो जाओ। मैं तब तक मोटर निकलवाती हूँ।"

यह कह कर वह तो डुपट्टा लिये हुए बाहर चली गईं और हम दोनों जल्दी-जल्दी तैयार होने लगे। तभी नफ़ीसा ने बाहर से आवाज़ दी कि "सरकार बुला रही हैं साहब लोगों को। मोटर तैयार है।"

हम लोगों ने कपड़े तो पहन ही रक्खे थे, जल्दी से बुर्क़ा ओढ़ कर बाहर आ गये। जमाल आरा बहन ने हम दोनों को देखते ही कहा—

"आइये, आइये। आप दोनों चलिये मोटर पर बैठिये. हम दोनों भी आ रहे हैं।"

बेगम ने कहा—"तो साथ ही क्यों नहीं चलतीं। घर वाले के साथ जाते शर्म आती है?"

जमाल आरा ने सिद्दीक़ भाई को सम्बोधित करते हुए कहा—"जनाब, यह कोट का दामन बुर्क़े में कर लीजिये तो अच्छा है।"

बेगम ने हमसे कहा—"और आप भी मूँछें ज़रा बुर्क़े के अन्दर ही रक्खें तो अच्छा है।"

जमाल आरा ने कहा—"इन दोनों को मर्दाने दर्जे में बिठाओगी न?"

बेगम ने कहा—"जी नहीं, बन्दी मर्दाने दर्जे की कायल नहीं। मैं तो अपने पास ही बिठाऊँगी।"

जमाल आरा ने कहा—"अच्छा ख़ैर, तुम इधर आ जाओ मेरे साथ, मैं ख़ुद मोटर ड्राइव कर लूँगी। रहीमन, तुम्हारे जाने की ज़रूरत नहीं। तुम ज़रा पर्दा ठीक कर दो, उड़ने न पाये।"

बेगम ने मोटर स्टार्ट कर दी और कई बाज़ारों में होती हुई दस मिनट के अन्दर ही "नूरजहाँ टाकीज़" पहुँच गईं। वह शहर कोतवालिनी थीं। उनको टिकट ख़रीदने की ज़रूरत नहीं थी। सिनेमा हाउस की मैनेजरनी साहबा पहले से ही गेट पर खड़ी इन्तज़ार कर रही थीं। उनको देखते ही आगे बढ़ीं। सिनेमा के दरवाज़े पर खड़ी सिपाहिन ने सैल्यूट किया और बेगम ने जमाल आरा से कहा—"अब मर्दों को भी उतरवाओ।"

अब हम दोनों भी बुर्क़े में लिपटे हुए उतरे तो बेगम ने चुपके से कहा "टाई अन्दर करो बुर्क़े के।"

हमने धीरे से कहा—"हवा के मारे उड़ ही जाता है बुर्क़ा।"

बेगम ने आहिस्ता से कहा —"अच्छा, अब हजार औरतों के बीच अपनी आवाज़ तो न निकालो। न किसी की शर्म न हया। इन मर्दों की आँखो का पानी तो जैसे मर ही गया है।"

इतने में मैनेजरनी साहबा ने कहा—"चलिये सरकार।"

और आगे-आगे बेगम, बीच में हम दोनों मर्द और हमारे पीछे जमाल आरा बहन हाल के अन्दर पहुँच कर एक 'बाक्स' में बैठ गये। उस समय तक किसी और बुर्क़े का पता भी न था हाल भर में। हम लोगों को बैठे थोड़ी ही देर हुई थी कि बेगम ने जमाल आरा बहन से कहा—"जमाल, देखो ज़रा उन बेगम साहबा को। जब से हम लोग आये हैं इनकी नज़रें जैसे इन बुर्क़ों पर जम कर रह गई हैं।"

जमाल आरा ने कहा—"जी हां, तरह-तरह से छब दिखा रही हैं।"

बेगम ने कहा—"और उस प्याज़ी साड़ी वाली औरत को देखो, कैसा घूर रही है इस तरफ़। जी चाहता है आँखें फोड़ दूँ कमबख्त की।"

जमाल आरा ने कहा—"देख रही है तो देखने दो। आप ही थक जायगी देखते-देखते।"

बेगम ने कहा—"नहीं, मैं पूछती हूँ कि ये तमाशा देखने आती हैं यहाँ या शरीफ़ घराने के पर्दानशीन मर्दों को घूरने आती हैं। इन कमबख्तों के तो जैसे बाप-भाई होते ही नहीं।"

इतने में मर्दाना दर्जे में कुछ गड़बड़ शुरू हुई और अनेक मर्दों की तेज़-तेज़ आवाज़ें आने लगीं :—

मर्द नं० एक—"तू क्या समझा है अपने को?"

मर्द नं० दो—"और तू क्या समझा है अपने को?"

मर्द नं० एक—"बुलाऊँ मैं अपने यहाँ की औरतों को?"

मर्द नं० दो—"अरे तो मुझे भी अकेला न समझना। मेरे यहाँ की औरतें भी मौजूद हैं।"

मर्द नं० एक—"तो तुम इस जगह से नहीं हटोगे ?"

मर्द नं० दो—"क़यामत तक न हटेंगे, और अगर हिम्मत है तो हटा कर देख लो।"

मर्द नं० एक—"अच्छा हट तो सही।"

मर्द नं० दो—"ख़बरदार जो हाथ लगाया मेरे।"

बेगम ने कहा—"सुन रही हो जमाल ? इसीलिये तो मैं मर्दों को मर्दाने क्लास में बिठाने की क़ायल नहीं हूँ। ये लोग दो घड़ी भी निचले थोड़े ही बैठ सकते हैं। बग़ैर लड़ाई झगड़े के इनका काम चल ही नहीं सकता।"

जमाल आरा ने कहा—"जी नहीं, सब मर्द ऐसे थोड़े ही होते हैं। ख़ुदा न करे हमारे मर्द ऐसे झगड़ालू हो जायें। ज़िन्दगी ही मुश्किल हो जाय। ये तो न जाने किन निचले वर्ग की औरतों के यहाँ से आये होंगे।"

बेगम ने कहा—"ख़ैर, यह भी सही। पर यह बताओ कि मेरा यह तरीक़ा ठीक है कि नहीं कि अपने मर्दों को अपने साथ ही रखना चाहिये। इन नीच लोगों की तो हवा लगना भी ज़हर है।"

इतने में सिनेमा हाल में अँधेरा छा गया और पर्दे पर तमाशे का नाम आया—'नामुराद दूल्हा'—तुरन्त ही दूसरा नाम आया—कहानी, फ़रीदा बानो, सम्वाद नज्मा। गाने लीलावती और चन्द्रा, पट—कथा लेखन आशा देवी। फ़ोटोग्राफ़ी पद्मावती और शीरीं। फिर नाम आया—निर्देशिका—मोती बाई गिडवानी। और इसके बाद खेल शुरू हुआ। इस खेल में यही दिखाया गया था कि एक दुल्हन को, जब वह नये नवेले दूल्हा को ब्याह कर लाई, तब लड़के की एक निराश उम्मीदवार लड़की का ख़त मिला कि तुम जिस लड़के को ब्याह कर लाई हो वह दरअसल मुझसे मुहब्बत करता है और अपने माता-पिता

की जबर्दस्ती और कुछ मर्दाना शील और संकोच के कारण उसकी शादी तुम्हारे साथ हो रही है और वह चुप है। लेकिन तुम्हारा जीवन कभी सुखी न रह सकेगा। न वह तुमसे प्रेम कर सकता है और न तुम उसके दिल से मेरी मुहब्बत छुड़ा सकती हो। लड़की यह ख़त पाकर बिना अपने दूल्हा से कुछ कहे-सुने उससे विरक्त हो जाती है और उसके पास जाती तक नहीं। लड़का बेचारा नया-नया दूल्हा—न शर्म को छोड़ सकता है न उसकी समझ में अपनी स्वामिनी का यह व्यवहार आता है। इधर यह लड़का दूल्हा बना चुपचाप अपने भाग्य पर आँसू बहाता है उधर लड़की ज़िन्दगी से बेज़ार है। एकाएक लड़की बीमार पड़ जाती है और सारी डाक्टरनियाँ जवाब दे देती हैं। सिर्फ़ एक डाक्टरनी बताती है कि इसकी ज़िन्दगी सिर्फ़ इस तरह बच सकती है कि कोई और अपनी ज़िन्दगी को ख़तरे में डाल कर अपने शरीर का आधा ख़ून इसके शरीर में पहुँचाने के लिये दे दे। यह सुनते ही लड़का डाक्टरनी से प्रार्थना करता है कि मेरी पत्नी के लिये मेरे होते किसी और का ख़ून लिया गया तो मैं जान दे दूँगा। लड़की जब यह सुनती है तो उसे आश्चर्य होता है। वह अकेले में लड़के से पूछती है कि तुम आख़िर मेरे लिये इतना बड़ा त्याग क्यों कर रहे हो, तुमको क्या ज़रूरत है कि तुम मेरे लिये अपनी ज़िन्दगी ख़तरे में डालो। लड़का इस बात का जवाब देता है कि मेरी ज़िन्दगी का दूसरा मक़सद ही क्या है कि मैं आप पर .कुरबान हो जाऊँ। एक ना.ज़ुकिस्तानी लड़के का धर्म भी यही है और उसकी तमन्ना भी अगर कुछ हो सकती है तो वह यह कि अपनी स्वामिनी, अपनी देवी पर अपना सब कुछ .कुरबान कर दे। लड़की उसको बताती है कि तुमको तो किसी और से प्रेम है। इसका जवाब लड़का यह देता है कि ना.ज़ुकिस्तानी लड़का विवाह के बाद ही प्रेम से परिचित होता है। उससे पहले प्रेम से बड़ा कलंक

उसके लिये और कुछ नहीं होता। अब लड़की उसके सामने वह ख़त पेश कर देती है। जब लड़का उसको यह बताता है कि अगर उस औरत के पास मेरा कोई ख़त हो या यह पत्र लिखने वाली लड़की तीन-चार मेरे जैसे नौजवानों में मुझको पहचान ले तो मुझे जो भी दंड दिया जाय, मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा। इसके बाद लड़का सारी कहानी सुनाता है कि किस तरह उस लड़की ने अपने विवाह का प्रस्ताव मेरी माँ के सामने रक्खा। और जब मेरी मां ने उसका प्रस्ताव ठुकराकर आपके साथ मेरा विवाह कर दिया तो अब यह इस तरह बदला ले रही है। लड़की यह सुनकर एक दम चौंकती है। उसको मालूम होता है कि वह कितने बड़े भ्रम का शिकार थी और उसने अकारण ही स्वयं अपने को भी इतना कष्ट दिया और उस बेज़बान, घर में बैठने वाले अर्धांग को भी सताया। वह अपने सच्चे और सीधे पति का हाथ पकड़ कर कहती है कि तुम मेरे जीवन साथी बन चुके हो। जब मैंने तुमको भूल से अपनी मौत समझा था तो मैं मर रही थी। मगर अब तुम ज़िन्दगी साबित हुए तो मुझको ज़िन्दा रहने के लिये सिर्फ़ तुम्हारे प्रेम और तुम्हारी वफ़ादारी की ज़रूरत है, तुम्हारे ख़ून की नहीं। लड़की दिन पर दिन सँभलने लगती है और लड़का एक वफ़ादार, आज्ञापालक पति की तरह दिन-रात उसकी सेवा में लगा रहता है। डाक्टरनी रोज़ उसको इंजेक्शन देती है जिससे वह सँभलती जाती है। लेकिन लड़का दिन पर दिन निढाल हो रहा है। आख़िर जब लड़का एक-दम चारपाई से लग जाता है तब एकाएक डाक्टरनी से उसको मालूम होता है कि तुमको रोज़ इसी के ख़ून का इन्जेक्शन दिया जाता है जिससे तुम बच गई हो और उसकी ज़िन्दगी अब ख़तरे में है। लड़की पागलों की भाँति डाक्टरनी से आग्रह करने लगती है कि मैं अपना देवता समान पति तुमसे लूँगी इत्यादि-इत्यादि। अन्त में लड़का भी बच जाता है और

दोनों आनन्दपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगते हैं। अन्तिम दृश्य में उन दोनों को एक फूलों से लदी हुई कश्ती में तैरता हुआ दिखाया गया है जिस पर दोनों एक दोगाना गा रहे हैं।

इस खेल को हमने तो ख़ैर पसन्द नहीं किया लेकिन बेगम और जमाल आरा बहन बहुत प्रभावित दीखती थीं। आख़िर सिनेमा हाल से निकलने से पहले ही बेगम ने कहा—"यह खेल सचमुच इस क़ाबिल है कि मर्दों को ज़्यादा से ज़्यादा दफ़े दिखाया जाय। मैं कोशिश करूँगी कि अबकी रविवार को इसका एक ख़ालिस मर्दाना 'शो' हो।"

जमाल आरा बहन ने भी इसका समर्थन किया और वह उसी खेल के एक गाने की धुन में सीटी बजाती हुई हम लोगों को लेकर सिनेमा हाल से निकल आई।

आठ

पुलिस का बड़ा असर होता है। नाम होना चाहिये पुलिस का, फिर चाहे वह मर्दाना हो या जनाना। और कोतवाल का पद तो आप जानते हैं कि शहर के लिये क्या दर्जा रखता है। भला यह कैसे सम्भव था कि कोतवालिनी साहबा चाहें और जमाल आरा बहन को अच्छा सा घर न मिले। कोतवाली के पास ही एक अच्छी सी कोठी उनको मिल गई और बेगम की मदद से उन्होंने अपने घर को फ़र्नीचर आदि से सजा लिया और सिद्दीक़ भाई को लेकर चली गई और हमने कहा कि—

'फिर वही कुंजे-क़फ़स फिर वही सैयाद का घर'

मगर एक बात थी कि अब बेगम ने भी हमको कम से कम इतनी आज़ादी तो दे ही रक्खी थी कि जब जी चाहता था शाम को सिद्दीक़ भाई के पास चले जाते थे या वह हमारे पास चले आते थे। लगभग रोज़ाना ही मुलाक़ात होती थी। आज सिद्दीक़ भाई रोज़ से पहले ही यानी तीन ही बजे आ गये। बेगम उस वक़्त बाहर ही थीं और जमाल आरा बहन ने उनको इजाज़त दे दी थी कि हमारे नौकरों के सामने आ सकते हैं इसलिये वे बेधड़क चलते चले आये। हमने उनको बेवक़्त देखकर कहा—"ख़ैरियत तो है, यह आज इस वक़्त कैसे आ गये ?"

कहने लगे—"मुशायरी में चलोगे ?"

हमने ताज्जुब से कहा—"मुशायरी ? कैसी मुशायरी ?"

कहने लगे—"आज यहाँ एक बहुत बड़ी मुशायरी है। सारे नाज़ुकिस्तान की बड़ी-बड़ी शायरा आ रही हैं। हमारी बेगम भी जा रही हैं और तुम्हारी बेगम भी जायेगी। वहाँ पर्दे का बहुत अच्छा इन्तज़ाम है। ज़नाना दर्जा बहुत अच्छा है। मैंने अपनी बेगम की ख़ुशामद करके इजाज़त ले ली है, अब तुम अपनी बेगम से पूछो।"

हमको भी उस मुशायरी के देखने का शौक़ हुआ और हमने बेगम को एक परचा लिखकर भेजा कि दो मिनट के लिये अन्दर आ सकती हों तो आजायें। कुछ ख़ुदा राज़ी था और कुछ हमारे सितारे अच्छे थे कि परचा मिलते ही उन्होंने ड्योढ़ी से आवाज़ दी—"कहिये, बन्दी हाज़िर है।"

सिद्दीक़ भाई लपक कर आड़ में हो गये तो हमने कहा—"आ जाइये।"

बेगम ने आते ही मुस्कराकर कहा—'मैं समझ गई हूँ जिसके लिये याद किया गया है। यह जमाल आरा का मर्दुआ मेरे मियाँ को भी हाथ से बेहाथ करके रहेगा। मुशायरी की ख़बर लेकर आये होंगे तुमको बहकाने।"

हमने कहा "समझीं तो आप ख़ूब, मगर मैं यह कहता हूँ कि अगर इसमें कोई हर्ज न हो और आपके लिये नामुनासिब न हो तो मेरा भी दिल चाहता है मुशायरी देखने के लिये।"

बेगम ने बड़े विनम्र स्वर से कहा—"बहुत अच्छा सरकार, तशरीफ़ ले जाइयेगा। खाना ज़रा जल्दी हो जाय, इसके बाद सब साथ ही चलेंगे। मैं जमाल को यहीं बुलाये लेती हूँ। वह भी साथ ही खाना खा लेंगी।"

हमने ख़ुश होकर कहा—"हाँ, यह ठीक है, आप जमाल बहन को फ़ौरन बुलालें।"

बेगम मुस्कराती हुई बाहर चली गईं और सिद्दीक़ भाई अन्दर से आते हुए निकले—

"मेरी सजनी भई कोतवालिनी, अब डर काहे का"

हमने कहा—"अच्छा, यह नीयत है? मेरी कोतवालिनी पर दांत लगाये हैं आपने?"

सिद्दीक़ भाई ने दांतों के नीचे उंगली दबाकर कहा—"तौबा है, सचमुच ख़याल ही न रहा कि कोतवालिनी के कोतवाल तो यहाँ ख़ुद ही मौजूद हैं। मैं तो यों ही मारे ख़ुशी के एक गाना गाने लगा था। नहीं भई, तुम्हारी कोतवालिनी तुमको मुबारक रहे, मेरी ग़रीबामऊ डिप्टी कलक्टरनी मेरे लिये बहुत है।"

हमने कहा—"राज़ी तो बड़ी जल्दी हो गई? मैं तो समझा था कि हज़ारों बातें सुनाकर रख देगी कि बड़ा शौक़ सवार हुआ है। बड़े सैलानी होकर रह गये हैं। अच्छा, अब खाने में जल्दी करनी चाहिये। किस वक़्त से है यह मुशायरी?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"नौ बजे का वक़्त दैनिक 'सहेली' में छपा था।"

हमने कहा—"लो, तो अब वक़्त ही कितना है। साढ़े सात तो बज ही रहे हैं। मैं ज़रा बावर्चीख़ाने में जाकर देखूँ कि कितनी देर है खाने में। तुम तब तक इन दोनों डिबियों में पान बनाकर रक्खो।"

आठ बजे के क़रीब बाहर ज़नाने से खाने की माँग आई और हमने फ़ौरन खाना भिजवाकर अन्दर मर्दाने में भी खाने से फ़ुरसत करली और ठीक पौने नौ बजे मुशायरी के लिये मोटर पर रवाना हो गये। मुशायरी में पहुंचकर हम दोनों को मर्दाने दर्जे में पहुंचा दिया गया और बेगम जमाल बहन के साथ औरतों में बैठ गईं। हाल में

हज़ारों औरतों का मजमा था। मंच पर बीस-पचीस महिलाएँ बैठी थीं। सिद्दीक़ भाई ने हमको कुछ—एक के नाम भी बताये कि यह अमुक शायरा हैं और यह अमुक शायरा हैं। मंच के बिल्कुल ऊपर बिजली के चमकते अक्षरों में तरह का मिसरा लटक रहा था :—

'ज़ालिम तेरी मूँछों में तक़दीर के चक्कर हैं'

थोड़ी ही देर बाद माइक्रोफ़ोन के सामने एक अधेड़ अवस्था की महिला ने आकर कहा—"आदरणीय बहनो ! मैं अपना फ़र्ज़ समझती हूँ कि सबसे पहले उन प्रतिष्ठित महिलाओं को धन्यवाद दूँ जो समस्त नाज़ुकिस्तान से हमारी दावत पर इस मुशायरी में शरीक होने के लिये हर तरह का कष्ट उठाकर यहाँ पधारी हैं। दरअसल नाज़ुकिस्तान के इतिहास में यह साहित्यिक समारोह हमेशा याद रहेगा और जब इतिहास लेखिकाएँ हमारा इतिहास लिखेंगी, उस वक़्त यह साहित्यिक कारनामा भी नज़रअन्दाज़ न कर सकेंगी। मैं मुशायरी की संयोजिकाओं और 'अंजुमन हुस्नेअदब' की तरफ़ से नाज़ुकिस्तान की सबसे बड़ी शायरा और उस्तानी जनाबा कटार साहबा की भी आभारी हूँ जो इस बुढ़ापे में हर मुशायरी में शिरकत छोड़ देने के बावजूद हमारे निमंत्रण को अस्वीकार न कर सकीं। मैं प्रस्ताव करती हूँ कि इस मुशायरी की सदारत आप ही करें।"

एक दूसरी महिला ने कटार साहबा की साहित्य-सेवाओं पर प्रकाश डालने के बाद उक्त प्रस्ताव का समर्थन किया और तालियों की गूँज में एक बड़ी बी को, जो सचमुच बहुत ही बूढ़ी थीं, दो स्त्रियाँ पकड़ कर मंच पर लाईं और माइक्रोफ़ोन उनके सामने कर दिया गया।

थीं तो ये बड़ी बी पर आवाज़ बड़ी करारी थी। अपने गले में पड़े हार उतार कर एक ओर रक्खे और फिर बोलीं—

"बहनो,

आपने मुझे जो इज़्ज़त बख़्शी है उसका शुक्रिया। किसी सामूहिक इसरार से इन्कार करने के लिये जिस हिम्मत और साहस की जरूरत होती है वह इस बुढ़िया को कहाँ से मिले। जी नहीं चाहता लेकिन आपका हुक्म भी नहीं टाल सकती। मेरी उम्र अब उस मंज़िल पर पहुँच चुकी है कि अगर ज़िम्मेदारी का यह बोझ ही बहाना बन जाय तो मुझे आशा है कि आप बहनें मुझे माफ़ कर देंगी। अब मैं मुशायरी की कार्यवाही शुरू करती हूँ।"

इस छोटे से भाषण के बाद मुशायरी शुरू हो गई। पहले छोटी-छोटी लड़कियों ने अपनी-अपनी उस्तानियों से इजाज़त ले लेकर तरह* में ग़ज़लें सुनाईं। आवाज़ें सब की अच्छी, पढ़ने के तरीक़े एक से एक मनोहर, लेकिन शायरी सबकी अजीब तरह की। हमारे लिये तो तरह का मिसरा ही अजीब था—

'ज़ालिम तेरी मूँछों में तक़दीर के चक्कर हैं'

लेकिन अब जो पूरी ग़ज़लें सुनीं तो रंग ही कुछ और था। ग़ज़लों में मर्दाना हुस्न की सराहना की गई थी। निज़ाकत के बजाय तन्दुरुस्ती की तारीफ़ें थीं, ज़ुल्फ़ और गेसू की जगह मूँछों की चर्चा थी। हमने अब तक शायरों का वह कलाम पढ़ा था जिसमें माशूक़ का बूटा सा क़द हो या माशूक़ सर्व क़द (सरो के पेड़ के समान लम्बा) हो लेकिन दोनों हालतों में उसकी कमर को लापता होना चाहिये या बिल्कुल ही न हो तो और भी अच्छा है। ये मूँछों वाले शेर जिन्दगी में पहली

*तरह का मिसरा एक पंक्ति होती है, उसी तुक में सब शायर ग़ज़लें कहते हैं। ऐसे मुशायरे को तरही मुशायरा कहते हैं।

बार सुने थे और सारी उपमाएँ और अलंकार अजीब व ग़रीब थे। किसी ने कहा कि मेरा प्रेमी हिमालय से भी बड़ा है, किसी ने कहा कि मेरा आशिक़ फ़ौलाद से भी ज़्यादा सख़्त है, कोई अपने आशिक़ को हाथी की तरह मोटा और ताक़तवर देखना चाहती थी तो कोई अपने प्रेमी को रुस्तम को भी हराने वाला ज़ाहिर कर रही थी। और मुशायरी थी कि 'वाह वाह,' 'क्या कहने हैं' 'मुकर्रर इरशाद' के नारों से गूँजी हुई थी। आख़िर माइक्रोफ़ोन पर एलान हुआ "जनाबा बोतल साहबा" और सारा हाल तालियों से गूँज उठा। सिद्दीक़ भाई ने हमारे कान में कहा—"अब सुनो, यह नाज़ुकिस्तान की सबसे लोकप्रिय शायरा हैं। वे इन्तहा शराब पीती हैं। मगर ऐसा कहती है कम्बख़्त कि मैं क्या कहूँ। पढ़ती भी ख़ूब है और कहती भी ख़ूब है।"

हमने देखा कि एक उजाड़ सी औरत, न सर में कंघी, न लिबास की कोई परवाह। साड़ी का आँचल किसी तरफ़ जा रहा है तो ख़ुद किसी तरफ़ जा रही हैं। लड़खड़ाती हुई मंच पर आई। सुनने-वालियों ने आगे खिसकना शुरू किया। किसी तरफ़ से आवाज़ आई "शराबिन सुनाइये, शराबिन।" किसी कोने से नारा बुलन्द हुआ, "ए मर्दे-सितमगार सुनाइये" लेकिन महफ़िल में ख़ामोशी छाते ही बोतल साहबा ने माइक्रोफ़ोन पर कहा—"तरह में कुछ शेर सुनिये। मैं तरह में शेर नहीं कहती, मगर मुझे यह बता देना है कि शायरा किसी की घरबन्द नहीं। वह कहना न चाहे यह दूसरी बात है, नहीं तो उसे मजबूर नहीं किया सकता।" यह कहकर वह कुछ गुनगुनाई, और इधर सिद्दीक़ भाई ने नोट बुक और पेन्सिल सँभाली। बोतल साहबा ने झूमकर सचमुच निहायत मस्त और मधुर आवाज़ में यह मतला पढ़ा :—

"मैं राई का एक दाना परबत वो सरासर है
मैं इससे भी कमतर हूँ वो उससे भी बढ़कर है"

मुशायरी एक दम गूँज उठी। औरतों ने एक क़यामत मचा दी! बार-बार मतला* पढ़वाया जा रहा था। हमने देखा कि बेगम भी झूम-झूम कर 'वाह वाह' का शोर मचा रही थीं और सिद्दीक भाई की बेगम साहबा तो जैसे आपे से बाहर थीं। हद यह है कि ख़ुद कटार साहबा, मुशायरी की सभानेत्री दिल खोल कर दाद दे रही थीं। हाँ, हम ज़रूर इस मतले को अजीब मसख़रापन समझ रहे थे। लेकिन यह कुछ हमारी नासमझी ही थी इसलिये कि मर्दाने दर्जे का हर मर्द और बाहर तमाम औरतें झूम रही थीं। आख़िर कई बार यह मतला पढ़ने के बाद बोतल साहबा ने दूसरा शेर पढ़ा :—

"यह ख़ूबिये-क़िस्मत है, यह जज़्बे-मुहब्बत है
राज़ी जो न होते थे अब ख़ुद वो मेरे सर हैं।"

न पूछिये। मालूम हुआ कि जैसे किसी ने ऐटम बम फेंक दिया। मुशायरी उड़कर रह गई। औरतें खड़ी हो-हो गईं। ख़ुद हमारी बेगम साहबा ने पहले तो जाँघ पर हाथ मारे और इसके बाद हाथ जोड़ कर कहा—"सरकार, एक बार और पढ़ दीजिये, यह शेर नहीं क़यामत है।"

बोतल साहबा ने मुस्करा कर पान की बहने वाली राल साड़ी के आँचल से बेपरवाही के साथ पोंछी, बालों की एक लट चेहरे से हटाई और बार-बार यह शेर पढ़ने के बाद अपनी ग़ज़ल के बाक़ी शेर भी उसी क़यामत के शोर और 'वाह-वाह' के बीच सुनाये और अन्त में मक़ता पढ़ा :—

---

*ग़ज़ल की वे पहली दो पंक्तियाँ या शेर जिसकी दोनों पंक्तियाँ तुकान्त हों।

"'बोतल' तेरी मदहोशी मैं ख़ूब समझती हूँ
तू उनके लिये बोतल और तेरे वो साग़र हैं।"

बोतल साहबा की ग़ज़ल ने मुशायरी को जगा दिया। उनकी ग़ज़ल ख़तम होने के बाद औरतों ने बड़ा शोर मचाया कि "कुछ और कुछ और" मगर वह लड़खड़ाती डगमगाती मंच से उतर गईं। ख़याल यह था कि अब किसी शायरा का रंग न जमेगा, चुनान्चे यही हुआ कि फिर बहुत सी शायरा मंच पर गईं और रूखी-फीकी ग़ज़लें पढ़कर चली आईं। हद यह है कि एक भारी-भरकम महिला, जिनके बारे में सिद्दीक़ भाई ने बताया था कि यह भी बहुत बड़ी उस्तानी हैं, और जिनका उपनाम 'पारा' था, अपनी ठोस मगर ठस ग़ज़ल पढ़कर वापस आ गईं। इसी तरह बहुत सी शायरा आईं लेकिन 'बोतल' साहबा जो रंग जमा गईं वह किसी से भी हलका न किया जा सका। अन्त में 'कटार' साहबा ने अपनी ग़ज़ल पढ़ने के लिये गला साफ़ किया तो सिद्दीक़ भाई ने कहा—"इनकी ग़ज़ल तो बस तबर्रुक (प्रसाद) होगी। बहुत पुराने रंग में कहती हैं। वही दक़ियानूसी बंदिशें होंगी और वही अम्माँ हव्वा के वक़्त के ख़यालात।"

कटार साहबा ने चश्मा साफ़ करके नाक की फुंगी पर लगाया और ग़ज़ल शुरू करदी। उनकी ग़ज़ल सचमुच योंही सी थी और पढ़ तो इस तरह रही थीं जैसे नुस्ख़ा लिखा रही हैं अपनी किसी रोगिणी के लिये। उनके इस शेर को सिद्दीक़ भाई ने नोट बुक पर लिखा :—

"मूँछें हैं तेरी ज़ालिम या दिल के लिये नश्तर
क़ातिल न कहूँ क्योंकर कुछ ऐसे ही तेवर है।"

'कटार' साहबा की ग़ज़ल के बाद मुशायरी ख़तम हो गई और एक

ज़बरदस्त शोर और हड़बोंग के साथ औरतें एक पर एक सवार हाल से निकलने लगीं। कुछ औरतें बोतल साहबा को घेर कर खड़ी हो गईं। उनमें हमारी बेगम साहबा भी थीं। आख़िर बड़ी मुश्किल से रात के तीन बजे बेगम हम लोगों को लेकर घर पहुँचीं।

नौ

अब तक तो ज़िन्दगी जैसी कुछ भी थी, बहरहाल शान्तिपूर्ण ज़रूर थी। जो चीज़ पहले बहुत परेशान किये हुए थी यानी घर की क़ैद और एक दम आज़ादी छीन कर बिलकुल मजबूर और ग़ुलाम बना देना, उसके तो हम क़रीब-क़रीब आदी हो चुके थे। यही क़ैद अब ज़िन्दगी बन चुकी थी और यही ज़िन्दगी अपने साथ कुछ न कुछ आनन्ददायक चीज़ें भी लिये हुए हमारे सामने थी, लेकिन अब एक बात कुछ दिनों से ऐसी पैदा हो गई थी कि हम दिल ही दिल में कुढ़ रहे थे और रात-दिन ख़ुदा से दुआ करते थे कि हमको इस मुसीबत से बचाले। बेगम को अब ताश खेलने और बाज़ी लगाकर ताश खेलने की आदत पड़ती जा रही थी। एक तो वह एक ऐसे क्लब की मेम्बर थीं जहाँ जुआ खेलने के एक सौ एक तरीक़े मौजूद थे दूसरे बहुत सी जुआरिनों की संगत ने उनको तबाह कर रक्खा था। रुपया पानी की तरह इस लत के पीछे बहाया जा रहा था और हाल यह था कि अब मुश्किल से महीने में दो—एक रात को सही वक़्त पर घर आती थीं। कभी एक बजे आईं, कभी दो बजे और कभी सारी-सारी रात ग़ायब। फिर अंधेर यह था कि इस अभागे जुए की लत के अलावा उन्होंने झूठ बोलना भी शुरू कर दिया था। कभी घर आकर यह न बतातीं कि जुआख़ाने में रुपया और समय दोनों बरबाद कर रही थीं, बल्कि हमेशा देर में आने का बहाना यही होता कि गश्त पर थीं, यहाँ

झगड़ा हो गया था, वहाँ बलवा हो गया था। यह सरकारी काम था, वह सरकारी ड्यूटी थी। एक दिन हो, दो दिन हो तो कोई यक़ीन भी करले। अब तो तीमों दिन उनका यही नियम हो गया था कि रात के बारह एक बजे के पहले कभी न आती थीं। शुरू-शुरू में तो हम चुप रहे पर आख़िर कहाँ तक रहते। अन्त में हमने पहले तो उनसे ख़ुशामद की, गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ाकर समझाया पर अब उनको यह समझाना भी बुरा लगने लगा था और रात को देर में आने पर जहाँ हमने उनको टोका वह आपे से बाहर हो जाया करती थीं। हम यह बात उन्हें बताना न चाहते थे कि हमें इन सब बातों की ख़बर है। इसलिये कि यह ज़ाहिर होने के बाद जो थोड़ी बहुत शर्म और संकोच बाक़ी था वह भी दूर हो जाता और कोई ताज्जुब न था कि फिर हमारा ही घर ताश खेलने वालियों का अड्डा बन कर रह जाता। अब तक सब कुछ था मगर बेगम चोरी के साथ सीना ज़ोरी से काम नहीं ले रही थीं, हालाँकि अगर वह हमारे सर पर ही अपना यह अड्डा जमा देतीं तो हम उनका कर ही क्या सकते थे। मर्द का क्या बस चल सकता है सिवाय इसके कि वह अपनी आग में ख़ुद ही जला करे। जलते, कुढ़ते और रह जाते पर इससे भी इनकार नहीं कि उनके रोज़ के सफ़ेद झूठ भी अच्छे न लगते थे। अब तो उनको जैसे घर से कोई मतलब ही न था और न हमसे कोई दिलचस्पी। पहले हमेशा वह यह किया करती थीं कि तीसरे पहर को हवा खाने के लिये निकल जातीं। किसी सहेली के यहाँ जायें या जहाँ भी जायें, रात को नौ-दस बजे तक आ जाती थीं। वापसी में कभी हमारे लिये मोज़े लिये चली आ रही हैं, कभी मफ़लर, कभी टाई, कभी कोई चीज़, कभी कोई चीज़। पर अब तो यह हाल था कि सेफ़्टी रेज़र के ब्लेडों तक के लिये अनेक बार तक़ाज़े करने पड़ते थे और जवाब यह मिलता था कि नफ़ीसा से मँगालो, गुलशन ले आयगी।

हालाँकि नफ़ीसा पहले भी थी, गुलशन पहले भी बाहर का काम करती थी पर हमारा काम इन नौकरानियों पर कभी न टलता था। सारांश यह कि उनके ये बदले हुए तेवर हम देखते थे और मन ही मन में जला करते थे। इधर हमारे जासूस भी लगे हुए थे जो रोज़ की ख़बरें लाकर हमको देते थे कि आज बेगम साहबा वहाँ खेल रही थीं, आज उनके घर जुए की फड़ जमी थी। वास्तव में यह मनहूस ख़बर सबसे पहले हमको सिद्दीक़ भाई ने सुनाई थी; बल्कि उनकी बेगम ने हमसे कहलवाया था कि आज-कल यह हो रहा है, । रंग बेढब है। यदि फ़ौरन ख़बर न ली गई और आदी हो गई वह जुए की तब फिर पानी सिर से ऊँचा हो जायगा। मगर हम बेचारे घर के बैठने वाले मर्द, निर्बल जाति, सिवाय ख़ुशामद के और कर ही क्या सकते थे और वहाँ ख़ुशामद से काम चलता न दिखता था। ख़ैर, यहाँ तक भी ग़नीमत थी। लेकिन आज शाम को जब बेगम जा चुकीं तब सिद्दीक़ भाई की बोली आकर लगी और उन्होंने निहायत परेशानी के साथ कहा—"भई, वो तुम्हारी बहन मेरे साथ आई हैं और तुमसे कुछ बातें करना चाहती हैं।"

हमने परेशान होकर कहा—"ख़ैरियत तो है?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"अब वही तुमको बतायेंगी। तुम सामने वाले कमरे में चले जाओ, मैं उनको अन्दर ही बुलाये लेता हूँ।"

हम सामने वाले कमरे में हट गये तो सिद्दीक़ भाई ने जमाल आरा बहन को अन्दर ही बुला लिया। हमने अन्दर से झाँक कर देखा तो वह भी परेशान सी नज़र आ रही थीं। दरवाज़े के पास ही कुर्सी बिछाकर बैठ गईं और दरवाज़े के खुले हुए पट से लगकर सिद्दीक़ भाई खड़े हो गये तो जमाल आरा बहन ने कहना शुरू किया "भाई साहब, मैं आज आप को यह बताने आई हूँ कि आपकी बेगम साहबा अब

क़ाबू से बाहर हो चुकी हैं और मुझे जो डर था वह भी आख़िरकार सच निकला। मैं इसी वक़्त से डर रही थी कि इस ऊँचे पैमाने पर जुआ खेलने के लिये वह आख़िर रुपया कहाँ से लायेंगी। तनख़्वाह चाहे कितनी ही हो पर जुआ खेलने के लिये तो कुबेर का ख़ज़ाना भी थोड़ा हो सकता है। शुरू-शुरू में उन्होंने आपको चकमा दिया पर जैसे-जैसे बाज़ियाँ बढ़ती गईं उतना ही रुपया उनके लिये कम पड़ता गया। ख़ुदा जाने कितनी महाजनियों की क़र्ज़दार हैं, न जाने कितनी सहेलियों का उधार चढ़ चुका है और ख़ुदा जाने कितना रुपया मैंने चुपके-चुपके अदा कर दिया है पर आज जो बात मुझे मालूम हुई है वह बेहद अफ़सोसनाक है।"

हमने सिद्दीक़ भाई से कहा—"पूछो तो सही कि क्या बात ?"

सिद्दीक़ भाई ने उनसे कहा—"आख़िर तुम साफ़ बता क्यों नहीं देतीं इनको। ये बेचारे भी तो जान जायें कि क्या हो रहा है ?"

जमाल बहन ने चुपके से कहा—"रिशवत लेनी शुरू कर दी है। आज ही एक क़त्ल की वारदात में बहुत बड़ी रक़म रिशवत के तौर पर वसूल की है और शम्सुन्निसा के घर पर जमी हैं। ख़ुदा न करे अगर यह हराम उनके मुंह लग गया तब समझ लीजिये कि अन्धेर हो जायेगा। नौकरी भी जायगी और ज़िल्लत और बदनामी जो कुछ भी हो कम है।"

अब हमसे न रहा गया और हमने सारी शर्म और संकोच को त्याग कर पहली बार जमाल आरा बहन से सीधे बात की "तो फिर आप ही बताइये बहन कि मैं इसका क्या इलाज करूँ। वह मेरी एक नहीं सुनतीं बल्कि अगर मैं कभी टोक दूँ तो आस्मान सर पर उठा लेती हैं, आपे से बाहर हो जाती हैं। उनके ग़ुस्से से तो ख़ुदा बचाये।"

जमाल आरा बहन ने कहा—"मुझसे जहाँ तक हो सका मैं उनको समझा चुकी पर उन पर कोई असर ही नहीं होता। अब तक सरकार में नेकनाम थीं। उम्मीद थी कि बहुत जल्द तरक़्क़ी कर जायेंगी पर क्या आप यह समझते हैं कि इन बातों की ख़बर ऊपर तक नहीं जायगी? वही चुड़ैलें, जो उनके साथ वारे-न्यारे किया करती हैं, एक-एक की हज़ार-हजार ऊपर जाकर लगाती होंगी। और अगर ख़ुदानख़्वास्ता इस रिशवत की ख़बर ऊपर तक हो गई तो फ़ौरन जाँच शुरू हो जायगी और नौकरी के लाले पड़ जायँगे। मैं तो .ख़ुद हैरान हूँ कि आख़िर उनको किस तरह समझाऊँ?"

हमने कहा—"अच्छा, यह नहीं हो सकता कि आपकी कोशिशों से उनका तबादला यहाँ से हो जाय?"

जमाल आरा बहन ने कहा—"अगर तबादला हो भी गया तो फ़ायदा क्या होगा। पड़ी हुई आदत थोड़े ही छूट जायगी। जहाँ जायँगी, अपने लिये एक गिरोह ढूँढ लेंगी। फिर तो यह होगा कि आपको ख़बर भी न हुआ करेगी। यहाँ तो मैं मौजूद हूँ। एक-एक ख़बर पहुँचाती रहती हूँ। फिर कौन यह मुख़बिरी करने आयेगी?"

हमने बड़ी ख़ुशामद से कहा—"बहन, .ख़ुदा के लिये इस घर को उजड़ने और उनको तबाह होने से बचाने के लिये कोई तरकीब तो निकालिये।"

जमाल आरा बहन ने कहा—"मैं तो कोशिश कर ही रही हूँ। मौक़ा ढूँढ कर फिर समझाने की कोशिश करूँगी। लेकिन आप भी एक बार पूरा ज़ोर लगाकर समझाने की कोशिश कीजिये। शायद कुछ समझ में आजाय।"

हम चुप हो रहे, और चुप न होते तो करते ही क्या। हमारे बस

में आख़िर था ही क्या। जमाल आरा बहन और सिद्दीक़ भाई के जाने के बाद भी हम देर तक इसी फ़िक्र में रहे कि आख़िर क्या होने वाला है। लेटने की कोशिश की मगर बिस्तर में जैसे काँटे बिछे हुए थे। इधर-उधर करवटें बदलकर उठ बैठे और परेशानी की हालत में आँगन में टहलना शुरू कर दिया। हम इतने परेशान शायद उम्र भर में कभी न हुए होंगे जितने आज परेशान थे। .खुदा जाने हम कितनी देर आँगन में टहलते रहे कि आख़िर ड्योढ़ी पर नफ़ीसा ने आवाज़ दी—"ख़ुदाबख़्श! दरवाज़ा खोलो, बेगम साहबा आई हैं।"

.खुदाबख़्श के बजाय हमने .खुद दरवाज़ा खोला तो बेगम बड़ी ही ख़स्ता और ख़राब हालत में घर में दाख़िल हुईं और हमको देखकर आश्चर्य से कहा—"अरे, आप अब तक सोये नहीं? तीन बजने वाले हैं?"

हमने कहा—'नींद नहीं आ रही थी।"

"नींद नहीं आ रही थी? आख़िर क्यों?"

"डर लगता है हमको।"

"डर?" बेगम ने आश्चर्य से पूछा—"डर आख़िर किस बात का? .खुदाबख़्श है, करीम है, बाहर गुलशन है, नफ़ीसा है और फिर पहरे की सिपाहिन है।"

हमने कहा—"घर के अन्दर मर्द ही मर्द तो हैं और वक़्त ऐसा आ लगा है कि कल ही शकुन्तला बजाजिन के यहाँ क़त्ल हो गया है। उसके पति को हमीदा ने मार कर सारा घर मूस लिया।"

बेगम का चेहरा एक दम ज़र्द पड़ गया। कमज़ोर आवाज़ में बोलीं—"ग़लत है। हमीदा ने उसको क़त्ल नहीं किया है। ख़बरदार जो अब हमीदा का नाम भी लिया। घर में बैठे-बैठे तुम मर्द लोग अजीब-अजीब क़िस्से गढ़ा करते हो।"

हमने कहा—"हमीदा ने क़त्ल नहीं किया तो फिर किस बात की रिशवत आप तक पहुँचाई गई थी? और आपको शर्म नहीं आई उस सुवर के बराबर हराम चीज़ को .क़ुबूल करते हुए। अब चाहे आप मुझे मार ही डालें मगर आज मैं आप से पूरी बात करके रहूँगा। अब तक मैं बहुत चुप रहा।"

बेगम ने ग़ुस्से से काँप कर कहा—"कुछ पागल तो नहीं हो गये हो। कमरे में चल कर बातें करो।"

हमने कमरे में आकर कहा—"आप यह समझती हैं कि आप का रोज़ देर से घर में आकर बहानेबाज़ियाँ करना बहुत कामियाब गुर है; मुझे न तो यह ख़बर है कि जुए का बाज़ार गर्म है, न मैं शम्सुन्निसा चुड़ैल को जानता हूँ, न मुझे मेहर अफ़रोज़ के यहाँ के जुए का कोई पता है और न मुझे उन सारे क़र्ज़ों के बारे में कुछ मालूम है जो आपने इस कमबख़्त जुए की वजह से अपने ऊपर लाद रक्खे हैं। और तो और, आज यह ख़बर भी आ गई कि आपने रिशवत जैसी हराम चीज़ भी क़ुबूल करली।"

बेगम ने .ग़ुस्से से काँप कर कहा—"जब मैं इतनी ही बुरी हूँ, जब तुमको मुझसे इतनी ही शिकायतें हैं, जब मुझमें ऐसे ही कीड़े पड़े हुए हैं तो तुम आख़िर क्यों मुझ कमबख़्त का साथ दे रहे हो। अगर तुम अलग होना चाहते हो तो मैं इसके लिये भी तैयार हूँ।"

हमने जल्दी से बेगम के मुँह पर हाथ रखते हुए कहा—"बस, ज़बान क़ाबू में रखना। मैं तुम्हारा दुश्मन नहीं हूँ। तुम्हारी ही भलाई के लिये तुमसे कहता हूँ, और यह जान कर कहता हूँ कि अब भी कुछ नहीं गया है। अगर तुम सँभलना चाहती हो तो आज भी सँभल सकती हो। तुम मुझसे कहो तो मैं तुम्हारी ही कमाई का इसी घर से इतना

रुपया निकाल कर दे दूँ कि तुम सारा क़र्ज़ा पाट दो। तुम क्यों आख़िर इस लाख के घर को ख़ाक करना चाहती हो। नौकरी अलग ख़तरे में पड़कर रह गई है, बदनामी अलग हो रही है, तन्दुरुस्ती अलग ख़राब कर रही हो। यह रात-रात भर की जगाई आख़िर कब तक तन्दुरुस्ती पर असर न करेगी। मैं तो आज तुमसे अपनी ही जान की क़सम लेकर रहूँगा कि तुम या तो इस बुरी लत से तौबा करलो नहीं तो मैं तुमको बन्दूक़ लाकर देता हूँ। मुझे पहले गोली से उड़ा दो, इसके बाद तुमको एख़्तियार है, जो चाहो करती फिरो।"

पता नहीं उस व.क्त हमारी क़िस्मत कितनी अच्छी थी कि बेगम ने .ग़ुस्सा होने के बजाय नर्मी से कहा—"अच्छा यह बताओ कि ये ख़बरें तुम तक किसने पहुँचाईं?"

हमने कहा—"जिसने भी पहुँचाई हों, पर वह भी तुम्हारा दुश्मन नहीं हो सकता। तुम को क्या पता कि ये ख़बरें पा-पाकर मैंने तुम्हारे सुधार की .ख़ुदावन्द ताला से कैसी-कैसी दुआएँ की हैं और मुझे यक़ीन है कि उसने मेरी दुआएँ जरूर सुनी होंगी और मेरी अच्छी बेगम फिर उसी तरह पाकबाज़ बन जायँगी जैसे वह फ़ितरतन (स्वभावतः) हैं।"

उसकी शान के .क़ुरबान कि बेगम ने एक बार हमको ग़ौर से देखा, फिर आँखों में आँसू भर कर बोलीं—"मैं सचमुच हद से गुज़र चुकी थी। तुमने मुझे बड़े अच्छे वक़्त पर झिंझोड़ दिया। तुमको जितनी ख़बरें मिली हैं सब ठीक हैं। मगर इस वक़्त मैं तुमसे वायदा करती हूँ कि आगे तुम ये ख़बरें कभी न सुनोगे। मैं अहद (प्रतिज्ञा) करती हूँ कि किसी तरह का जुआ कभी न खेलूँगी।"

हमने बढ़कर बेगम का हाथ अपने हाथ में लेकर चूम लिया और भावावेश में कहा—"मेरी सरताज, मेरी मलिका, तुमने मुझको

ख़रीद लिया, तुमने मेरे दामन में मुंह माँगी भीख डाल दी। ख़ुदावन्द करीम तुमको रहती दुनिया तक सलामत रक्खे।"

बेगम ने हमको गले से लगा लिया और हमको सचमुच यह महसूस होने लगा जैसे सचमुच अन्दर ही अन्दर सुलगने वाली आग ठंडी पड़ गई है।

——— —

दस

बेगम आज कल छुट्टी पर थीं। छुट्टी इत्तिफ़ाक़िया या .खुदा-नख़्वास्ता बीमारी की नहीं थी, बल्कि बड़ी मुबारक छुट्टी पर थीं। वही छुट्टी जो नाज़ुकिस्तान में सवा चार महीने की पूरी तनख़्वाह के साथ दी जाती है यानी .खुदा की मेहरबानी से उन्हें छटा महीना ख़त्म होकर सातवाँ महीना लग चुका था। चुनान्चे अब उनका सारा वक़्त घर ही में बीतता था, अलबत्ता उनकी दिलचस्पी के लिये हमने सिद्दीक़ भाई की .खुशामद करके उनको इस बात पर राज़ी कर लिया था कि वह अपनी बेगम साहबा की एक तरह से ड्यूटी लगा दें कि वह अपनी फ़ुरसत के वक़्त का ज़्यादा हिस्सा हमारी बेगम ही के पास .गुज़ारा करें। चुनान्चे जमाल आरा बहन तो ख़ैर ज़्यादातर बेगम के पास रहती ही थीं, उनके अलावा उनकी और सहेलियाँ भी बराबर उनका हाल पूछने के लिये आती-जाती रहती थीं। और उनकी जगह पर काम करने वाली कांतवालिनी साहबा भी उनके पास ही रहती थीं। इधर घर में हम और सिद्दीक़ भाई बच्चे के कपड़े सीने में लग जाते थे। कभी गद्दे, कभी छोटी-छोटी रज़ाईयाँ, कभी लँगोट और कभी कुर्ते वग़ैरह तैयार करने में लगे रहते थे। जच्चाघर का सारा सामान पूरा करने के लिये हमको पग-पग पर सिद्दीक़ भाई की ज़रूरत थी, इसलिये कि इस सिलसिले में हम बिलकुल ही कोरे थे। खुदा जीता-जागता दिखाये, यह पहला ही बच्चा होने वाला था और सिद्दीक़ भाई तीन बच्चों वाले थे। वह तो इस

मैदान के सिद्ध-हस्त खिलाड़ी ठहरे. इसलिये उनकी ही सलाह से शुट्टी के नुस्खे बंधवाये, गोंद और सोंठौरे का सामान मँगाया, अछवानी की तरकीबें पूछीं, जच्चा के लिये मुर्गा के चूज़े ढूँढ-ढूंढ कर जुटाये और इसी तरह सातवाँ महीना भी कुशलतापूर्वक बीत गया। सिद्दीक़ भाई ने बताया था कि सातवें महीने में विशेष सावधानी की ज़रूरत है। अकेली-दुकेली न रहने पाये बेगम, कहीं ऊँचा-नीचा पैर न पड़ जाय, कहीं डर न जायें। हम रोजाना न जाने क्या-क्या दुआ-दरूद पढ़-पढ़कर फूंकते रहते थे। उनकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई बात न होने देते, उनको आज से बहुत पहले से बल्कि यों कहिये कि शुरू से ही मिचली की बहुत शिकायत थी। पान, गोश्त और इसी तरह कुछ और चीज़ों से नफ़रत सी होकर रह गई थी। छिपा कर सोंधी मिट्टी खाने की लत भी पड़ गई थी। इन सारी बातों पर नजर रखनी पड़ती थी। कोशिश करते थे कि जहाँ तक हो सके वह फल और दूध का इस्तेमाल ज़्यादा करें। शुरू-शुरू में तो बेहद कमज़ोर हो गई थीं लेकिन अब तो .खुदा की मेहरबानी से बेहद तन्दुरुस्त मालूम होती थीं। आख़िर किसी न किसी तरह वह दिन भी आ गया जिसका इन्तज़ार था। या तो हमारा हिसाब ग़लत था या बेगम जल्दबाज़ थीं और उनसे अधिक जल्दबाज़ था उनका होने वाला बच्चा। आख़िरकार रात को दो बजे से दर्द शुरू हुआ और उसी वक़्त टेलीफ़ोन करके बड़े अस्पताल की डाक्टरनी को ख़बर दी गई। वह दो नर्सों के साथ फ़ौरन आगई और सुबह आठ बजे नफ़ीसा ने आवाज़ देकर यह .खुशख़बरी सुनाई कि बच्ची हुई है। हमने .खुदाबख़्श के हाथ नफ़ीसा को पाँच रुपये भिजवा दिये।

नाज़ुकिस्तान में लड़का पैदा होने पर एक तरह की बेपरवाही सी बरती जाती है। लेकिन लड़की पैदा हो तो मालूम होता है कि हर तरफ़

से ख़ुशी उबल रही है। चुनांचे हमारे यहाँ भी यही हुआ कि थोड़ी ही देर में घर में डोम आ धमके और दरवाज़े पर शोहदिनों ने चिल्ला-पुकार शुरू करदी कि "जच्चा-बच्चा सलामत रहें।" सिद्दीक़ भाई सबको इनाम-बख़्शिश देने के इन्चार्ज थे। उन्हीं के हाथ में खर्च था और वही उचित ढंग से ख़र्च भी कर सकते थे। हमको तो बस यह फ़िक्र थी कि बार-बार बेगम की और बच्ची की ख़ैरियत पूछते रहें। आख़िर बड़ी मुश्किल से डाक्टरनी ने इजाज़त दी कि साहब लोग जो आना चाहते हैं वह सिर्फ़ पाँच मिनट के लिये बच्ची को देख जाये। चुनांचे हम और सिद्दीक़ भाई दौड़े उस कमरे की तरफ़ जो जच्चाघर बनाया गया था। सिद्दीक़ भाई तो दरवाज़े तक जाकर रह गये पर हम बेगम के पास गये जो चुपचाप लेटी मुस्करा रही थीं। हमने जाते ही उनके सर पर हाथ फेरकर पूछा—"अब कैसी तबीयत है?"

बेगम ने बच्ची की तरफ़ इशारा करते हुए कहा—"अपनी साहबज़ादी से पूछो, मुझसे क्या पूछ रहे हो?"

हमने बच्ची को देखा। मालूम होता था कि गद्दे पर एक चाँद का टुकड़ा पड़ा है। हमने बढ़कर गद्दा उठाकर बच्ची को ग़ौर से देखा और फिर बेगम को दिखाते हुए कहा—"सचमुच तुम्हारी बच्ची मालूम होती है।"

बेगम ने कहा—"और तुम्हारी तो जैसे है ही नहीं।"

हमको एकाएक ख़याल आया कि सिद्दीक़ भाई बच्ची को देखने के लिये दरवाज़े से लगे खड़े हैं। और हम फ़ौरन गद्दे सहित बच्ची को लेकर बढ़े उनकी तरफ़। सिद्दीक़ भाई ने गद्दा लेकर बच्ची के हाथ में सौ रुपये का नोट रख दिया। हमने कहा—"वाह, यह क्या हरकत है?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"तो तुमसे क्या मतलब? मैं अपनी बच्ची को दे रहा हूँ, तुम कौन होते हो रोकने वाले?"

हमने बेगम के पास जाकर कहा—"सुन रही हो? यह नहीं मानते सिद्दीक़ भाई। सौ रुपये का नोट उसके हाथ में पकड़ा दिया है।"

बेगम ने कमज़ोर आवाज़ में कहा—"रहने दो देखा जायगा।"

इतनी देर में दो-तीन बार डाक्टरनी दरवाजा थपथपा चुकी थी। हम दोनों वहाँ से चले आये और ज़च्चाख़ाने में फिर औरतों का राज हो गया। इधर हम दोनों ने आकर इनाम-बख़्शिश, दान-ख़ैरात के झगड़ों में अपने को फँसा लिया। ख़ुदाबख़्श और करीम दोनों रूठ गये कि हमको साहबज़ादी को क्यों न दिखाया। जब आप लोग थे, हमको भी बता दिया होता तो हम भी देख लेते। उनसे लाख-लाख कहा कि अगर तुम लोग दरवाज़े के पास जाकर नफ़ीसा या गुलशन से कहो, तो वह तुमको दिखा देंगी। ख़ैर ख़ुदाबख़्श तो हमेशा का ढीठ है, मगर करीम का मारे शर्म के बुरा हाल था कि वहाँ पचासों तो औरतें भरी हुई हैं, मैं कैसे जा सकता हूँ दरवाज़े के क़रीब। अगर किसी ने आवाज़ सुन ली मेरी तो क्या कहेंगी दिल में कि कैसा बेशर्म मर्द है। सिद्दीक़ भाई ने कहा—"हाँ हाँ, तुम सचमुच न जाओ। यह कोई नहीं समझेगी कि यह मियाँ ख़ुदाबख़्श हैं या मियाँ करीम। सब यही कहेंगी कि कोतवालिनी साहबा के यहाँ के मर्द कैसे बेशर्म हैं।"

बच्ची के जन्म दिन से लेकर छट्ठी के दिन तक घर में ख़ासी चहल-पहल रही। छट्ठी भी बड़ी धूम-धाम से मनाई गई। अनेक थानेदारनियाँ बधावा लेकर आईं और जमाल आरा बहन ने तो कमाल ही कर दिया। इतने बड़े जुलूस के साथ बधावा लेकर आईं कि सारे शहर ने यह जुलूस देखा होगा। सात-आठ क़िस्म के तो बाजे थे, फिर बच्चे के कपड़े, ज़ेवर, चाँदी के चट्टे-बट्टे, सोने के झुनझुने, पालना, प्रम्बलेटर और बड़ी ही अच्छी जाति की बकरियाँ भी थीं। मालूम यह हुआ कि ये बकरियाँ बच्चे को दूध पिलाने के लिये छट्ठी में साथ जाती हैं। हमने

इस तकलीफ़देह तकल्लुफ़ के खिलाफ़ बहुत शोर मचाया। लेकिन सिद्दीक़ भाई ने घर में हमको और जमाल आरा बहन ने बाहर बेगम को डाँट-डपट कर चुप कराया। उन दोनों मियाँ बीवी को सचमुच बड़ी खुशी थी। अगर अपने सगे होते तो शायद वह भी इतने ही खुश होते। छठी के बाद छोटा नहान और बड़ा चिल्ला भी सकुशल हो गया और बड़े चिल्ले के बाद अब समझिये कि बेगम का काम जिस क़दर था वह ख़तम हो चुका था और अब यहाँ से हमारी ज़िम्मेदारी शुरू होती थी। बेगम ने बड़े चिल्ले के दूसरे ही दिन अपनी नौकरी का चार्ज ले लिया और बच्ची के पालन पोषण के ज़िम्मेदार अब हम हो गये। इस सिलसिले में भी हमको सिद्दीक़ भाई के मशविरों की क़दम-क़दम पर ज़रूरत होती थी। लेकिन जिसने भी कहा है बिलकुल सच कहा है कि मुश्किल दरअसल ख़ुद मुश्किल नहीं होती बल्कि उसका ख़याल मुश्किल होता है। नहीं तो वह तो जब आ पड़ती है, फ़ौरन आसानी में बदल जाती है। चुनांचे थोड़े ही दिनों में बच्ची की नियमित रूप से देख-भाल हम करने लगे। जिसको इस कल्पना मात्र से कँपकँपी आ जाती थी कि बच्चे पालना पड़ेंगे, उसे अब मां बनकर बच्ची को पालना पड़ रहा था। बच्ची के दूध के समय हमने नियत कर लिये थे। सुबह उठते ही मा के पास ले जाकर दूध पिलवा लेते थे। फिर जब बेगम तैयार होकर बाहर जाने लगती थीं, दूध पिलवा लेते थे। बीच में एक बार वह बाहर से ख़ुद आ जाया करती थीं दूध पिलाने। फिर तीसरे पहर और इसी तरह बँधे हुए वक़्तों पर दिन-रात में छः बार दूध दिया जाता था। रात को भी बच्ची हमारे ही पास रहती थी। शुरू-शुरू में दो बार और फिर रात को एक ही बार बेगम को दूध पिलाने की तकलीफ़ देते थे। रह गई बाक़ी देख-भाल, उससे बेगम को कोई मतलब न था। हम ही उसको नन्हे से टब में नहलाते थे, जिस्म पर पाउडर

लगाते थे, ग्लीसरीन से ज़बान साफ़ करते थे, ग्राइप वाटर देते थे। रात को रोये तो थपकते थे, सहलाते थे, चुमकारते थे और अपनी नींद उसके आराम पर तजे हुए थे। वह जैसे-जैसे बढ़ती जा रही थी, उसकी ज़रूरत भी बढ़ रही थी, मसलन अब हमको उसके लिये स्वेटर बुनना पड़ते थे, फ्राकें बनानी पड़ती थीं और दिन-रात उससे बातें करना पड़ती थीं। बड़ी ही अजीब क़िस्म की बातें, बे सिर-पैर की, जैसे—आगूँ गट्टे बेबी मारे ठट्टे। वह रो रही है और हम कंधे से लगाये टहल-टहल कर गा रहे हैं :—

"अपनी बिटिया को मैं रोने न दूँगा
आये सौदागर गुड़िया ले दूँगा।"

उसको पैरों पर औंधाकर झुञ्झू झोटे कर रहे हैं :—

"झुञ्झू झोटे, मम्मा सोटे
मुमानी ने कहा सोने के होटे"

और साहबज़ादी ज़रा हँस दीं तो जैसे सारी क़ीमत वसूल हो गई। वह सोना चाहती हैं और हम लोरियाँ गा रहे हैं :—

"आजा री निंदिया तू आ क्यों न जा
बेबी को मेरी सुला क्यों न जा।"

आज उनको क़ब्ज़ है और हम पेट बजा-बजा कर उभार का अन्दाज़ा कर रहे हैं। हींग मल रहे हैं पेट पर। आज उनको सर्दी की शिकायत हो गई है और हम कुकरौंदे की पत्ती का अर्क़ निकाल कर उनको पिला रहे हैं। आज उनकी पसली चल रही है और हम बारा-सिंघा घिसते फिर रहे हैं, क़ैसूर्ता ढूँढते फिरते हैं। कभी पैरों पर बिठाये सिस्कार रहे हैं, कभी गोद में लिये चुमकार रहे हैं। कभी उनको

उछाल रहे हैं और कभी उनको लिये ख़ुद उछल रहे हैं। बेगम को उनकी ख़बर नहीं, बल्कि पहले तो दूध के सिलसिले में पाबन्दी भी थी लेकिन धीरे-धीरे उनकी सरकारी मसरूफ़ियतें बढ़ती गईं और अन्त में हमको ऊपर के दूध पर बच्ची को लगाना पड़ा। सारांश यह कि अब बच्ची को बेगम से कोई वास्ता ही न रहा और वह सोलह आने हमारे ज़िम्मे होकर रह गई। हमको ख़ुद ताज्जुब है कि हमको उसे रखना, उसकी देख-भाल करना और उसकी ज़रूरतों को समझना किस तरह आ गया। अलबत्ता एक बार जब उसने बुरी तरह रोना शुरू किया और हम पेट के दर्द के सारे इलाज कर चुके और वह चुप न हुई तो सिद्दीक़ भाई को फिर बुलाना पड़ा और उन्होंने आते ही बताया कि तुमने असावधानी से इसे उठाकर इसकी हँसुली उखाड़ दी है। आख़िर उन बेचारे ने हँसुली बिठाई। इसके बाद कई बार मोढ़े उखाड़े और ख़ुद ही बिठाये। हँसुली भी एकाध बार और उखड़ी लेकिन हमने आप ही बिठाली। ख़ैर, यह ज़माना तो किसी न किसी तरह गुज़र गया। जब उसके दाँत निकलने को हुए तब उसकी हालत बहुत ख़राब हो गई। ऊपर के दांतों में आँखें ख़ूब दुखीं और नीचे के दांतों में तो दस्तों ने उसको बिलकुल लथपथ कर दिया। अच्छी-ख़ासी गोल-मटोल डबल रोटी जैसी लौंडिया सूख कर काँटा हो गई। लेकिन सिद्दीक़ भाई के चुटकुलों से कुछ ही दिन में फिर ठीक होना शुरू हो गई। हाँ, हमारे लिये अब न दिन को आराम था न रात को नींद। बेगम बड़े मज़े से घोड़े बेचकर सोया करती थीं और हम सारी-सारी रात गद्दे बदलने में, लँगोट बाँधने और खोलने में, थपकियाँ देने और चुमकारने में, लोरियाँ सुनाने और बहलाने में गुज़ार देते थे। शायद बाप की इन्हीं सेवाओं के कारण नाज़ुकिस्तान में मशहूर था कि बाप के पैरों तले जन्नत है। मां के दूध और बाप की सेवा का हक़ बिलकुल बराबर था। मां बच्चे

को यह कहकर धमकाती थी कि दूध न बख़्शूँगी और बाप यह कह सकता था कि ख़िदमत न बख़्शूँगा। लेकिन फिर भी वंश चलता था मां के नाम से। सारे अदालती और सरकारी काग़ज़ात में बाप के नाम के ख़ाने में मां का नाम लिखा जाता था। ख़ैर, हम इन मेवाओं से ख़ुश थे। हमारी बच्ची जिसका नाम अक़ीक़ (मूँडन) के दिन "शौकिया" रख दिया गया था, बड़ी ही दिलचस्प बच्ची बन गई थी। बैठने के अलावा कुछ-कुछ रेंगने भी लगी थी। हम उसके सामने बहुत से खिलौने ढेर कर दिया करते थे। वह बैठी खेला करती थी और हम कुछ न कुछ सीते-पिरोते रहते थे। अब तो वह बच्ची हमको ख़ुद अपना खिलौना महसूस होने लगी थी। बेगम के बाहर जाने के बाद उसी बच्ची से हम दिल बहलाते थे और दिन का पता न चलता था कि कब शुरू होकर कब ख़त्म हो गया। ख़ुदा रक्खे बड़ी ही हँसमुख बच्ची थी। रोना तो जैसे जानती ही न थी जब तक कि उसे कोई तकलीफ़ न हो। लेकिन अब घर के बाक़ी कामों में हिस्सा लेते हुए हमको ज़रा मुश्किल महसूस होती थी। फिर भी वे काम भी करना ही पड़ते थे। अब काम करने का यह ढंग हो गया था कि बच्ची गोद में सो रही है और हम बेगम के माँगने पर बाहर भेजने के लिये ख़ासदान में पान बना-बनाकर रख रहे हैं। उसको कंधे से लगाये हुए हैं और बेगम के लिये खाना भी निकालते जाते हैं। वह कलेजे से चिमटी हुई है और हम मशीन पर बैठे बेगम की साड़ी में फ़ीता टाँक रहे हैं। कभी-कभी बेगम भी साहबज़ादी का दुलार किया करती थीं। मगर बस इस तरह कि बाहर से आईं, गोद में लिया, चुमकारा "अरी तू बड़ी शरीर है, बिलकुल अपने बाप की तरह। मां की परछाईं भी पड़ती तो पाक हो जाती।"

हम कहते—"और क्या, अच्छा पूछ लो, किसकी बेटी है?"

बेगम कहतीं—"हमारी शौकी किसकी बेटी है ?"

वह बड़ा सा मुँह खोल कर कहती—"आबू।"

और हम ख़ुश हो जाते। बेगम भी शिष्टतावश पहले तो हँस देतीं. और फिर लौंडिया को एक तरफ़ लिटाकर कहतीं "अरे अरे, बड़ा ग़ज़ब किया इसने, पेशाब कर दिया।"

लीजिये दुलार ख़त्म। लौंडिया फिर हमारे पास और वह ग़ुसलख़ाने में।

ग्यारह

आजकल बेगम बहुत अधिक व्यस्त थीं। देश में एक क़ानून तोड़ने वाली पार्टी पैदा हो गई थी जिसने बड़े जोर शोर से 'मर्द राज' का आन्दोलन शुरू कर दिया था और सरकार की ओर से इस आन्दोलन को विद्रोहात्मक कहकर कुचलने का पूरा प्रयास किया जा रहा था। इस आन्दोलन की सबसे बड़ी नेत्री मोहिनी देवी थीं। आजकल सारे अखबार इसी आन्दोलन के पक्ष या विरोध में भरे होते थे। हमारी समझ में नहीं आता था कि आखिर इस आन्दोलन का उद्देश्य क्या है और सरकार ने इस आन्दोलन को विद्रोहात्मक क्यों कह दिया है। आखिर एक दिन जब उसी आन्दोलन के सिलसिले में एक जलसे में बेगम गोली चलवाकर और गिरफ़्तारियाँ करके रात को घर आईं तो हमने उनसे पूछा—"आखिर यह तूफ़ान है क्या और इन विद्रोहिनियों का मक़सद क्या है ?"

बेगम ने कहा—"तुम्हारी समझ में न आयेगी। ये राजनीतिक बातें हैं।"

हमने बुरा मान कर कहा—"बताने से सब कुछ समझ में आ सकता है। मगर आप तो कोई बात बताना ही नहीं चाहतीं।"

बेगम ने वर्दी उतारते हुए कहा—"अरे साहब, यह पार्टी हुकूमत का तख़्ता उलटना चाहती है। इन्क़लाबी पार्टी है, एकदम से काया पलट चाहती है। इस आन्दोलन की सरग़ना मोहिनी देवी का मक़सद

यह है कि जिस तरह यहाँ औरतों का राज है उसी तरह मर्दों का राज होना चाहिये और औरतों को मर्दों की तरह घर में घुस कर बैठना चाहिये। वह कहती हैं कि मर्द औरतों के अच्छे रक्षक, देश के अच्छे शासक, फ़ौज के अच्छे सिपाही और हर मैदान में औरत से अच्छे साबित हो सकते हैं और औरतें सारे घरेलू मामलों में मर्द से अच्छी घरवालियाँ साबित हो सकती हैं।"

हमने कहा—"कहती तो ठीक हैं बेचारी।" बेगम ने कहा—"यह कहोगे तो मैं अभी तुमको गिरफ़्तार कर लूँगी। आज ही जलसे में पचास के क़रीब मर्द भी गिरफ़्तार हुए हैं। इस आन्दोलन का एक नतीजा यह भी हो रहा है कि घरों में बैठने वाले मर्द बाहर निकल रहे हैं। बेवक़ूफ़ तो बेवक़ूफ़। वे यह समझते हैं कि यह मूर्खतापूर्ण आन्दोलन सचमुच कामियाब हो सकता है और नाज़ुकिस्तान में मर्दों का राज क़ायम हो सकता है। ख़ैर, मर्दों से तो कोई ताज्जुब नहीं, इसलिये कि बेचारे नासमझ होते हैं, जो उनको समझा दिया गया, समझ लेते हैं। लेकिन ताज्जुब तो होता है उन औरतों पर जो मर्द राज के नारे लगाती हैं। आख़िर वह क्या समझकर इस आन्दोलन में शामिल हुई हैं?"

हमने कहा—"आज दैनिक 'सहेली' में कोई ख़लीक़ुन्निसा बेगम साहबा हैं, उनका बहुत ज़बरदस्त बयान छपा है।"

बेगम ने कहा—"अच्छा? मैंने नहीं देखा। कहाँ है अख़बार, ज़रा लाओ तो सही।"

हमने कहा—"अब खाना खा लेतीं। इसके बाद अख़बार भी देख लेना। सारा दिन होगया। योंही ज़रा सा नाश्ता किये हुए निकली हो।"

बेगम ने कहा—"मैं खाना खाती हूँ। तुम ज़रा वह बयान पढ़कर

सुना दो। वह बड़ा ज़रूरी बयान है। मुझे तो इन बेगम साहबा के किसी बयान का इन्तज़ार ही था।"

बेगम खाने पर बैठ गई और हमने दैनिक 'महेली' लाकर ख़्लीक़ुन्निसा बेगम का बयान पढ़ना शुरू किया:—

"सच बोलती हूं झूठ की आदत नहीं मुझे"

मुझसे कहा जा रहा है और बड़े इसरार से कहा जा रहा है कि मैं मर्दराज आन्दोलन के बारे में अपनी राय ज़ाहिर करूं। एक तरफ़ ज़बान बन्द रखने के क़ानून और सरकार की वहशियाना सख़्ती है। मगर यह ताक़त ख़ुदा ने सिर्फ़ सच ही को प्रदान की है कि वह सूली के तख़्ते पर भी सच ही रहता है। इसलिये सरकार की यह कोशिश कि वह तलवार दिखा कर सच्चाई को डरा देगी, सिवाय घबराहट और पागलपन के और कुछ नहीं। मर्द राज के समर्थन में जो ठोस दलीलें हैं उनका जवाब अगर ताक़त के बेजा इस्तेमाल से न किया जाता तो समझने और समझाने का मौक़ा भी पैदा हो सकता था। बहुत मुमकिन था कि औरतों के राज के समर्थन में भी कुछ पहलू निकलते और अगर सरकार को अपने मौजूदा निज़ाम पर ऐसा ही भरोसा था तो उसको चाहिये था कि मर्दराज आन्दोलन को कुचलने की कोशिश के बजाय मौजूदा निज़ाम के समर्थन के लिये हमको दलीलों से क़ायल करती। लेकिन दलीलों का जवाब ताक़त से देना अपने में खुद हार मानने का इक़रार करना है। और इसके मानी सिवाय इसके और कुछ नहीं कि सरकार बौद्धिक रूप से हमको क़ायल करने में असमर्थ रहकर अपनी ताक़त के ज़रिये ख़ामोश करना चाहती है। बहुत मुमकिन है कि सरकार का यह व्यवहार कुछ देर के लिये लोगों की ज़बान बन्द करने में सफल हो जाय लेकिन वह इस जज़्बे को

हमेशा के लिये जगा देगा कि सरकार के पास सचाई को दबाने के लिये पुलिस के डडों और फौज की तोपों व बन्दूकों के सिवाय कोई उचित जवाब न था। अगर मैं यह कहूँ तो ग़लत नहीं होगा कि इस आन्दोलन को बढ़ाने, इस आन्दोलन की सचाई को ज़ाहिर करने और इस आन्दोलन से जन-साधारण में हमदर्दी पैदा करने के लिये सरकार का यह विरोधी रुख ही वास्तव में दोस्ताना रुख है और उसके इसी रुख से इस देश में इस आन्दोलन की जड़ें मज़बूत होंगी। शायद सरकार को इसकी ख़बर नहीं है कि किसी राष्ट्रीय आन्दोलन में शहीद होने वालियाँ मरती नहीं बल्कि बोई जाती हैं। वे मिट्टी में मिलकर अपनी ही जैसी हज़ारों देश सेविकाएँ इस तरह पैदा कर देती हैं जिस तरह एक बीज ज़मीन में जाकर हज़ारों फल और फूल दे देता है। हमारा राष्ट्रीय आन्दोलन हमारे क़ौमी नारों से कहीं ज़्यादा हुकूमत की तलवार की झनकारों से जाग रहा है और जागेगा।

'मर्दराज' का समर्थन मैं कर रही हूँ। मैं औरत हूँ, मेरे सीने में एक औरत का दिल है और उसी दिल से यह सचाई उमड़ कर मेरी क़लम की ज़बान पर आ रही है कि मर्द का राज्य प्रकृति की इच्छा के सर्वथा अनुकूल है। कोई कमज़ोर किसी शहज़ोर का रक्षक नहीं हो सकता। औरत और मर्द की शारीरिक बनावट ही उस दावे का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि औरत घर में बैठ कर मर्द के दिल पर राज करने के लिये बनाई गई है और मर्द ज़िन्दगी से लड़ने और ज़िन्दगी की मुश्किलों का मुक़ाबला करने के लिये दुनिया में आया है। हमको नाज़ुकिस्तान में हर तरह की आज़ादी हासिल है मगर हमारे दिलों को इत्मीनान नहीं है। हमको इस तृप्ति के बावजूद एक तृष्णा का अनुभव होता है। वास्तव में वह कमी है प्रेम की, मुहब्बत की; वह कमी है नाज़बरदारियों की; वह कमी है नाज़ व अन्दाज़ की जो औरत के जन्मजात

अधिकार हैं। औरत अपनी प्रकृति से ही प्यासी होती है मर्द की ओर से की जाने वाली पूजा की, मर्द की तरफ़ से आग्रह और अपनी ओर से आग्रह को तीव्र बनाने के इनकार की। वह चाहती है, वह साकार नाज़ हो और मर्द उसका नाज़बरदार, मर्द उस पर और वह मर्द के दिल पर हुकूमत करे। नाज़ुकिस्तान ने छिछली आज़ादी और नुमायशी हुकूमत तो हासिल करली पर औरत की इन प्राकृतिक माँगों को नेस्त-नाबूद कर दिया है। फिर भी आख़िर कहाँ तक काग़ज़ की नाव चले, अब उसके डूबने का वक़्त आ चुका है और प्रकृति की इच्छा के ख़िलाफ़ सरकार ने जो व्यवस्था बना रक्खी है, वह बहुत जल्द बिखरने वाली है। हम कुछ दिखावे के अधिकारों के बदले अपनी प्राकृतिक माँगों को नज़रन्दाज़ नहीं कर सकते।"

बेगम ने बड़े ग़ौर से इस बयान को सुना और खाना खाती रहीं। जब हमने बयान पढ़कर ख़त्म किया तो बेगम ने बड़े चिन्तित स्वर में कहा—"बड़ा ज़हरीला बयान है। हो सकता है कि मुझे आज ही ख़लीक़ुन्निसा बेगम की गिरफ़्तारी का हुक्म मिल जाय और 'सहेली' अख़बार के दफ़्तर पर भी छापा मारना पड़े। यह आन्दोलन रंग लाकर रहेगा। सुना है कि बेगमगंज में तो कर्फ़्यू आर्डर तक लगाया जा चुका है।"

बेगम ये बातें कर ही रही थीं कि बाहर से बड़े ज़ोर के नारों की आवाज़ आने लगी—"इन्क़लाब ज़िन्दाबाद", "मर्दराज ज़िन्दाबाद" "मोहनी देवी ज़िन्दाबाद" "ख़लीक़ुन्निसा ज़िन्दाबाद" "गोलियाँ चलाने वालियों का नाश हो" "पुलिस पर झाड़ू फिरे" "सरकार का मुर्दा निकले।" बेगम ने तुरन्त कोठे पर चढ़कर हमको आवाज़ दी और हम भी कोठे पर आ गये जहाँ से सब कुछ साफ़ नज़र आ रहा था। कोतवाली के फाटक पर हज़ारों औरतों की भीड़ थी, जो एक

झंडा लिये खड़ी नारे लगा रही थीं। झंडे पर कुछ झाड़ू सी बनी हुई थी। हमने बेगम से पूछा—"यह झंडे पर झाड़ू सी क्या बनी है?"

बेगम ने मुस्कराकर कहा—"यह झाड़ू नहीं मूँछ है। इसका मतलब है कि यह इन्क़लाबी पार्टी मूँछ राज चाहती है, यानी मर्दराज।"

बेगम हमको समझा ही रही थीं कि उस मजमे ने कोतवाली के सामने ही एक जलसे का रूप धारण कर लिया और एक नवयुवती ने एक ऊँची जगह पर खड़े होकर ये जोशीली कविता पढ़नी शुरु करदी :—

जान देने आये हैं हम सर कटाने आये हैं
हम कफ़न बाँधे हुए हैं जिस्म सर पर लाये हैं।

ज़िन्दगी का नाच होगा गोलियों की मार में
चूड़ियाँ खनकेंगी अब तलवार की झनकार में।

हम हुकूमत को भी अब नाकों चने चबवायेंगे
वह हमें रौंदेगी और हम लहलहाते जायँगे।

मौत ही को ज़िन्दगी अपनी बनाना है हमें
गोलियाँ सीनों पे खाकर मुस्कराना है हमें।

औरतों के हाथ ही अब औरतों की लाज है
इम्तहाँ का वक़्त सुन लो, औरतों, तुम आज है।

औरतों के सर पै बेढंगा सा है मर्दों का ताज
हमको मर्दों के लिये लेना पड़ेगा मर्दराज।

इस कविता के बाद फिर "मर्दराज ज़िन्दाबाद, इन्क़लाब ज़िन्दाबाद, मोहनी देवी ज़िन्दाबाद, ख़लीक़ुन्निसा ज़िन्दाबाद, पुलिस पर झाडू फिरे, सरकार का मुर्दा निकले, गोलियाँ चलाने वालियों का नाश

हो " के नारे लगने लगे और एक दूसरी महिला ने बड़े जोशीले भाषण में आज के जल्से में गोली चलाने पर पुलिस को और बेगम का नाम लेकर उनको, बहुत ही सख़्त-सुख़्त कहा और बेगम खड़ी मुस्कराती रहीं। आख़िर जब भाषण करने वाली ने अपने जोश में यह कहा:—

"औरतो !

तुम्हारी ग़ैरत कहाँ है? तुम्हारा इन्तक़ाम का जज़्बा कहाँ सो रहा है? तुम्हारी बहनों को पुलिस ने जिस बेरहमी के साथ गोलियों का निशाना बनाया, उसका बदला लेने का वक़्त यही है। तुमको अगर मारना नहीं आता तो मरना क्यों भूल रही हो......।"

इस भाषण को अधूरा छोड़ कर बेगम नीचे उतर आई और पहले तो टेलीफ़ोन पर किसी से बातें करती रहीं, इसके बाद जल्दी-जल्दी वर्दी पहनकर रिवाल्वर भरा और बाहर निकल गई। यहाँ डर के मारे हमारा बुरा हाल था। सोच रहे थे कि न जाने क्या होने वाला है। हम फिर कोठे पर चढ़ गये। बेगम ने बाहर जाकर पहरा और भी कड़ा कर दिया और मजमे को छँट जाने की बराबर सलाह दे रही थीं पर मजमा कोतवाली पर हमला करने के भयानक इरादे से एकत्र हुआ था। इतने में घुड़सवार पुलिस का एक बहुत बड़ा दल आ पहुँचा और सवारनियों ने मजमे को दूर तक हटा दिया। परन्तु भीड़ भंग न हो सकी। आख़िर बेगम ने हवाई फ़ायर करने का हुक्म दिया जिसका नतीजा कुछ अच्छा निकला। हर तरफ़ से 'ऊई ऊई' कह कर भागने वालियों की आवाज़ें आने लगीं। कुछ बाक़ी रह गई थीं। उनमें वह भाषणदेने वाली और कविता पढ़ने वाली भी थीं। उन दोनों को गिरफ़्तार करने के बाद शेष भीड़ को सवारनियों ने तितर-बितर कर दिया। सारी रात कोतवाली पर ज़बरदस्त पहरा रहा। बेगम भी रात भर वर्दी पहने

[खुदा-न-ख्वास्ता

. अपनी कार पर शहर का गश्त करती रहीं और सारी रात जाग कर बितादी। इधर घर में हमको मारे डर के नींद न आ सकी कि .खुदा जाने कब कोतवाली पर हमला हो जाय। लेकिन रात सकुशल बीत गई।

बारह

एक तरफ़ तो नाज़ुकिस्तान में इस आन्दोलन का ज़ोर था, सारे देश में जैसे आग सी लगी हुई थी, जेलों में जगह न रही थी और दूसरी तरफ़ मुसीबत यह थी कि नाज़ुकिस्तान विधान सभा के चुनाव सर पर थे। एक तूफ़ान मचा था बल्कि बेगम का तो ख़याल था कि मर्दराज का आन्दोलन इसी चुनाव की वजह से है। मर्दराज आन्दोलन के टिकट पर उम्मीदवारनियाँ खड़ी होंगी और चुनाव लड़ेंगी। आज-कल अख़बारों में भी इसी तरह का प्रचार हो रहा था। दैनिक 'सहेली" की सम्पादिका स्वयं मर्दराज दल की थीं। और उनका अख़बार मर्दराज आन्दोलन का सबसे बड़ा वकील था। पूर्ण मर्दराज की मंज़िल तो ख़ैर अभी दूर थी लेकिन मर्दराज दल की इस वक़्त सबसे बड़ी कोशिश यह थी कि विधान सभा में उसका बहुमत रहे जिसमें कि तलाक़ अधिकार, बेपर्दगी का अधिकार, नागरिक अधिकार आदि मर्दों को भी दिला सके और स्वयं विधान सभा में मर्दों के लिये कुछ सीटें सुरक्षित हो सकें। लेकिन सरकार की तरफ़ से पूरी कोशिश हो रही थी कि मर्द को इनमें से एक भी अधिकार न मिलने पाये। यदि मर्द को कोई एक भी अधिकार मिल गया तो वह सरकार और इस सारे निज़ाम का तख़्ता उलट कर रख देगा। सरकार के इशारे पर कुछ और संस्थाएँ भी पैदा हो गई थीं जैसे 'पुरुष पर्दा रक्षक दल' जिसका उद्देश्य यह था कि चाहे कुछ भी हो, मर्द का पर्दा हर हालत में क़ायम रहे और उन सारे

आन्दोलनों का मुक़ाबिला किया जाय जो मर्द की आज़ादी और बेपर्दगी का आन्दोलन लेकर उठी है। यह पार्टी सीधी मर्दराज पार्टी से टक्कर लेने के लिये उठी थी और चुनाव में अपनी उम्मीदवारनियाँ भी खड़ी कर रही थी। एक तीसरी पार्टी 'आल नाज़ुकिस्तान इन्डीपेन्डेन्ट लीग' के नाम से संगठित हुई थी। इस पार्टी का उद्देश्य यह था कि वर्त्तमान राष्ट्रनेत्री अपने पद पर किसी प्रकार बनी रहें। यह लीग वास्तव में उन्हीं के रुपये के सहारे से मैदान में आई थी लेकिन सर्वसाधारण का विचार था कि इस बार उनका अपने पद पर बना रहना सम्भव नहीं है इसलिये कि मर्दराज दल का बहुमत हुआ तो राष्ट्रनेत्री भी उसी दल की कोई महिला होगी और अगर पुरुष पर्दा रक्षक दल को कामयाबी हुई तो भी उसका बहुमत होना मुश्किल होगा। सारांश यह कि सारे देश में चुनाव की आग लगी हुई थी। राधानगर से मर्दराज दल के टिकट पर ख़लीक़ुन्निसा बेगम खड़ी हुई थीं। पुरुष पर्दा रक्षक दल की ओर से अख्तर ज़मानी बेगम उम्मीदवार थीं और आल नाज़ुकिस्तान इन्डिपेन्डेन्ट लीग के टिकट पर सरदारिनी साहबा जगत कौर खड़ी हुई थीं। दैनिक 'सहेली' में ख़लीक़ुन्निसा बेगम साहबा के समर्थन में रोज़ाना कालम के कालम स्याह नज़र आते थे। और एक दूसरे स्थानीय दैनिक 'सुरैया' में अख़्तर ज़मानी बेगम साहबा का समर्थन बड़े ज़ोर-शोर से हो रहा था। इन्डिपेन्डेन्ट लीग का कोई अख़बार न था, लेकिन यह दल भी काफ़ी ज़ोर बाँधे हुए था। हमको ये सारी ख़बरें कुछ अख़बारों से और कुछ बेगम की ज़बानी मालूम होती रहती थीं। शहर में बहुत बड़े-बड़े जलसे हो रहे थे और हर जलसे में झगड़ा होने की हर वक़्त आशंका रहती थी। इसलिये कि बेगम के कथनानुसार सारी बोलने वालियाँ एक दूसरे के दुपट्टे उछालने की फ़िक्र में रहती थीं और विरोधी दल यह कोशिश करते थे कि जलसा ख़राब हो जाय। आख़िर

वही हुआ जो बेगम कह रही थीं यानी एक दिन पुरुष पर्दा रक्षक दल के जलसे में एक बोलने वाली ने ख़्वली कुन्निसा पर कुछ व्यक्तिगत हमले शुरू कर दिये कि उनका मक़सद तो यह है कि ऐयाशियों और बदमाशियों के दरवाज़े खुल जायँ। मर्द पर्दे के बाहर आ जायँ और उनका पहलू गर्माने के लिये उनके साथ असेम्बली और पार्लियामेन्ट में बैठें। अगर उनको ऐसा ही शौक़ है और वह ऐसी ही आपे में बाहर हैं तो दुराचार के द्वार आज भी बन्द नहीं हैं। सिर्फ़ उचित और अनुचित का फ़र्क़ है। पर वह चाहती हैं कि अनुचित ऐय्याशी के लिये रास्ता साफ़ हो जाय। हालाँकि इसका नतीजा इसके सिवाय और कुछ नहीं हो सकता कि हमारे पर्दानशीन मर्दों का नैतिक पतन हो जायगा। यह मर्दराज आन्दोलन यदि थोड़ा भी सफल हुआ तो सारे देश में बेशर्मी और बेहयाई का वह तूफ़ान आयेगा कि भली औरतों के लिये सिवाय मर जाने के, जान दे-देने और आत्म-हत्या कर लेने के दूसरा कोई उपाय न रहेगा। समझ में नहीं आता कि उनका स्वाभिमान और आत्मसम्मान यह कैसे स्वीकार कर लेगा कि उनके घर के मर्द न सिर्फ़ अन्तःपुर से बाहर आजायें बल्कि परस्त्रियों के साथ-साथ विधान सभा में जाकर बैठें। तेल और आग के मेल का जो नतीजा हो सकता है वह ज़ाहिर है। लेकिन मर्दराज आन्दोलन की समर्थक शौक़ीन और रंगीन मिज़ाज औरतें अपने भोग-विलास पर अपनी इज़्ज़त को भी तिलांजलि देने का फ़ैसला कर चुकी हैं। वे भले बेटों दामादों को घरों से बाहर खींच लेना और अपनी बग़ल गर्म करना चाहती हैं। इस प्रकार का भाषण देने के बाद ख़्वलीक़ुन्निसा बेगम का नाम लेकर कहा गया कि आख़िर वह ख़ुद अपने घर के मर्दों को, अपने बेटों और दामादों को बाहर निकाल कर औरतों के सामने क्यों नहीं करतीं।

यह सुनना था कि मर्दराज आन्दोलन की समर्थक औरतें सहन न कर सकीं और एक तरफ़ से 'चुप रहो, चुप रहो, बैठ जाओ, बैठ जाओ' का शोर मच गया। फिर 'ख़लीक़ुन्निसा बेगम ज़िन्दाबाद' 'मर्दराज ज़िन्दाबाद' के नारे लगाये गये। इधर से इन नारों का जवाब दिया गया. 'मर्दराज नाश हो' 'मर्द का पर्दा या औरतों की मौत' 'ख़लीक़ुन्निसा डूब मरे' 'मोहनी देवी मुर्दाबाद।'

अन्त में ढेलेबाज़ी हुई। दोनों तरफ़ की औरतों में झोटम-झोटा हुई और अन्त में पुलिस को हस्ताक्षेप करके शान्ति स्थापित करनी पड़ी। मर्दराज दल को वहाँ से हटाया गया तो उसकी समर्थक औरतों ने एक दूसरे पार्क में तुरन्त सभा की और पुलिस तथा सरकार के इस पक्षपात की निन्दा की गई जो वह पुरुष पर्दा रक्षक दल के साथ सचमुच कर रही थी। जलसे में बड़ा जोश था। अन्त में स्वयं ख़लीक़ुन्निसा बेगम ने एक सुलझा हुआ भाषण देकर उपस्थित स्त्रियों को समझाया कि इस समय अगर आपने सरकार या पुलिस से टकराने की चेष्टा की. तो सरकार का असली उद्देश्य पूरा हो जायगा। वह आपको जेलों में. भेजकर अपना मनमाना चुनाव लड़ना चाहती है और हमको यह बता देना है कि देश में साधारण स्त्रियाँ सरकार के साथ नहीं हैं बल्कि हमारे साथ हैं। मुझे उन टोडी बच्चियों से कोई शिकायत नहीं है। वे तो ग्रामोफ़ोन हैं और उन पर रिकार्ड सरकार का बज रहा है। जो भाषण सुनकर आप सब नाराज़ हुई हैं उसमें मुझ पर व्यक्तिगत आक्षेप थे। लेकिन आक्षेप तो आपको देश और जाति के लिये—अपने उद्देश्य और अपने लक्ष्य के लिये ठंडे दिल से सुनना ही पड़ेंगे। बल्कि यही आक्षेप जनमत को हमारे पक्ष में कर देगा। मैं आप सब से अपील करती हूँ कि आप ख़ामोशी से अपने काम में लगी रहिये।

ख़लीक़ुन्निसा बेगम के इस भाषण के बाद सभी स्त्रियाँ छँट गई

और पुलिस कानिस्टिबिलनियों को अपनी बन्दूकों में निराश होकर वे कारतूस निकालने पड़े जो वे भर चुकी थीं।

इस तरह के जलसे होते रहे, जुलूस उठते रहे, अख़बारों के पन्ने काले होते रहे। सचमुच एक ने दूसरे की ख़ूब क़लई खोली। दैनिक 'सुरैया' ने लिखा कि ख़ली कुन्निसा बेगम मर्दों के साथ नाचती है। दैनिक 'सहेली' ने लिखा कि ख़ली कुन्निसा बेगम नहीं बल्कि अख़्तर ज़मानी बेगम के हरम में चार मर्द हैं।

हमने चौंक कर बेगम से पूछा—"क्या सचमुच अख़्तर ज़मानी बेगम के हरम में चार मर्द हैं?

बेगम ने बेपरवाही से कहा—"हाँ, हैं तो ज़रूर उनके चार शौहर। मगर इस में हर्ज ही क्या है, चार तो जायज़ हैं।

हमने दंग होकर कहा—"यानी एक औरत चार शौहर कर सकती है?

बेगम ने कहा—"क्यों, इसमें आपको कोई एतराज़ है? मेरी तरफ़ से कोई अन्देशा न कीजिये। मेरा इरादा फ़िलहाल बिलकुल नहीं है कि तुम्हारे सर पर कोई सौता लाऊँ। लेकिन यहाँ तो अनगिनत ऐसी औरतें मिलेंगी जिनके दो, तीन या चार शौहर हैं। किसी ने संतान के लिये दूसरी शादी कर ली है तो किसी ने जायदाद के लिये और किसी ने यों ही।"

हमने कहा—"साहब, यह चीज़ निहायत ग़लत है। और दो-चार मर्द यह जानते हैं कि उनकी बीवी के तीन शौहर और हैं?"

बेगम ने कहा—"क्यों, जानते क्यों नहीं हैं। अलबत्ता एक दूसरे से जलते बहुत हैं। जलने का माद्दा तो मर्द में होता ही है। वह सौतें को बरदाश्त ही नहीं कर सकता। बीबी का एक शौहर दूसरे शौहर के ख़ून का प्यासा होता है।"

हमने कहा—"और बेगम साहबा से कोई कुछ नहीं कहता कि यह क्या हरकत है?"

बेगम ने कहा—"तुमने तो अभी से मर्दराज शुरू कर दिया। गोया अब मर्दों में इतनी हिम्मत हो गई है कि वह अपनी मलिका, अपनी सरताज से यह पूछें कि तुमने 'दूसरी शादी क्यों की? यहाँ के बहुत से मर्द तो ख़ुद अपनी बीवियों से कह देते हैं कि अगर मुझसे तुम्हारे यहाँ बच्चा नहीं है तो तुम जहाँ चाहो शादी कर सकते हो।"

नाज़ुकिस्तान आकर और इतने दिनों यहाँ रहने के बाद यों तो हम इस ज़िन्दगी के आदी हो चुके थे मगर बेगम की ज़बानी यहाँ के इस रिवाज को सुनकर हाथों के तोते उड़ गये, पैरों तले से ज़मीन निकल गई। एक औरत के एक से ज़्यादा शौहर की तो कल्पना भी हम न कर सकते थे। सच पूछिये तो आज पहली बार जी चाहा कि किसी तरह हमको पर मिल जायें और हम यहाँ से उड़ जायें किसी तरफ़। नाज़ुकिस्तान से वहशत और नफ़रत सी होने लगी। और बेगम के जाने के बाद भी हम देर तक सोचते रहे कि अगर ख़ुदा न करे हमारी बेगम ने कभी दूसरी शादी का इरादा कर लिया तो हम इस बेशर्मी और बेइज़्ज़ती को क्योंकर बरदाश्त कर सकेंगे। इस सिलसिले में हमारी बेचैनी का अन्दाज़ा इसी से हो सकता है कि ख़ुदाबख्श और अब्दुल करीम तक से यह सवाल कर बैठे—

"क्यों ख़ुदाबख़्श, क्या यहाँ एक औरत कई-कई शादियाँ कर सकती है?"

ख़ुदाबख़्श तो ख़ैर एक ठंडी साँस भर कर रोआँसा हो गया लेकिन अब्दुल करीम ने कहा—"जी हाँ, एक औरत चार तक शादियाँ कर सकती है। इनकी ही बीवी ने दूसरी शादी करली है।"

हमने हैरत से कहा—".ख़ुदाब.ख़्श की बीवी ने? क्या वाक़ई इनकी बीवी का इनके अलावा कोई और शौहर भी है?"

अब्दुल करीम ने कहा—"इनके अलावा एक छोड़ दो और हैं?"

.ख़ुदाब.ख़्श ने कहा—".ख़ैर, दूसरे से शादी तो अब तक नहीं की है। योंही डाल लिया है उसको। लेकिन एक के साथ तो निकाह हो चुका है बल्कि दो बच्चे भी हैं उससे।"

हमने कहा—"और तुम यह बरदाश्त करते हो? यानी इसके बावजूद कहते हो कि वह कम्ब.ख़्त तुम्हारी बीवी है?"

.ख़ुदाब.ख़्श ने कहा—"ना सरकार ना। उनको कम्ब.ख़्त न कहिये। वह तो औरतज़ात हैं। उनको हक़ है एक छोड़ चार शादियाँ करने का। मेरे लिये तो यही बहुत है कि .ख़ुदा उनको सलामत रक्खे। उनके दम से मैं सुहागी हूँ। अलबत्ता क़यामत के दिन मैं इस बेइन्साफ़ी पर ज़रूर उनका दामन पकड़ूँगा कि उन्होंने दूसरा मर्द लाकर मुझे बिल्कुल भुला ही दिया है। उसके लिये सब कुछ है, मेरे लिये कुछ भी नहीं है। जिस घर में राजा बनकर रहा वहाँ मुझसे .ख़ुद अपने सौते की ग़ुलामी न हो सकी। बीवी ने मुझको मेरे मायके भेज दिया और फिर ख़बर न ली।"

अब्दुल करीम ने कहा—"मैं इसको बराबर समझाता हूँ सरकार कि तू रोटी कपड़े का दावा करदे अपनी बीवी पर, मगर यह तो है गधा। अच्छी-ख़ासी, खाती-पीती है सरकार। इसकी बीवी सौ रुपये महीने की पुलिस में नौकर है।"

.ख़ुदाब.ख़्श ने कहा—"पुलिस में नहीं, फ़ौज में सूबेदारिनी है। मैं भी सोचता हूँ हुज़ूर कि रोटी कपड़े का दावा किया तो कचहरी-अदालत में बदनामी किसकी होगी, अपनी बीवी की। उनकी बेइज़्ज़ती किसकी बेइज़्ज़ती है, मेरी। दूसरे एक वफ़ादार मियाँ का फ़र्ज़ क्या है?

यही तो कि जिसमें उसकी मलिका ख़ुश उसी में वह भी ख़ुश। सरकार, वक़्त पड़ गया है कि आपके यहाँ ख़िदमत कर रहा हूँ, वरना तक़दीर ख़राब न होती और उनकी नजरें मुझसे न फिर जातीं तो मैं ख़ुद घर के बाहर क़दम न निकालता। मेरी माँ तो आज चाहती हैं कि तलाक़ लेलें, मगर मैंने सबसे साफ़ कह दिया है कि एक भले मर्द का निकाह बस एक मर्तबा होता है। क़ाज़ी निकाह पढ़ाता है और मौत उसे तोड़ती है। वह जिस तरह ब्याह कर लाई थीं उसी तरह अगर अपने हाथ से मिट्टी भी ठिकाने लगादें तो इससे बढ़ कर मेरी ख़ुशक़िस्मती और क्या हो सकती है। लेकिन अब तो मालूम होता है जैसे क़िस्मत में यह भी नहीं है।"

इस बीच अब्दुल करीम किसी काम से उठकर गया तो हमने ख़ुदाबख़्श से कहा—"इस अब्दुल करीम की बीवी तो ठीक है?"

ख़ुदाबख़्श ने चुपके से कहा—"इसकी शादी कहाँ हुई है सरकार। जिस औरत के पास यह आज-कल है वह इसे भगाकर लाई है, इसकी ससुराल से और ख़ुद इसकी असली बीवी तो इसकी खोज में चाक़ू लिये घूमा करती है कि कहीं मिल जाय करीम तो इसकी नाक काट ले। मगर सरकार, इस कमबख़्त को भी न जाने क्या सूझी थी। अच्छी-भली बीवी को छोड़-छाड़ उस बदमाश औरत के साथ भाग निकला, जो दिन-रात तो नशे में चूर रहती है। इसकी एक-एक चीज़ बेचकर पी गई, मगर यह बेवक़ूफ़ है कि उस पर लट्टू है।"

इस बात-चीत से आज फिर इतने दिनों के बाद हमको यह मालूम हुआ कि जैसे हम किसी ख़्वाब की दुनिया में पहुँच गये हैं और यह सब ख़्वाब है।

तेरह

एक दिन बेगम ने बाहर से आकर हमको अलग ले जाकर कहा—"और भी कुछ सुना है? यह जो आपके नौकर हैं अब्दुल करीम, इनकी कहीं से एक बीवी पैदा हो गई हैं और वह मेरे पास आई हैं कि मैं उनके शौहर को उनके हवाले कर दूँ।"

हमने कहा—"हाँ, मुझे ख़ुदाबख़्श से मालूम हो चुका है कि यह कमबख़्त अपनी बीवी को छोड़कर किसी और बदमाश औरत के साथ भाग आया है।"

बेगम ने कहा—"मगर तुमने मुझे ख़बर न की। ऐसे मर्द को तो घर में रक्खा ही नहीं जा सकता जो इस हद तक आवारा हो चुका हो कि एक बीवी के होते हुए दूसरी औरतों के साथ भागा-भागा फिरे।"

हमने कहा—"मगर पहले जाँच तो कर लो। हो सकता है कि उसकी बीवी की ही कुछ ज़्यादती हो।"

बेगम ने कहा—"क्या कहना है आपका? बीवी की ज़्यादती क्या हो सकती है? यह ख़ुद ही बदमाश है। और फ़र्ज़ कर लो कि ज़्यादती भी सही, तो क्या किसी ग़ैर औरत के साथ भाग आना जायज़ कहा जा सकता है?"

हमने कहा—"फिर अब क्या करोगी? अगर वह ले गई अपने मियाँ को तो हमारे यहाँ का एक पुराना नौकर गया। नये नौकर ज़रा

मुश्किल से मतलब के होते हैं। और आजकल नौकर मिलने में जो मुसीबत हो रही है वह तुम जानती हो।"

बेगम ने कहा—"अजी वह तो इस फ़िक्र में फिर रही थी कि यह हज़रत मिलें तो इनकी नाक मूँछ काट ले। वह तो कहिये कि उसको समझा बुझाकर मैंने बहुत कुछ धीमा कर दिया है और वह इसपर राज़ी हो गई है कि अगर आप उसको उस औरत के पंजे से छुड़ा दें जो उसको भगा लाई है तो शौक़ से अपने यहाँ नौकर रख सकते हैं, पर वह उससे मिलना ज़रूर चाहती है। मैं भी यह चाहती हूँ कि सचमुच उसको उसकी बीवी के हवाले कर दिया जाय। वह थोड़ा बहुत मार-पीट कर उसे फिर हमारे हवाले कर देगी। और उस शराबिन को तो मैं आज ही गिरफ़्तार कराती हूँ। ज़रा तुम अब्दुल करीम को कुछ कहे बग़ैर मेरे पास बुला लाओ।"

हमने जाकर करीम से कहा—"आओ, तुमको सरकार बुलाती हैं।"

उसे क्या पता था कि क्यों बुलाया गया है। जल्दी से उसने साफ़ा बाँधा, मूँछों को दुरुस्त किया और हमारे साथ आकर बड़े ही अदब से बेगम के सामने खड़ा हो गया। बेगम ने जैसे अनायास ही पूछा हो, "करीम, तुम्हारी बीवी कहाँ है आजकल? सुना है कि उसने बड़ी ही ज़्यादती शुरू कर दी है शराब की।"

करीम ने कहा—"जी हाँ सरकार, मैं क्या कहूँ। मेरी तो सुनती ही नहीं। दिन रात शराब है और वह है।"

बेगम ने पूछा—"और वह रहती कहाँ है?"

"मैं क्या जानूँ सरकार। कभी किसी कलवारिन की दूकान पर मिलती है, कभी किसी भट्टी पर।"

हमने कहा—"और अब तो वह इनसे भी कह रही है कि यहाँ

कहाँ पड़े हो। तुमको इससे भी अच्छी जगह रखवा दूँ।"

करीम ने कहा—"ख़ैर, यह बात मैं उसकी मानने वाला नहीं।"

बेगम ने कहा—"उस कमबख़्त का यह इरादा मालूम होता है कि तुझसे कमवाये और ख़ुद मज़े उड़ाये।"

इस बात पर करीम ने लजाकर गर्दन झुकाली। बेगम ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा—"मैं उसको बुलाकर समझाना चाहती हूँ कि अगर वह भली औरतों की तरह रहना चाहे तो उसको यहीं रक्खा जा सकता है। लेकिन नशा पानी उससे क्यों छूटने लगा।"

करीम ने कहा—"अगर सरकार उसको बुलाकर डरायें धमकायें तो शायद सीधी राह पर आ जाय। वह इस वक़्त भी मुझसे वह सब रुपये छीन ले गई है जो बेबी के जन्म के सिलसिले में मुझको इनाम में मिले थे। अब चमेली बाग़ के ताड़ीख़ाने में होगी।"

बेगम ने कहा—"अच्छा, तुम जाओ। मैं इसका इन्तज़ाम करूँगी।"

करीम के जाने के बाद हमने कहा—"क्या सचमुच उसको बुलाओगी?"

बेगम ने कहा—"उसको तो बुलाकर मैं वह मार मारूँगी कि सारा नशा हिरन हो जायगा। अब ज़रा तमाशा देखना तुम।"

यह कहकर बेगम तो बाहर चली गईं और हम अपने काम में लग गये। शौक़िया की फ्राक में फूल बनाने थे। वही लेकर बैठ गये। थोड़ी देर के बाद बेगम ने घर में आकर कहा—"वह आपके करीम की आशिक़-ज़ार झूमती झामती तशरीफ़ लाई हैं। तुम ज़रा हट जाओ। मैं उसे करीम ही के सामने बुलाती हूँ।"

हम कमरे में जाकर बाहर का तमाशा देखने लगे। बेगम ने बाहर जाकर उस शराबिन को बुलाया और अन्दर ले आई। फिर करीम को बुलाकर कहा—"लीजिये यह आ गई हैं आपकी बेगम साहिबा! यह कितने रुपये लेकर गई थी तुमसे?"

करीम ने कहा—"पाँच रुपये सरकार। और मुझसे क़सम खाकर गई थीं कि शराब न पियूँगी।

बेगम ने डाँटकर कहा—"क्यों री, सुन रही है तू?"

शराबिन ने कहा—"ठीक है सरकार, जो चोर की सज़ा वह मेरी।

अच्छी पी ली ख़राब पी ली
जैसी पाई शराब पी ली।

और हुज़ूर, एक शेर और याद आता है कि

तुम हो मए-गुल . रंग
मैं हूँ लबे-जू हो।

और इसके बाद......इसके बाद......मगर सरकार, बड़ी महँगी होती जा रही है दारू भी। भला ग़रीब औरतें काहे को पी सकेंगी।"

बेगम ने एक कानिस्टिबिलनी को बुलाकर हुक्म दिया कि इसके ऊपर एक मशक पानी डाल दो। सारा नशा हिरन हो जायगा।

शराबिन ने कहा—"सरकार, पानी नहीं, एक मशक शराब डलवा दीजिये तो नशा हिरन नहीं नील गाय हो जायगा।......नील बैल हो जायगा बल्कि नील हाथी हो जायगा। नील कंठा गरारी बल्कि नील-झुमका गरारी, अरे हाँ झुमका गरारी।"

अब जो कानिस्टिबिलनी ने पानी की मशक उन महाशया के सरपर एकदम से डाली है तो गड़बड़ा गई। मालूम होता था जैसे डूब रही हैं

पानी पड़ जाने के बाद। सचमुच कुछ दिमाग़ ठिकाने आया। बेगम को देखकर एकदम सलाम किया।

बेगम ने कहा—"क्यों ले गई थी तू उसके रुपये ?"

वह औरत बोली—"ख़ता हुई सरकार। दारू पीने के लिये पैसे नहीं थे मेरे पास।"

बेगम ने कहा—"यह कौन है तेरी अब्दुल करीम, सच-सच बता। नहीं तो अभी हंटरबाज़ी शुरू करती हूँ।"

उस औरत ने कहा—"मैं बतलाऊँ सरकार ?"

बेगम ने डाँटकर कहा—"चुप रह, मैं तुझसे नहीं पूछती। अब्दुल करीम, तू बता।"

करीम ने थूक निगलते हुए कुछ अटक-अटककर कहा—"औरत है हु.ज़ूर मेरी।"

बेगम ने कहा—औरत क्या चीज़ होती है। यह तेरी बीवी है या नहीं ?"

करीम ने कहा—"बीवी ही तो है। मेरा मतलब यह है सरकार कि मैं......बल्कि यह बीवी ही तो है।"

बेगम ने कानिस्टिबिलनी को हुक्म दिया—"लाओ उस औरत को फ़ौरन।"

करीम ने खिसकने की कोशिश ही की थी कि बेगम ने एक हंटर रसीद किया, "ख़बरदार जो यहाँ से भागने की कोशिश की।" बेगम ने कहा—"मारते-मारते चरसा गिरा दूँगी तेरा, हरामख़ोर, दग़ाबाज़। अच्छा तो बताओ यह आदमी तेरा कौन है......ए शराबिन ! मैं तुझसे पूछ रही हूँ।"

वह औरत अब भी कुछ नशे में थी। उसने सँभल कर कहा—"जी हाँ हु.ज़ूर, ठीक कहता है यह ?"

बेगम ने कहा—"ठीक कहता है ?"

उसने कहा—"जो कुछ भी यह कहता है, ठीक ही कहता है।"

बेगम ने एक हाथ रसीद किया तो वह तिलमिला कर रह गई। बेगम ने डाँटकर कहा—"कौन है यह मर्द तेरा ?"

उस औरत ने कहा—"मर्द है मेरा हुज़ूर, मियाँ यानी शौहर।"

बेगम ने कहा—"निकाह हुआ था तेरा इसके साथ ?

उस औरत ने कहा—"जी, वह क्या नाम कि... ..ख़ूब याद आया सरकार......जी हाँ हुआ था।"

बेगम ने कहा—"और अगर न हुआ हो तो।"

उस औरत ने कहा—"तो सरकार, न यह मेरी बीवी न मैं इसका मियाँ।"

बेगम ने कहा—"देखो इस हंटर को अच्छी तरह देख लो। अगर यह साबित हो गया कि तुम दोनों बग़ैर निकाह के एक दूसरे के साथ मियाँ बीवी की तरह रहते हो, या इस शख़्स की कोई बीवी निकल आई तो तुम्हारी ख़ैर नहीं। चमड़ी उधेड़ कर भूसा भरवा दूँगी। क्या समझी ?"

उस औरत ने करीम से कहा—"अरे अब बोलता क्यों नहीं, क्या इरादा है ?"

करीम ने कहा—"सरकार ! मैं तो सच ही कहूँगा। मेरा इसके साथ निकाह नहीं हुआ है। यह मुझको भगा लाई थी मेरी ससुराल से।"

बेगम ने उस औरत से कहा—"क्यों ? सुन लिया, इसने क्या कहा है ? अब बोल।"

उस औरत ने कहा—"अब सरकार मैं क्या बोल सकती हूँ। आप मलिका हैं।"

इतने में कानिस्टिबिलनी के साथ एक और औरत आई जिसे देखकर करीम ने फिर भागने का इरादा ही किया था कि बेगम ने एक और

इंटर रसीद किया और कानिस्टिबिलनी से कहा—"खबरदार, यह आदमी भागने न पाये। क्यों करीम, पहचानता है इसको ?"

करीम ने गर्दन झुकाली तो बेगम ने फिर डाँटा—"मैं क्या पूछ रही हूँ ? जवाब देता है या पड़े फिर इंटर।"

करीम ने कहा—"मेरी बीवी है यह।"

बेगम ने उस नई औरत से पूछा—"यही है तुम्हारा शौहर ?"

उस औरत ने कहा—"जी हाँ सरकार, मैं सरकार के पाँव पड़ूँ, इसको तो अब मेरे हवाले कर दीजिये। मैं इसकी नाक मूँछ काटकर दिल की लगी को बुझा लूँ। जैसे इस हरामख़ोर कमीने ने मेरी इज़्ज़त पर पानी फेरा है, मैं भी इसकी ज़िन्दगी बरबाद कर दूँ।"

बेगम ने कहा—"और यह है वह बदमाश औरत जो तुम्हारे शौहर को भगा कर लाई है। इसको तो मैं अभी बड़े घर की सैर कराती हूँ।"

करीम की असली बीवी ने कहा—"सरकार, इस सज़ा से मेरी प्यास न बुझेगी। मैं तो यह कहती हूँ कि इसे भी मुझे सौंप दीजिये, फिर मैं इसको मज़ा चखाऊँ दूसरों की इज़्ज़त लेने का।"

बेगम ने शराबिन से कहा—"क्यों, अब क्या कहती है ? कर दूँ इसके सिपुर्द तुझे ?"

शराबिन बोली—"सरकार को इख़्तियार है। मेरी ख़ता है और मैं हर सज़ा के लिये तैयार हूँ। दिल से मजबूर थी। इस कमबख़्त दिल ने मुझे धोखा दिया। मैं करीम पर शादी से बहुत पहले मरती थी। इसकी माँ ने मेरे साथ इसकी शादी नहीं की और इनका रुपया देखकर इनके साथ ब्याह भी कर दिया और चटपट गौना भी हो गया। मगर मेरी मुहब्बत फिर भी न गई। मैंने इसे भूल जाने के लिये शराब शुरू कर दी और अच्छी ख़ासी शराबिन होकर रह गई। मगर शराब के नशे में भी मुहब्बत का होश हमेशा रहता था। आख़िर मैंने वह

किया जिसका नतीजा आज भुगत रही हूँ। मैं हुज़ूर से सच कहती हूँ कि चाहे मेरी बोटी-बोटी काट डाली जाय मगर करीम से जो मुहब्बत मुझे है वह मेरे दिल मे नहीं जा सकती और न करीम ही मुझको भूल सकता है।"

बेगम ने करीम से कहा—"क्यों, ठीक कह रही है यह? तू इसकी मुहब्बत भूल नहीं सकता?"

करीम ने कहा—"पागल है सरकार यह। मुझे दम-दिलासा देकर भगा लाई और मुझे यह दिन देखना पड़ा। मुझे इससे अगर कुछ मुहब्बत थी भी तो वह अब नफ़रत में बदल गई है।"

बेगम ने कहा—"तो मैं भेज दूँ इसे जेल में और तू रहेगा अपनी बीवी के साथ?"

करीम ने रोते हुए कहा—"मैं अब इनके क़ाबिल नहीं रहा सरकार। फिर भी अगर मुझे इस क़ाबिल समझेंगी तो मैं इनके पाँव धोकर पियूँगा।"

बेगम ने करीम की असली बीवी से कहा—"अच्छा, अब तुम मेरे कहने मे इसे माफ़ कर दो। इसकी ज़िम्मेदार मैं हूँ और इन बेगम साहबा को मैं आज ही ठिकाने लगाये देती हूँ।"

उस औरत ने सर झुका लिया। बेगम शराबिन को और उस औरत को लेकर बाहर चली गईं और करीम रोते हुए बावर्चीख़ाने की तरफ़ चले गये।

चौदह

सिद्दीक़ भाई ने अपने एक दोस्त की दावत की थी और हमको भी बुलाया था। इन सज्जन का नाम गोपीनाथ था और ये राधानगर रेडियो स्टेशन पर मर्दों के प्रोग्राम के इंचार्ज थे। बड़े ही शिष्ठ और मिलनसार, पढ़े लिखे और बड़ी सूझ-बूझ के मर्द थे। मर्दों में ऐसे बहुत कम मिलते हैं जो इतने योग्य भी हों और जीविका भी कमाते हों। नाज़ुकिस्तान के क़ानून के अनुसार पर्दा तो .खैर उनको भी करना पड़ता था परन्तु यहाँ उनका और भी कमाल था कि पर्दे में रहते हुए भी इतनी शिक्षा प्राप्त कर ली और सरकारी नौकरी भी करने लगे। उन सज्जन की बात-चीत बड़ी ही दिलचस्प थी। हम दोनों से बड़ा आग्रह करते रहे कि हम किसी दिन मर्दों के प्रोग्राम में आयें और रेडियो स्टेशन की सैर करें। सिद्दीक़ भाई को तो जमाल आरा बहन ने अनुमति दे दी पर हमें डर था कि कहीं बेगम इनकार न कर दें।

लेकिन बेगम को जब यह मालूम हुआ तो उन्होंने भी .खुशी से इजाज़त दे दी बल्कि यह भी कहा कि रेडियो स्टेशन पर पर्दे का पूरा इन्तज़ाम है। दूसरे स्वयं उनकी बहुत सी सहेलियाँ भी रेडियो के स्टाफ़ में थीं। कुछ से तो उनकी बहुत ही घनिष्ठता थी। बेगम ने कहा—"मैं .खुद तुम्हारे साथ चलूँगी और .खुद सैर करा दूँगी। आखिर एक दिन जब रेडियो स्टेशन पर मर्दों का प्रोग्राम था, हम और सिद्दीक़

भाई, बेगम और जमाल आरा बहन के साथ रेडियो स्टेशन पहुँच गये। हम दोनों तो स्टूडियो में पहुँच गये जहाँ मर्दों का प्रोग्राम होने वाला था और बेगम व जमाल बहन अपनी सखियों के साथ बाहर ही रह गईं। उस समय हमारे स्टूडियो में, जहाँ पर्दे वाले मर्द थे, औरतें नहीं आ सकती थीं। सिर्फ़ गोपीनाथ जी रेडियो स्टाफ़ की तरफ़ से यहाँ के निरीक्षक थे। इस प्रोग्राम में जितने हिस्सा लेने वाले थे वह पर्दे का इतना इन्तज़ाम होने पर भी बुर्क़े में लिपटे हुए बैठे थे। इसलिये कि गोपी जी को कह दिया गया था कि एकाध गाने की चीज़ में साज़िन्दियाँ भी स्टूडियो में आयेंगी, जिन भाइयों को पर्दा करना हो, पर्दा कर लें। उस प्रोग्राम में उस्ताद गौहर अली ख़ाँ का पक्का गाना हुआ। ख़ूब-ख़ूब गाया। मर्द होकर पक्का गाना गाने का यह अभ्यास बड़े आश्चर्य की बात थी। मज़ा आ गया। पक्के गाने के बाद इस प्रोग्राम के 'दोस्त' यानी गोपी जी ने मर्दों के लिये कुछ चुटकुले और कुछ काम की बातें माइक्रोफ़ोन पर बताईं, जैसे मूँछ बढ़ाने का टानिक कैसे बनाया जाता है। फिर ख़िज़ाब का एक नुस्ख़ा सुनने वालों को सुनाया गया। फिर मर्दों को क्रोशिया से तकिये के ग़लाफ़ पर ताज महल बनाने की तरकीब बताई। उसके बाद श्री भारत धर्मी की बात-चीत थी कि बच्चों की देख-भाल मर्दों को किस तरह करनी चाहिये। इस बात-चीत के बाद एक छोटा सा नाटक था "न हुआ मैं स्त्री"। यह नाटक भैरवी देवी गुप्ता का लिखा हुआ था। इसमें भी चूँकि एक महिला का पार्ट था इसलिये हम सब बुर्क़े ही में रहे।

स्वयं उनके साथ काम करने वाले मर्द भी बुर्क़े में थे। नाटक बड़ा ही रोचक था। इस नाटक के बाद प्रोग्राम के 'दोस्त' गोपी जी ने मर्द सुनने वालों के ख़तों के जवाब सुनाये और जब प्रोग्राम ख़त्म हो गया तो गोपी जी ने और सब मर्दों को विदा करके हम दोनों से कहा कि

अगर आप चाहें तो मैं आप दोनों को रेडियो स्टेशन की सैर कराने के अलावा कुछ और प्रोग्राम भी सुनवादूँ। हम दोनों तो इसीलिये आये ही थे अतः उनके साथ पहले उस स्टूडियो में गये जहाँ उस्तानी फ़ैयाज़-जहाँ ख़्याल जैजैवन्ती गा रही थीं। क्या कहना है इस गाने का। गोपी जी ने बताया कि इस समय सारे देश में इनसे अच्छी कोई गायिका नहीं है। उस्तानी फ़ैयाज़जहाँ के बाद एनाउन्सर महोदय ने एलान किया, "यह राधा नगर है। अभी आप उस्तानी फ़ैयाज़जहाँ से ख़्याल जैजैवन्ती सुन रही थीं। अब अशरफ़ुन्निसा से श्री तलसीम माहीनगरी की ग़ज़ल सुनिये—

'तुम्हारे सिवा कुछ जवाँ और भी हैं'

हम लोग अब उस स्टूडियो में आ गये जहाँ अशरफ़ुन्निसा का गाना हो रहा था। ये बेचारी साधारण स्त्रियों की अपेक्षा कुछ शर्मीली, कुछ मर्दों की तरह सिमटी सिमटाई छुई-मुई सी महिला थीं। बहुत ही शर्मा-शर्मा कर गा रही थीं। हम लोगों के पहुंच जाने से तो और भी परेशान सी दीख रही थीं। औरत होकर उनका यह हाल था जैसे कोई मर्द कुछ औरतों में पहुंच कर सिटपिटा जाय। उनकी ग़ज़ल ख़त्म होने के बाद फिर एनाउन्सर महोदय ने घोषणा की—"यह राधानगर है। अभी आपने श्री तसलीम माहीनगरी की ग़ज़ल अशरफ़ुन्निसा से सुनी, अब उस्ताद जमील भाई से ख़्याल ललित द्रुत लय में सुनिये।" हम लोगों ने उस स्टूडियो में जाकर देखा तो उस्ताद जमील भाई साज़िन्दिनियों के सामने बैठे गा रहे थे। सिद्दीक़ भाई ने हमारे कान में कहा—"यह बाज़ारी क़िस्म का मर्दुआ मालूम होता है।" और सचमुच उनके ठाट थे भी ऐसे ही। ताव दी हुई नोकीली मूँछें, सिर का एक-एक बाल बड़ी सावधानी से चिपका हुआ। हवा में उड़ती हुई

रेशमी टाई। ख़ुशबू में बसा हुआ रूमाल बार-बार जेब से निकाला जाता था। पास ही सिग्रेट केस रक्खा था। कभी गाते-गाते आप किसी तबलच्चिन को देख कर हँस दिये, कभी किसी सारंगिनी से आँख मिला कर मुस्करा दिये। उस ज़ालिम की एक-एक बात से जी जल रहा था कि यही तो इन कमबख़्तों की हरकते होती हैं जिनसे ये औरतों को जाल में फँसाते हैं। सैकड़ों भरे घर इन कमबख़्तों ने तबाह कर दिये। लेकिन वह औरतें भी ख़ूब होती हैं जो इस दिखावटी हुस्न के पीछे अपने मासूम घरवालों के सच्चे प्रेम को ठुकरा कर उनके फंदे में फँस जाती हैं। हालाँकि उनका प्रेम बस उसी समय तक होता है जब तक औरत के पास चार पैसे हैं। जहाँ उनका बटुआ ख़ाली हुआ, इन झूठी मुहब्बत के पुतलों के दिल भी मुहब्बत से ख़ाली हो जाते हैं। मुझे उस वक़्त रह-रहकर बेगमज़ादी अफ़सरजहाँ का ख़याल आ रहा था। पचास से ऊपर उमर होगी, सिर के बाल सफ़ेद, चेहरे पर झुर्रियाँ तक पड़ चली थीं। दांत कुछ गिर चुके थे कुछ हिल रहे थे और एक बाज़ारी अट्ठारह वर्ष का छोकरा उनके पास था। अच्छी-ख़ासी रियासत उसी छोकरे पर क़ुरबान कर दी थी। मियाँ घर में पड़े सड़ा किये, लाख-लाख बेचारे ने कोशिश की कि बेगमज़ादी साहबा को होश आ जाय, लेकिन उनकी आँखें उस वक़्त खुलीं जब इलाक़े का आख़िरी मकान भी बिक कर उसका रुपया भी ख़त्म हो गया और उस छोकरे के स्वार्थी बाप ने बेगमज़ादी साहबा को बड़ी ही ज़िल्लत के साथ अपने घर से निकलवा दिया। इसको निकलवाना ही कहते हैं कि उन्हीं की मौजूदगी में एक ताल्लुक़ेदारिनी साहबा का उस छोकरे के पास आना-जाना शुरू हो गया। और जब उनको आपत्ति हुई तो उस छोकरे के बाप ने तोते की तरह आँखें बदल कर कहा कि वाह बेगम साहबा, मेरा छोकरा कोई आपके हाथ बिक थोड़े ही गया है। इतने दिनों

तक इसकी जवानी सड़ी हुई क़ब्र के हवाले रही इसलिये कि उस क़ब्र में सोने की खान थी। अब क्या आपकी वजह से मैं हमेशा के लिये इसकी क़िस्मत फ़ोड़ दूँ? यह कोई आपका निकाहता शौहर तो है नहीं कि आपके साथ जिन्दगी बिता देगा। आपको अगर उसकी दूसरी मिलनेवालियों पर ऐसा ही एतराज़ है तो आप अपने घर ख़ुश हम अपने घर ख़ुश। बेगम साहबा अपना मुंह लेकर क़िस्मत को रोती चली गई। वह तो कहिये कि उनके शौहर ने यह रंग देखकर चुपके ही चुपके सारे गहने और थोड़ा बहुत नक़्द रुपया, कुछ चाँदी-सोने के बर्तन अपने मायके भिजवा दिये थे। अतः जब यह ठोकर खा चुकीं तो बेगमज़ादी साहबा को होश आया। ख़ूब पछताईं और तौबा की। अन्त में वही शौहर उनके काम आया जिस बेचारे की छाती पर जिन्दगी भर उस औरत ने कोदों दली थी।

हम इन्हीं विचारों में डूबे थे कि गोपीनाथ जी ने, जो हमको छोड़कर बाहर चले गये थे, आकर कहा कि आप दोनों की बेगमें स्टेशन डायरेक्टरनी साहबा के कमरे में आप दोनों का इन्तज़ार कर रही हैं। हम दोनों ने यह सुन अपने बुर्क़े दुरुस्त किये और गोपीनाथ जी के साथ उस कमरे में पहुंचे जहाँ बेगम, जमाल बहन और दो-तीन अन्य महिलायें बैठी बातें कर रही थीं। हम लोगों को देखकर सब स्त्रियाँ खड़ी हो गईं। बेगम ने हाथ के इशारे से कहा—"आप दोनों उस बराबर वाले कमरे में ठहरें, यह चाय के लिये इसरार कर रही हैं इसलिये चाय पीकर चलेंगे सब।

हम दोनों बराबर वाले कमरे में चिलमन के पीछे बैठ गये। कमरे में अँधेरा था इसलिये हमने बुर्क़े का नक़ाब उलट दिया। ठीक उसी समय बेगम ने ऊँची आवाज़ में कहा—"वहाँ इतमीनान से बुर्क़े उतार कर या बुर्क़े का नक़ाब उलट कर बैठिये।"

हम बैठ गये तो स्टेशन डायरेक्टरनी साहबा की आवाज़ सुनाई पड़ी। वह कह रही थीं—"अरे हाँ जमाल, वह लड़का कौन था जिसे लिये हुए तुम उस दिन पिक्चर में जा रही थीं?"

हम दोनों रुख बदल कर उस ओर देखने लगे।

जमाल बहन यह सुनकर सिटपिटा सी गईं। उन्होंने आश्चर्य से पूछा—"लड़का? मेरे साथ? कब?"

"हाँ हाँ, वह गोरा चिट्टा तन्दुरुस्त सा लड़का, कुतरी हुई मूँछों वाला, चश्मा लगाये।"

जमाल बहन ने उसी तरह ताज्जुब से कहा—"मेरे साथ?...... तुमको शुबह हुआ होगा।"

स्टेशन डायरेक्टरनी साहबा ने जैसे एकदम चौंक कर कहा—"ओह, माफ़ करना। मैं भूल ही गई थी कि भाई साहब भी बराबर वाले कमरे में बैठे हैं। हाँ, ठीक है, वह तो मैं उसी वक़्त समझ गई थी कि कोई और है, जमाल नहीं हो सकती।"

अब बेगम ने ठहाका लगाया और जमाल बहन ने भी अब उनकी शरारत को समझा तो उन्होंने भी हँस कर कहा—"कम्बख़्त कहीं की, यह विष बो रही थी तू। मगर मेरा मर्द ऐसा नहीं है कि वह इन बातों का यक़ीन करले। उसे ख़ैर यह तो नहीं मालूम है कि तुम कितनी बनी हुई हो मगर उसे मुझ पर जो विश्वास है वह इन बातो से डगमगा नहीं सकता। हाँ, अगर इन बेगम साहबा के शौहर के बारे में तुम कुछ कहतीं तो वहाँ यक़ीन हो जाता।"

स्टेशन डायरेक्टरनी साहबा ने बड़ी गम्भीरता से कहा—"इसी लिये तो इनकी किसी बात का मैंने ख़ुद ज़िक्र नहीं किया, न उस क़ौवाल की चर्चा की जिस के घर जा-जाकर आप क़ौवालियाँ सुनती हैं।"

बेगम ने मुस्कराकर कहा—"आदाब अर्ज़ करती हूँ। मगर मेरा घर वाला भी इतना बेवक़ूफ़ नहीं है जितना सूरत से नज़र आता है। तुम तो अपनी ख़बर लो कि घर वाला वहाँ पड़ा है और यहाँ बीवी-बन्नू रेडियो स्टेशन चला रही हैं। तौबा है, कितना बेबस है वह बेचारा भी कि बेगम आग से खेल रही हैं और उस बेचारे को यह यक़ीन है कि दामन बच रहा होगा। लेकिन मैं तो यह कहूँगी कि नौकरी है बड़ी दिलचस्प। नौकरी की नौकरी और हर तरह की दिलचस्पी अलग से। गाना सुनिये, नाचिये, कूदिये, दिल बहलाइये, बल्कि....... .दिल चाहे तो दिल भी लगा लीजिये।"

स्टेशन डायरेक्टरनी साहबा ने कहा—"जी हाँ, दूर के ढोल ऐसे ही सुहावने होते हैं। यहाँ आकर देखो तो पता चले कि कैसा ख़ून पानी एक करना पड़ता है। इससे भी बढ़कर ट्रेजिडी और क्या हो सकती है कि जिन चीज़ों से दिलचस्पी हो वही चीज़ें फ़र्ज़ बन जायें। यक़ीन जानो मुझे गाना सुनने का बेहद शौक़ था लेकिन रेडियो में आकर और दिन-रात गाना सुनते-सुनते अब गाने के नाम से मिचली होने लगती है। दूसरे यह कोई पुलिस का महकमा तो है नहीं कि धौंस बट्टे से काम चल जाय। यहाँ तो बेबात की बात पैदा होकर अच्छी से अच्छी नेकनामी को ले डूबती है। जितना फूँक-फूँक कर यहाँ क़दम रखना पड़ता है, वह हम ही जानती हैं।"

बेगम ने कहा—"आपने संजीदगी के साथ इतना बड़ा लेक्चर देकर यह यक़ीन कर लिया होगा कि आपने कहा और मुझको विश्वास हो गया। जैसे मैं, जो पुलिस में हूँ और जिसका ऐसी ऐसी सैकड़ों मुल्लानियों से रोज़ का वास्ता रहता है, उसकी यह सब तजरबेकारी सिर्फ़ इसलिये है कि आप ज़रा सा चकमा दें और मैं आपके गुन गाने लगूँ। जिस वक़्त तू

झूठ बोला करे, एक आइना भी सामने रख लिया कर। इस सफ़ाई से सूरत से झूठ बरसता है कि अंधी भी देख ले।"

स्टेशन डायरेक्टरनी ने मुस्करा कर कहा—"अपने आइने में हर एक की सूरत न देखा करो और न अपनी कसौटी पर हर एक को परखा करो। पुलिस में रहकर पाक साफ़ बने रहने का दावा बिलकुल ऐसा ही है जैसे नदी से निकल कर कोई सूखा रह जाने का दावा करे। पुलिस वालों की शौक़ीनियाँ तो मशहूर हैं, फिर कोतवालिनी—पुलिसवालियों की भी नानी अम्माँ!—उनके लिये भला दिल बहलाने और दिल लगाने की कौन सी कमी है।"

इसी बीच चाय आ गई। हम दोनों ने अन्दर ही चाय पी और स्त्रियों ने बाहर। हम मन ही मन सोंच रहे थे कि ये औरतें आपस में कैसा गन्दा मज़ाक करती हैं और एक दूसरे की कैसी क़लई खोलती हैं। ख़ैर, यह तो मज़ाक़ हो रहा था। लेकिन स्टेशन डायरेक्टरनी साहबा का यह कहना कि पुलिस में रहकर पाक साफ़ रहना मुमकिन नहीं, कुछ ग़लत भी न था। पुलिसवालियों के लिये खुल-खेलने के जैसे मौक़े हो सकते हैं वह हमसे भी छिपे न थे और इस आशंका में हम स्वयं घुला करते थे।

पन्द्रह

बेगम की तरफ़ से हमको पूरा इत्मीनान था। लेकिन इस इत्मीनान के बावजूद ख़ुदा जाने क्यों यहाँ के रङ्ग देखकर दिल परेशान सा रहता था कि आख़िर वह भी दिल रखती हैं, जवानी रखती हैं, हुस्न रखती हैं और फिर हुकूमत रखती हैं। उनके बहकने के लिये तो बस इशारा चाहिये ज़रा सा और सच्ची बात तो यह है कि वह अगर अब तक विचलित न हुईं तो यही उनका कुछ कम एहसान नहीं था, नहीं तो यहाँ तो औरत का बहकना और किसी ग़ैर मर्द से दिल लगा लेना बिलकुल ऐसी ही साधारण बात थी जैसी हमारे भारत में मर्दों का बहक जाना। भारत में मर्द अगर किसी औरत को डाल ले तो ज़्यादा से ज़्यादा ऐयाश कहा जा सकता था। वहाँ आमतौर से मर्द ऐयाशियाँ करते ही थे। बड़े-बड़े शरीफ़ घरानों के मर्द, बड़े-बड़े पढ़े-लिखे, बड़े-बड़े समझदार और बड़े-बड़े रईस—बल्कि इसको तो बड़ाई का एक लक्षण समझा जाता था कि बड़ा आदमी एकाध इस क़िस्म का शौक़ भी रखता हो और एकाध तोता उसके यहाँ भी पला हो। लेकिन अगर औरत से कहीं इस तरह की भूल एक दफ़ा भी हो जाय तो फिर वह गई हमेशा के लिये। न शौहर के घर में उसकी जगह न माँ-बाप के यहाँ उसका ठिकाना। बेटे की आवारगी पर अब्बाजान अगर बहुत ही भले आदमी हुए तो थोड़ा बहुत ग़ुस्सा करके रह जाते थे, लेकिन बेटी की ज़रा सी बदनामी पर आत्म-हत्या तक कर लेना कोई बड़ी बात न थी।

शौहर की ऐयाशी पर बीवी घुट-घुट कर रहती थी पर उसको अपनी बेइज़्ज़ती का ख़याल न आता था। जलना और चीज़ है, पर शौहर की बदचलनी इतनी संगीन चीज़ न समझी जाती थी कि बीवी किसी को मुँह दिखाने योग्य ही न रहे। अलबत्ता अगर बीवी ज़रा भी चाल-चलन के मामले में डगमगा जाय तो शौहर की ग़ैरत और उसका स्वाभिमान लेने और जान देने तक का सवाल पैदा कर देता था। हज़ारों ग़ैरतदारों ने अपने को बीवी की इज़्ज़त पर क़ुरबान कर दिया था और कितने ही बीवी की नाक काट कर जेल चले जाते थे या फाँसी पर लटक जाते थे। हालाँकि धर्म और मज़हब की दृष्टि से मर्द का पाप भी उतना ही संगीन है जितना औरत का लेकिन समाज ने हमको इसका आदी बना दिया था कि मर्द की ऐयाशी तो एक साधारण भूल है और औरत की ऐयाशी वह महापाप है जिसका प्रायश्चित ही नहीं हो सकता। ख़ुदा माफ़ कर दे तो कर दे, समाज नहीं माफ़ कर सकता। यानी इस मामले में समाज अपने को ख़ुदा से भी बड़ा समझता है। मर्द ऐयाशी करे तो बस वह ऐयाशी है—ज़रा बुरी बात, लेकिन इसमें इज़्ज़त आबरू का कोई सवाल नहीं पैदा होता। हद यह है कि ख़ुद उसकी इज़्ज़त पर भी आँच नहीं आती। लेकिन औरत से भूल चूक हो जाय तो न सिर्फ़ उसकी बल्कि उसके शौहर की, उसके बाप भाई की और उसके सारे ख़ानदान की इज़्ज़त चली जाती है। भूल चूक तो भूल चूक है. अगर कोई औरत अपनी कमज़ोरी के कारण किसी मर्द की ज़बरदस्ती का शिकार हो जाय तो भी उसकी बेकसी और लाचारी को नहीं समझा जाता बल्कि इसके बावजूद वह न शौहर के काम की रहती है न किसी अपने रिश्तेदार को क़ायल कर सकती है कि मैं कमबख़्त 'औरत' हूँ, मुझको मजबूर किया जा सकता है। जी नहीं, कुछ नहीं, मोती की आब उतरी तो उतरी।

हमने लाख-लाख अपने मन को समझाया कि हिन्दुस्तान में जहाँ

मर्दों की हकूमत है, समाज ने औरत के साथ ये ज़्यादतियाँ अगर कर रक्खी हैं तो यहाँ हमको उसी तरह ठंडे दिल से औरत की ज़्यादती को बरदाश्त करना चाहिये जिस तरह हिन्दुस्तानी औरत बरदाश्त से काम लेती है। लेकिन दिल किसी तरह इस क़यामत का मुक़ाबिला करने को तैयार न था। हम और तो सब कुछ बरदाश्त कर सकते थे। घर की क़ैद, मर्द होकर हांडी चूल्हे का मुक़ाबिला, शौहर होकर बीवी की फ़रमाँबरदारी, दफ़्तर के काम के बजाय घर में बैठकर सीने काढ़ने का काम, बाप होकर माँ की तरह बच्ची की परवरिश—ये सब सख़्तियाँ झेल ही रहे थे और ज़िन्दगी भर झेलने के लिये तैयार थे, मगर इस कल्पना से तो एकदम जैसे जहन्नुम सा भड़क उठता था। हमारे दिल के अन्दर वह अकथनीय तकलीफ़ होती थी जिससे ख़ुदा दुश्मन को भी बचाये। हमने अक्सर इस बात पर भी ग़ौर किया कि इसी तरह की तकलीफ़ औरतों को भी भारत में होगी होगी, और अन्त में मानना ही पड़ा कि औरत जाति अपनी कोमलता और सहृदयता के बावजूद इस मामले में एक भारी पहाड़ है और मर्द जाति अपनी ताक़त और कठोरता के होते हुए भी इस सिलसिले में एक रूई के गाले से ज़्यादा हैसियत नहीं रखता। औरत की यह सहनशक्ति, मर्द अगर हज़ार मर्तबा इसी कोशिश में मरमर कर जिये तो भी नहीं हासिल कर सकता। इसको हमारे दिल से पूछिये कि आजकल हमारा क्या हाल था। सिर्फ़ यह शक हो गया था कि बेगम का आना जाना एक सब जजिन साहबा के यहाँ बहुत ज़्यादा था। और हमको यह भी मालूम हो गया था कि उनके पति भी बेगम के सामने आते हैं। दर असल वह ख़ानदान ही कुछ हद से गुज़रा हुआ था। उनके यहाँ के मर्द तो बस इसलिये पर्दा करते थे कि क़ानून के अनुसार उन्हें पर्दा करना चाहिये था। अगर क़ानूनी पाबन्दी उठा ली जाती तो पर्दा छोड़ने के सिलसिले

में लाज-शर्म को ताक़ पर रखने वाले शायद इसी घराने के मर्द होते। नाज़ुकिस्तान के क़ानून के अन्तर्गत पर्दा छोड़ने का लायसेन्स सिर्फ़ उन मर्दों को दिया जा सकता था जो शराफ़त के दावेदार न हों और सिर्फ पेशावर हों, यानी जिनकी रोज़ी का ज़रिया ही लाज वेचना हो। उनके अलावा बाक़ी किसी भी मर्द को पर्दा छोड़ने की इजाज़त न थी। लेकिन यह भी सच है क़ानून तो ग़रीबों के लिये होता है, जनता के लिये होता है। शासकवर्ग को इससे क्या मतलब। दूसरे अपने घर में जिसका जी चाहे बेपर्दा रहे। सब-जजिन महोदया के ये पति भी वैसे तो बड़े पर्दा-नशीन थे, बिना बुर्क़ा पहने कभी घर के बाहर नहीं निकलते थे। घर पर भी हमेशा मर्दाने ही में रहते थे। लेकिन सब-जजिन और बेगम के सम्बन्ध इस हद तक बढ़े कि आख़िर उनसे भी पर्दा उठा दिया गया। अब जब देखिये बेगम को उनके ही यहाँ मौजूद हैं। अगर किसी दिन न गईं तो बुलावे पर बुलावा चला आ रहा है। सब-जजिन की तरफ़ से कम और उनके पति की तरफ़ से बहुत ज़्यादह। फिर हमको एक शिकायत यह भी थी कि अगर ऐसे ही सम्बन्ध बढ़ गये थे तो सब-जजिन के पति ने आख़िर हमको कभी क्यों न बुलाया। न वह कभी हमारे यहाँ आये न हम कभी उनके यहाँ गये। दूसरे इतनी घनिष्टता के बाद भी बेगम ने कभी हमसे कोई ज़िक्र उनके यहाँ का नहीं किया बल्कि यह क़िस्सा तो हमने दूसरो से सुना। एकाध परचा बेगम के पर्स में सब-जजिन के पति का देखा जिनमें किसी में लिखा था कि आपने तो ख़ूब इन्तज़ार कराया। चाय लिये बैठा रहा और आख़िर में जब आप न आईं तो मैंने भी चाय न पी। किसी में लिखा था कि अगर आज आप न आईं तो मेरा सारा प्रोग्राम ख़त्म हो जायगा, बल्कि एक ख़त में तो यहाँ तक लिखा था कि आपकी दोस्त सब-जजिन साहबा बाहर जा रही हैं। आपको ज़्यादा वक़्त अब यहाँ बिताना है। अगर आपके शौहर साहब

इजाज़त दे सकें तो मुझ ग़रीब पर भी करम कीजियेगा।

इन सभी ख़तो से अगर हमारे सन्देह बढ़ रहे थे तो कोई ताज्जुब की बात नहीं थी। हमने इन ख़तों को पहले तो चुपके से चुरा लिया, इसके बाद अपने एकमात्र दोस्त सिद्दीक़ भाई को वह ख़त दिखाये। वह भी इन ख़तों को देखकर कुछ घबरा से गये, और उनको भी कम से कम इसका तो क़ायल होना ही पड़ा कि कुछ न कुछ दाल में काला ज़रूर है, मगर हमको इत्मीनान दिलाया कि अपनी बेगम के ज़रिये इस सम्बन्ध में पूरी जाँच पड़ताल करायेंगे। आख़िर एक दिन जब सिद्दीक़ भाई हमारे ही यहाँ थे, और बेगम घर से ग़ायब थीं, बाहर से नफ़ीसा ने आवाज़ देकर एक कारचोबी पर्स और एक काग़ज़ भिजवाया कि इसको बेगम की मेज़ पर रख दिया जाय, सब-जजिन साहबा के घर से आया है। हमने बन्द लिफ़ाफ़े पर पानी लगाकर बड़ी सावधानी से लिफ़ाफ़ा खोला और सिद्दीक़ भाई तथा हमने मिलकर ख़त पढ़ना शुरू किया। लिखा था :—

"सरकार !

एक तुच्छ सी भेंट भेज रहा हूँ। यह पर्स मैंने ख़ुदा बनाया है और शायद आपको यक़ीन आ सके कि आपके लिये ही बनाया है। इसकी तैयारी में एक महीना आठ दिन लगे हैं, और इस समय में वह वक़्त शामिल नहीं है जब आप यहाँ होती थीं बल्कि इसकी तैयारी का काम ही इसलिये शुरू किया गया था कि आपके पीछे भी आपही का ख़याल मौजूद रहे, गोया आपकी अनुपस्थिति में एक माह आठ दिन तक मैंने आपको जिस तरह याद किया है उसका एक धुंधला सा ख़ाका यह पर्स है। शायद इसके नक़्श में मेरी मित्रता की ज़िन्दगी आपको भी कभी महसूस हो सके। आप आज दो दिन से ग़ायब हैं।

आप ही अपने ज़रा लुत्फ़-ओ-करम को देखें
हम अगर अर्ज़ करेंगे तो शिकायत होगी।

आपका—
"मेहरोत्रा"

हमने ख़त पढ़कर काँपते हाथों से निहायत ख़ामोशी से सिद्दीक़ भाई को दे दिया। सिद्दीक़ भाई भी सन्नाटे में आ गये और खोखली आवाज़ में बोले—"पढ़ लिया है मैंने।"

हमने थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद कहा—"क्या तुमको अब भी कोई शक है?"

सिद्दीक़ भाई ने जैसे कुछ न समझते हुए कहा—"उसकी तरफ़ से तो मुझे भी कोई शक नहीं, सईदा बहन की तरफ़ से इस तरह की उम्मीद भी नहीं।"

हमने जोश में आकर कहा—"कैसी बातें करते हो सिद्दीक़ भाई। सईदा बहन की तरफ़ से इस तरह की उम्मीद भी नहीं। अगर वह इस सिलसिले में बेक़सूर होतीं तो पर्स में लिये-लिये उस बदमाश के ख़त न फिरा करतीं। अगर वह इस सिलसिले में बेख़ता होतीं तो उनके यहाँ का आना-जाना जारी न रखतीं। अगर उनके दिल में ख़ुद चोर न होता तो मुझसे कभी इसका ज़िक्र ज़रूर करतीं। मगर वहाँ तो बराबर चोरियाँ हैं, मुस्तक़िल राज़दारी है। एक-एक बात मुझसे छिपाई जा रही है। और अब भी देख लीजियेगा कि इस पर्स और इस ख़त के बारे में भी कोई ज़िक्र न किया जायगा। मगर मैं भी अब चुप रहने वाला नहीं हूँ, न मेरा जन्म नाज़ुकिस्तान में हुआ है कि मैं बीवी की बेशर्मी पर क़िस्मत की शिकायत करके रह जाऊँ। मैं तो उनकी जान ले लूँगा और अपनी जान दे दूँगा।

सिद्दीक़ भाई ने हमको समझाते हुए कहा—"इस क़दर बेक़ाबू होने की ज़रूरत नहीं। मैं तुम्हारी बहन को परचा लिखकर अभी बुलाता हूँ। पहले उनसे सलाह करलो फिर कोई क़दम उठाना।"

हम तो सचमुच अपने हवास में नहीं थे। आँखों में ख़ून उतर आया था। सारे जिस्म में जैसे शोले से भड़क रहे थे, मगर सिद्दीक़ भाई ने पहले तो जमाल आरा बहन को ख़त लिख कर भेजा, इसके बाद हमको उस वक़्त तक समझाते बुझाते रहे जब तक जमाल बहन न आ गईं। जब जमाल बहन ने ड्योढ़ी पर आवाज़ दी तो हम तुरन्त पर्दे में हो गये। जमाल बहन ने घर में आकर घबराई हुई आवाज़ में कहा—"ख़ैरियत तो है ?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"हाँ, ख़ैरियत है। तुम उधर कुर्सी पर बैठ जाओ तो इत्मीनान से बताऊँ।"

जमाल बहन ने बैठते हुए कहा—"पहले मुझे बतादो कि क्या क़िस्सा है। निगोड़मारा दिल धड़क रहा है। मैं तो बेहद परेशान हो गई थी तुम्हारा परचा पाकर कि न जाने क्या क़िस्सा हुआ होगा।"

अब सिद्दीक़ भाई ने शुरू से आख़ीर तक सारा क़िस्सा सुनाया। वह परचे दिखाये जो हमने बेगम के पर्स से चुराये थे और आख़ीर में वह पर्स और वह पत्र भी दिखा दिया जो आज आया था। जमाल बहन ने सब कुछ देखते हुए कहा "मुबारक हो भाई साहब, मालूम होता है कि आपकी बेगम साहबा माशाअल्ला बालिग़ हो गई हैं। अब कहिये न कि 'जिये मेरी जोरू गली-गली दिल फेंको'।"

सिद्दीक़ भाई ने डाँटा, "यह भला मज़ाक़ का कौन सा मौक़ा है। वह आपे से बाहर हैं कि मैं हिन्दुस्तानी ख़ून रखता हूँ, मैं नाज़ुकिस्तान

में नहीं पैदा हुआ हूँ। मैं उनकी जान ले लूँगा और अपनी जान दे दूँगा।"

जमाल बहन ने कहा—"अरे अरे। भला ऐसा भी क्या ग़ुस्सा? औरतें तो यह किया ही करती हैं। इसमें नई बात कौन सी है। अगर इन्हीं बातों पर घर के बैठने वाले मर्द जान लेने और जान देने लगे तो हमारे नाज़ुकिस्तान की सारी आबादी ही ख़त्म हो जायगी। अब अपने भाई से ही पूछ लीजिये कि मैंने उनको क्या कम तड़पाया है।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—'ख़ुदा न करे। मैं तो हज़ार में कह दूँ कि ख़ुदा दुनिया जहान के लड़कों की क़िस्मत ऐसी ही करे जैसी मेरी है और हर एक को ऐसी ही बीवी मिले जैसी मुझको मिली है।"

जमाल आरा बहन ने कहा—"अब यह ख़ुशामद शुरू हुई। और वह जो अब्दुल्ला चपरासी का क़िस्सा था, वही जो मर्दाना स्कूल का चपरासी था, अपना पड़ोसी......... ।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"वह तो मुझे शक हुआ था। मुझसे कहने वालों ने एक बात कही थी तो मैंने तुमसे भी पूछ ली थी कि यह क्या क़िस्सा मशहूर हो रहा है?"

हमने अन्दर से कहा—"बहन मैं आपको बताये देता हूँ कि मेरा ख़ून आपकी गर्दन पर होगा। ऐसी हालत में मेरा ज़िन्दा रहना नामुमकिन है। मैं और कुछ नहीं कह सकता।"

जमाल बहन ने कहा—"बेवक़ूफ़ न बनिये भाई साहब। आप जानते हैं, मुझे आपसे कितनी हमदर्दी है। पहले मुझे जाँच कर लेने दीजिये, इसके बाद जान देने का इरादा कीजियेगा।"

सिद्दीक़ भाई ने उनको समझा-बुझाकर और हमारा हाल बतलाकर इसका वायदा ले लिया कि वह बहुत जल्द असली बातें मालूम करके हमको बता देंगी।

सोलह

आज राधानगर में बड़ी हलचल थी। विधान सभा के चुनाव का दिन था। सुबह से वोटरानियों के लिये मोटरो, लारियों, टाँगों और गाड़ियों का एक तांता बँधा हुआ था। एक पोलिंग स्टेशन कोतवाली के सामने भी था जिसमें तीन कैम्प लगे हुए थे और संयोग से उस पोलिंग स्टेशन पर पोलिंग अफ़्सरनी भी जमाल आरा बहन थीं। बेगम के जिम्मे तो सारे शहर में शान्ति बनाये रखना था। वह अपनी सरकारी मोटर में पुलिस की एक टुकड़ी के साथ इधर से उधर और उधर से इधर फिर रही थीं। हम और सिद्दीक़ भाई दोनों कोठे पर बैठे चुनाव का तमाशा देख रहे थे। एक तरफ़ शोर था—'अपने मर्दों की इज़्ज़त बचाने के लिये अख़्तर ज़मानी बेगम को वोट दीजिये।' दूसरी तरफ़ एक क़यामत मची थी—"सरकार की बाग़ी ख़लीक़ुन्निसा आपकी नुमाइन्दगी (प्रतिनिधित्व) करेंगी।" तीसरी तरफ़ भी हालाँकि वह शोर-ग़ुल नहीं था लेकिन एकाध नारा कभी-कभी सुनने में आ जाता था कि सरदारिनी साहबा को न भूलिये। यह आपकी पुरानी सेविका हैं। लेकिन उन सेविका महोदया के लिये कोई सफलता की आशा न दिखती थी इसलिये उनके कैम्प में औरतें कम और मक्खियाँ ज़्यादा थीं। अलबत्ता ख़लीक़ुन्निसा और अख़्तर ज़मानी के कैम्प खचाखच भरे थे। इन्द्रधनुष के पास भला इतने रंग कहाँ जितने रंग उस समय पोलिंग स्टेशन पर नज़र आ रहे थे। औरतें वोट देने क्या

आई थीं, मालूम होता था किसी की शादी में जैसे समधिनें उतरी हों। वह भड़कीले रंगीन लिबास और वह ज़ेवर कि न पूछिये। पोलिंग स्टेशन जगमग-जगमग कर रहा था। लगता था मानो किसी ने लगर फेंक कर आकाश गंगा को ज़मीन पर गिरा लिया हो। इन्द्र का अखाड़ा बना था पोलिंग स्टेशन, परिस्तान था परिस्तान। लेकिन एक बात थी कि अख़्तर ज़मानी के कैम्प में रेशम और कमख़्वाब का सैलाब आया हुआ था और ख़लीक़ुन्निसा के कैम्प में वह रंगीनियाँ और रेशम की वह सरसराहटें तो न थीं अलबत्ता सादगी यहाँ भी रंगीनी का मज़ा दे रही थी। उन दोनों का मुक़ाबिला करने से यह बात तो शायद एक अंधा भी देख लेता कि एक तरफ़ रुपये का ज़ोर था और दूसरी तरफ़ सिर्फ़ भक्ति काम कर रही थी। आख़ीर लंच की छुट्टी हुई। बेगम भी गश्त से लौट कर पोलिंग अफ़्सरनी यानी जमाल आरा बहन को लेकर घर में खाना खाने आ गईं। हम और सिद्दीक़ भाई पर्दे में रहे और उन दोनों के लिये घर के अन्दर मर्दाने में ही खाने की मेज़ लगवादी। उस वक़्त उन दोनों में चुनाव की ही बातें हो रही थीं। बेगम ने कहा—"क्या रंग है इस पोलिंग स्टेशन का? बाक़ी स्टेशनों पर तो ख़लीक़ुन्निसा दस आने जा रही हैं, अख़्तर ज़मानी पाँच आने और सरदारिनी एक आना। मेरा ख़याल तो है कि सरदारिनी की ज़मानत भी ज़ब्त हो जायगी।"

जमाल आरा बहन ने कहा—"यहाँ भी यही हाल है। ख़लीक़ुन्निसा को अब मुश्किल से रोका जा सकता है। और सरदारिनी की ज़मानत तो निश्चय ही ज़ब्त होगी। मैंने तो उनके कैम्प की एक एजन्टिनी और एक वोटरनी को गिरफ़्तार करा दिया है।"

बेगम ने कहा—"क्यों, ख़ैरियत तो है?"

जमाल बहन ने कहा—"वह एजन्टिनी साड़ी बंधवाकर एक लड़के

को ले आई जाली वोट दिलवाने। सूरत देख कर तो मैं न पहचान सकी। मगर जब मैंने उससे पूछा, मां का नाम? तो उसने मर्दानी आवाज़ निकाली? इस पर मुझे सन्देह हुआ और अब जो मैंने ग़ौर किया तो उन कुमारी जी की चोटी भी नक़ली थी। वह मैंने नोच कर उनके हाथ पर रखदी और उनको पुलिस के हवाले कर दिया। अब उन पर जालसाज़ी का भी मुक़दमा चलेगा और पर्दा तोड़ने का भी।"

बेगम ने कहा—"यहाँ तो ख़ैर ख़ली कुन्निसा हो ही जायँगी लेकिन अगर सारे देश में मर्दराज दल को कामयाबी हो गई तब सरकार की बड़ी करारी हार होगी।"

जमाल बहन ने कहा—"सरकार की हार तो सरदारिनी के हारने से ही हो गई।"

बेगम ने कहा—"ख़ैर, वह तो सरकार की नहीं, बल्कि फ़ख़रुन्निसा बेगम प्रोसिडेन्ट की व्यक्तिगत हार है। लेकिन यह हार तो सरकार की परम्परा, सरकार के सिद्धान्तों और सरकार के उद्देश्यों की हार होगी। और फिर मर्दों को मुश्किल से ही क़ाबू में रक्खा जा सकेगा।"

जमाल बहन ने कहा—"यह तो ख़ैर तुम ग़लत कह रही हो—

'आह को चाहिये एक उम्र असर होने तक'

अलबत्ता मर्दों की आज़ादी की नीव ज़रूर पड़ जायगी। मर्दों की तालीम और समाजी हालत भी ऊँची करने की कोशिश की जायगी।"

बेगम ने कहा—"और पर्दा?"

जमाल बहन ने कहा—"पर्दा तो ख़ैर यक़ीनन और फ़ौरन ख़त्म। अगर पूरे तौर पर न उठा तो भी पर्दे की क़ानूनी हैसियत ज़रूर ख़त्म हो जायगी और फिर यह एक सामाजिक चीज़ बन कर रह जायगी कि जिसका जी चाहे वह अपने मर्दों को पर्दा कराये और जिसका जी चाहे न कराये।"

बेगम ने कहा—"तो नतीजा क्या होगा, देख लेना कि बेशुमार सरफिरी औरतें मारे शौक़ीनी के अपने-अपने मर्दों को घरों से लेकर निकल पड़ेंगी। और फिर जो गड़बड़ी होगी उसके नतीजे पर भी ग़ौर कर लो। मर्द जिस वक़्त तक घरों में हैं उसी वक़्त तक ना.ज़ुकिस्तान का अमन क़ायम है। मर्दों के बाहर आने के बाद क्या आप यह समझती हैं कि यह ज़नानी फ़ौज उनकी रोक-थाक कर सकेगी? यह ना.ज़ुक पुलिस उनको क़ाबू में रख सकेगी? अपराधों के ढंग और उनकी रफ़्तार ही कुछ की कुछ होकर रह जायगी और सरकार को लाचार हो मर्दों का मुक़ाबिला करने के लिये हर विभाग में मर्द भी रखना पड़ेंगे। जिनकी मौजूदगी में औरतें कुछ ही दिन के बाद बिल्कुल बेकार साबित होंगी और धीरे-धीरे यहाँ मर्दों की हुकूमत होगी और औरतें ग़ुलाम बन जायँगी।"

जमाल बहन ने कहा—"तो फिर इसका मतलब यह हुआ कि अब रोटी पकाना और कपड़े सीना भी सीख लेना चाहिये।"

बेगम ने कहा—"ख़ैर, तुम तो मज़ाक़ कर रही हो, लेकिन मैं इस सिलसिले में पुरुष पर्दा रक्षक दल का दिल से समर्थन करती हूँ कि मर्दराज आन्दोलन औरतों के राज्य को ख़त्म करके रहेगा।"

जमाल बहन ने कहा—"ख़ैर, इसमें आपकी समर्थन की क्या ज़रूरत है। मर्दराज दल के हर प्लेटफार्म से पुकार-पुकार कर यही कहा जा रहा है कि हम शासन नहीं नारित्व चाहते हैं। वह चोरी-छिपे थोड़े ही कह रही हैं। तुमने मोहनी देवी का भाषण नहीं पढ़ा जो अखिल ना.ज़ुकिस्तान मर्दराज कांग्रेस की सभानेत्री के पद से उन्होंने दिया है और कई-कई जगह साफ़-साफ़ कहा है कि हम सिर्फ़ पर्दा उठवाना चाहते हैं। पर्दा उठा कर मर्द को बाहर निकाल कर देख

लीजिये, फिर तो हक़ हक़दार के पास आप ही पहुंच जायगा। उनका दृष्टिकोण तो यह है कि नाज़ुकिस्तान एक कलाबाज़ी खाया हुआ प्रदेश है, जहाँ हर बात उलट कर रह गई है। यही कारण है कि हमको अपनी ज़िन्दगी असली नहीं बल्कि कुछ बनावटी नज़र आती है। और हम इस बनावटी ज़िन्दगी से ऊब चुके हैं।"

बेगम ने कहा—"बकती है चुड़ैल। ऊब चुकी है! और जब मर्द बाहर आ जायँगे और पकड़-पकड़ कर औरतों को घरों में ठूँसेंगे तब इन चर्ख़ों को पता चलेगा कि ऊबना किसको कहते हैं। ज़रा पहुँचने दो मर्दों को विधान सभा में, और निकलने दो घरों के बाहर से, फिर देखना कि यह मर्द कैसे-कैसे नाकों चने चबवाते हैं।"

जमाल बहन ने कहा—"ख़ैर, ये बातें हमारी आपकी ज़िन्दगी में मुश्किल से होने पायेंगी। मर्दों को व्यावहारिक जगत में क़दम रखने की क्षमता आने के लिये अभी एक युग चाहिये। न अभी उनकी तालीमी हालत अच्छी है, न उनको बाहर की दुनिया का कोई तजर्बा है, न कोई अन्दाज़ा। अभी तो पर्दा उठेगा, फिर मर्द मुद्दतों में घरों से निकलने के योग्य हो सकेंगे। और जो निकलेंगे भी वह इस क़ाबिल न होंगे कि उन्हें ट्रेनिंग दी जाय। बुड्ढे तोते भी कहीं पढ़ा करते हैं। हाँ, अगली पीढ़ी ऐसी ज़रूर होगी जो इस क़ाबिल कही जा सके कि उसे कोई ज़िम्मेदारी सौंपी जा सके।"

बेगम ने कहा—"अच्छा, अगर यह क़ानून उठ गया पर्दे का, तो क्या तुम भाई साहब को निकालोगी बाहर?"

जमाल बहन ने कहा—"क्यों क्या हुआ? तुम्हारी क़सम हाथ में हाथ डाल कर अपने मर्द के साथ झूमर बाग़ और जौशन पार्क में घूमूंगा।"

बेगम ने जलकर कहा—"बेशर्म हैं आप। अरे पगली जो तेरे मर्द

को स्त्रियाँ घूरा करेंगी, और देखा करेंगी ललचाई हुई नज़रों से उस वक़्त क्या करेगी तू ?"

जमाल बहन ने कहा—"कहूँगी क्या, ख़ुश होऊँगी कि जैसा मर्द मेरा है वैसा किसी का नहीं।"

बेगम ने कहा—"और जो किसी औरत ने मोह लिया तो ?"

जमाल बहन ने कहा—"तो क्या, एकाध हफ़्ता अपनी क़िस्मत को रो-पीट लूँगी। और फिर कोई गबरू जवान अपने लिये ढूँढ लूँगी।"

बेगम ने तंग आकर कहा—"ख़ुदा बचाये तुझ जैसी बेग़ैरत से। शर्म तो नहीं आती ये बातें करते। मैं तो अपने मियाँ जी से कहूँगी कि कान खोल कर सुन लो, घर के बाहर क़दम निकाला तो पैर तोड़ दूँगी।"

जमाल बहन ने कहा—"जी, और क्या, जैसे आपके तोड़े उनका पैर टूट ही तो जायगा, उल्टे आपही की कलाई मोच खा जायगी।"

बेगम ने कहा—"अच्छा, चाहे तुम देख लेना.........ख़ैर, छोड़ो भी इस ज़िद को। पोलिंग स्टेशन पर पोलिंग का वक़्त आ गया है। मैं जा रही हूँ शकुन्तला स्क्वायर वहाँ के पोलिंग स्टेशन पर डर है कि झगड़ा न हो जाय।"

वे दोनों बातें करती हुई बाहर निकल गईं। सिद्दीक़ भाई तो उनकी बातों पर बिना कुछ सोचे-समझे हँस रहे थे, मगर हम गम्भीरता के साथ सोच रहे थे कि नाज़ुकिस्तान आते ही बेगम तो ऐसी मालूम होती हैं जैसे पीढ़ियों से इसी देश की रहने-सहने वाली हैं। मर्दों की मुख़ालिफ़त, यहाँ की तेज़ से तेज़ औरत ज़्यादा से ज़्यादा इतना ही कर सकती थी जितनी बेगम कर रही थीं। और हमको, बेगम की

बातों पर ग़ुस्सा आ रहा था कि क्या कहें। मगर क्या करते, मजबूर थे, बेबस थे, मर्द थे। उन दोनों के जाने के बाद हम दोनों फिर कोठे पर पहुँच गये। चुनाव की गर्मा-गर्मी पूर्ववत् थी बल्कि जोश-ख़रोश और भी बढ़ गया था। उस वक़्त ख़ली.कुन्निसा के कैम्प में सचमुच तिल धरने की जगह न थी। टाँगों पर टाँगे और लारियों पर लारियाँ वोटरानियों से खचाखच भरी चली आ रही थीं। अख़्तर ज़मानी बेगम के कैम्प में भी .ख़ैर हुजूम तो बहुत था मगर वह बात न थी। उनके कैम्प पर जो झंडा लहरा रहा था उस पर बुर्क़ की तस्वीर थी और ख़ली.कुन्निसा के कैम्प पर मर्दराज दल का क़ौमी निशान, यानी झंडे पर मूँछ बनी हुई थी और झंडा लहरा रहा था। वास्तव में उस वक़्त चुनाव तो क़रीब-क़रीब ख़त्म हो चुका था मगर चूँकि यही पोलिंग स्टेशन केन्द्रीय पोलिंग स्टेशन था इसलिये बाक़ी सारे पोलिंग स्टेशनों से चार बजते ही परचियों के बक्स यहीं आ गये और मत गिनना शुरू हो गये। अब सारा शहर सिमट कर जैसे यहीं आ गया था और फल की घोषणा का इन्तज़ार था। एकाएक थोड़ी देर के बाद सारा पोलिंग स्टेशन 'ख़ली.कुन्निसा ज़िन्दाबाद' 'मर्दराज दल ज़िन्दाबाद' 'मर्दराज ज़िन्दाबाद' के नारों से गूँज उठा और देखते ही देखते अख़्तर ज़मानी बेगम के कैम्प में सन्नाटा छा गया। औरतों की भारी भीड़ नारे लगाती, .ख़ुश होती, उछलती कूदती ख़ली.कुन्निसा के कैम्प में नज़र आ रही थी। हमने देखा कि थोड़ी ही देर में एक गम्भीर और शान्त प्रकृति की महिला को बहुत सी औरतें हारों और फूलों में लादे हुए अपने घेरे में लिये पोलिंग स्टेशन में पहुँच गईं। यहाँ उनको देखते ही 'ख़ली.कुन्निसा ज़िन्दाबाद' के नारे फिर लगाये गये और आख़िर ख़ली.कुन्निसा बेगम ने एक ऊँची सी जगह खड़े होकर पहले तो हाथ जोड़ कर लाखों औरतों के मजमे को सलाम किया फिर किसी ने एक

माइक्रोफ़ोन उनके सामने लाकर रख दिया और वह बोलने लगीं :—

"बहनों !

आप मुझको मुबारकबाद न दीजिये, बल्कि मैं आपको मुबारकबाद देती हूँ कि आप, सरकार की सारी धांधली के बावजूद, रुपये की बारिश के मुक़ाबिले में अपनी ग़रीबी को लेकर सिर्फ़ अपने सच्चे जोश और ईमानदारी से कामयाब हो गईं। यह कामयाबी मेरी नहीं बल्कि आपकी है। आपने अपनी नुमाइन्दगी का जो भार मेरे कमज़ोर कंधों पर रक्खा है, दुआ कीजिये कि मैं उसे उठा कर चल सकूँ और आपकी सेवा इस मूँछदार झंडे के नीचे कर सकूँ। हम हक़दार को हक़ दिलाने के लिये उठे हैं। औरत का फ़र्ज़ उसको याद दिलाना है। ज़िन्दगी को तमाशा नहीं बल्कि ज़िन्दगी के रंग में देखना है। ख़ुदा हमको कामयाब करे।"

इस संक्षिप्त भाषण के बाद एक जुलूस सा बनाया गया। एक तख़्त पर एक कुर्सी बिछाई गई जिस पर खलीक़ुन्निसा हारों में लदी बैठी थीं और जुलूस एक हिलोरें लेते समुद्र की भाँति चल पड़ा।

— —

सत्तरह

मेहरोत्रा कमबख़्त, वही सब-जजिन का पति, वही हमारी जीती जागती व्यकुलता और हमारा सुलगता हुआ जहन्नुम सचमुच हमारे लिये एक परेशानी बना हुआ था। हमने उसको आज तक देखा भी न था मगर वह अजीब-अजीब आकृतियों के साथ हमारे स्वप्न में आता, हमारी कल्पना में बसा हुआ था और हम किसी वक़्त भी उनके तकलीफ़देह ख़याल से अपने को सुरक्षित न पाते थे। इस दिन-रात की जलन ने आख़िर हमको घुलाना शुरू कर दिया! भूख हमारी ग़ायब होगई, नींद हमारी रुख़सत होगई, इत्मीनान हमारा चला गया और अब तो बात बात पर शक और सन्देह हमको घेर लिया करते थे। यह आज बेगम ने बालों में फूल क्यों लगाया है? घर से तो बिना फूल लगाये गई थीं। हो न हो यह फूल उसी कमबख़्त ने अपने हाथों से उनके बालो में लगाया होगा। हमने फूल को ध्यान से देखा। सुर्ख़ रङ्ग का फूल एकाएक अपनी शक्ल बदलने लगा। सचमुच वह तो फूल था ही नहीं। एक मर्द का खिला हुआ चेहरा था। मूछें लहराती हुई। क्यों न खिलता, बेगम के सिर चढ़ा हुआ था। सौता बनकर सिर चढ़ा था, हँस रहा था, यानी हमको चिढ़ा रहा था। जैसे कोई किसी की चीज़ पर मुख़ालिफ़ाना क़ब्ज़ा करके फ़ातिहाना हँसी हँसे। बेशक वह फ़ातेह (विजेता) था। उसने बेगम के दिल पर क़ब्ज़ा कर रक्खा था। वह बेगम को 'सरकार' कह कह सम्बोधित कर सकता था। उसने बेगम को

शीशे में उतार रक्खा था। बस हम इन्हीं विचारों में खोकर रह गये और उस समय चौंके जब बेगम ने बच्ची को आवाज़ दी—"शूकिया !"

मेरी नन्ही मुन्नी गुड़िया दौड़ती हुई आई और मां की गोद में उचक कर पहुँच गई। उसने जाते ही पूछा—"अम्मी क्या लाईं हमारे लिये ?"

और बेगम ने सिर से वही फूल निकालते हुए कहा -- " यह देखो, कैसा अच्छा फूल है। जैसी फूल सी तुम वैसा ही यह फूल। कैसी अच्छी खुशबू है इसकी और कैसा प्यारा प्यारा है।"

शोकिया ने वह फूल ले लिया जो अभी हमको इन्सानी चेहरा नज़र आ रहा था। जो सवाल हमको करना था वह शोकिया ने कर लिया—

"यह फूल कहाँ से मिला ?"

बेगम ने कहा—"कोतवाली की मालिन ने मुझको दिया था। मैंने अपनी बेटी के लिये बालों में लगा लिया था कि जब घर जाऊँगी तो अपनी गुड़िया को दूँगी।"

लीजिये, यह शक भी दूर हो गया कि मेहरोत्रा ने फूल लगाया होगा। इसी तरह के सैकड़ों शक बात-बात पर पैदा होते थे और फिर अपने आप दूर होजाया करते थे। लेकिन मेहरोत्रा वाला शक तो दिन पर दिन यक़ीन बन रहा था। बेगम का आना जाना वहाँ बना था। अक्सर रात का खाना भी वहीं होता था और हमारी ज़बान सिद्दीक़ भाई और जमाल बहन ने बन्द कर रक्खी थी कि जब तक उनकी जांच पूरी न होजाय उस वक़्त तक हम कोई बात ज़बान से न निकालें। लेकिन हमारा ग़म अब कोई राज़ न रहा था। हर एक को मालूम था कि हम किस आग में जल रहे हैं। आख़िर एक दिन मौक़ा देखकर ख़ुदा-

बख़्श ने डरते डरते कहा—"हुज़ूर अगर बुरा न मानें तो एक बात कहूँ।"

हम सुपारी काट रहे थे अपनी धुन में बैठे हुए। उसके इस तरह कहने पर अपने विचारों का सिलसिला तोड़कर कहा—"क्या बात है ?"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"हुज़ूर के ग़म को मैं समझता हूँ। मगर इस बात में लापरवाही भी ठीक नहीं है। उस तरफ़ से पूरे दाँव चले जा रहे हैं और आप चुप बैठे हैं। क्या आप उस वक़्त चौंकियेगा जब पानी सर से ऊँचा हो जायगा और वह कमबख़्त मेहरोत्रा अपना पूरा क़ब्ज़ा बेगम साहब पर जमा लेगा ?"

हम हैरान थे कि इसको मेहरोत्रा का नाम कैसे मालूम होगया। लेकिन हमने अपनी हैरानी को छिपाते हुए कहा—"तो फिर आख़िर मैं क्या करूँ और मैं मर्दज़ात आख़िर कर भी क्या सकता हूँ।"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"हुज़ूर चाहे मानें या न मानें, इस कमबख़्त मेहरोत्रा ने बेगम साहबा को उल्लू का कुश्ता ज़रूर खिला दिया है।"

हमने कहा—"ख़ैर, ये सब जहालत की बातें हैं। मैं इन इन बातो का क़ायल नहीं।"

ख़ुदाबख़्श ने आँखें निकाल कर बड़े दावे के साथ कहा—"हुज़ूर, आप माने या न मानें, मगर मैं तो आज़माई हुई बात बताता हूँ। यहाँ इन टोटकों का बड़ा ज़ोर है। पकरिया वाली मसजिद में एक मुल्लानी जी रहती हैं। क्या बात है उनकी। ऐसा हुक्मी अमल पढ़ती हैं कि फिर उसकी काट न होसके। ख़ुद मेरे लड़के की बीवी ने एक और मर्द के पंजे में फँसकर लड़के को छोड़ रक्खा था। न रोटी कपड़ा

देती थी और न बीमारी इलाज से उसे कोई मतलब रहा था। दिन रात वह थी और उसका नया मर्द। आख़िर में उन मुल्लानी जी की ख़िदमत में हाजिर हुआ और रो-रोकर मैंने पूरा हाल सुना दिया। मुल्लानी जी ने अपने अमल के ज़ोर से मुझे बताया कि तुम्हारी बहू को काबू में लाने के लिये तुम्हारे लड़के के सौता ने बड़ा ज़बरदस्त अमल पढ़वाया है। उल्लू का कुश्ता खिलाया गया है और अब वह सोलह आने उस मर्द के क़ब्ज़े में है। आख़िर मैंने बड़ी ख़ुशामद की तो मुल्लानी जी का दिल पसीज गया और उन्होंने बताया कि मैं चालीस दिन का एक चिल्ला खींचूँगी। यह चिल्ला नदी के किनारे खींचा गया। रोज़ रात को ठीक बारह बजे नदी के अन्दर खड़ी होकर वह अमल पढ़ती थीं। आख़िर चालीस दिन के बाद चिल्ला ख़त्म करके उन्होंने मुझे एक तावीज़ दिया कि इसे बन्दर की खोपड़ी में रखकर किसी तरह उस मर्द के मकान की छत पर उछाल दो जो तुम्हारे लड़के की बीवी को फँसाये हुए है। हुजूर, मैंने ऐसा ही किया। अब आपसे क्या कहूँ कि कैसा असर हुआ है उसका। दूसरे ही दिन वह मेरे लड़के से आकर मिल गई। हज़ारों ख़ुशामदें उसकी कीं और तब से आज तक फिर उस तरफ़ का रुख़ भी नहीं किया।"

हमने ग़ौर से यह दास्तान सुनकर कहा—"तो फिर उन्हीं मुल्लानी जी की मदद से तुमने अपनी बीवी पर क़ब्ज़ा क्यों न किया?"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"हुज़ूर, वहाँ तो क़िस्सा ही दूसरा है। वह फँसी हुई थोड़े ही है। वह तो निकाह कर चुकी है और जिस एक और मर्द को उन्होंने डाल लिया है उसकी मुझे परवाह नहीं। जब वह मेरे अलावा किसी और मर्द से शादी कर चुकीं तो अब मेरी बला से। हज़ार मर्द रक्खें तो भी मुझे क्या?"

हमने कहा—"ख़ैर उस मर्द को जाने दो जिसे डाल लिया है। मगर उसपर अमल क्यों नहीं कराते जिसे तुम्हारी बीवी ने शौहर बना रक्खा है।"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"हुज़ूर उस पर अमल का असर नहीं हो सकता और न मुल्लानी जी अमल पढ़ने पर तैयार होंगी। उनकी शर्त तो यह है कि अमल उसके ख़िलाफ़ पढ़ेंगी जो नाजायज़ तौर पर फँसा हुआ हो। विवाहित मर्द के ख़िलाफ़ अमल नहीं पढ़ सकतीं। इसीलिये तो कह रहा हूँ कि मेहरोत्रा वाली बात अभी क़ाबू की चीज़ है। अभी उसपर और बेगम साहबा पर अमल का असर हो सकता है।"

हालाँकि हम इन बातों के दिल से क़ायल न थे पर डूबते को तिनके का सहारा बहुत होता है। हमने सोचा कि आख़िर इसमें हर्ज ही क्या है। क्या ताज्जुब है कि इसी का कुछ असर हो। लेकिन अब सवाल यह था कि हम बेगम की इजाज़त के बग़ैर बाहर कैसे निकलें। यह तो ठीक है कि वक़्त में जाते। दो क़दम पर वह पकड़िया वाली मसजिद थी। लेकिन फिर भी जबसे पर्दे में बैठे थे, आज तक उनकी इजाज़त के बिना घर से बाहर कभी न निकले थे। इसलिये हमने ग़ौर करने के बाद कहा—"मगर मैं जाऊँगा कैसे मुल्लानी जी के पास, बिना बेगम से पूछे?"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"तो उनको खबर कैसे होगी? आप तो यहाँ से सिद्दीक़ मियाँ के घर जाने के बहाने डोली पर रवाना हो जायें। मैं बुर्क़ा पहन कर साथ साथ होलूँगा। पास ही तो है वह मसजिद।"

हमने कहा—"न बाबा, यह ग़लत है। मैं इस तरह की चोरी नहीं कर सकता, और न ऐसी बात मुझसे आगे करना। उनको ख़बर हो या न हो। पर मेरे दिल से यह कैसे हो सकेगा कि मैं उनके विश्वास को चोट पहुँचाऊँ।"

ख़ुदाब.ख़्श ने ग़ौर करने के बाद कहा—"अच्छा यों सही, मैं मुल्लानी जी को यहाँ लिये आता हूँ।"

हमने कहा—"हाँ यह तो हो सकता है कि मैं पर्दे में रहूँगा और बात भी ख़ुद न करूँगा। .ग़ैर औरत हैं।"

ख़ुदाब.ख़्श ने कहा—"ए हुज़ूर उनसे क्या पर्दा। वह तो बड़ी महुँची हुई अल्लाहवाली हैं।"

हमने कानों पर हाथ रखकर कहा—"कुछ भी सही, मगर हैं तो औरत, .ग़ैर औरत। न मैं सामने आऊँगा न अपनी आवाज़ उनको सुनाऊँगा।"

ख़ुदाब.ख़्श ने कहा—"अच्छी बात है। मैं ख़ुद आपकी तरफ़ से, जो कुछ आप कहेंगे, कहता जाऊँगा। तो बुलालूँ उनको? ऐसे में बेगम साहबा भी दिन भर के लिये गई हुई हैं।"

हमने कह दिया—"बुलालो भाई। यह भी करके देख लें।"

थोड़ी ही देर में ख़ुदाबख़्श ने आकर कहा—'सरकार! वह मुल्लानी जी तशरीफ़ ले आई हैं। आप अन्दर हो जाइये तो बुलालूँ।"

हम दौड़कर कमरे में चले गये और ख़ुदाबख़्श ने भी बुर्क़े का नक़ाब मुँह पर डालकर मुल्लानी जी को अन्दर बुला लिया।

मुल्लानी जी सफ़ेद कपड़े पहने हाथ में लम्बी सी तसबीह लिये, पोपले मुँह में पान दबाये तशरीफ़ लाईं। ख़ुदाब.ख़्श ने उनको कुर्सी दी तो फ़रमाया—"तौबा तौबा! मैं इस फ़िरङ्गी चीज़ पर नहीं बैठ सकती। यह त.ख़्त शायद पाक होगा। मैं इस पर बैठती हूँ।" और यह कहकर त.ख़्त पर बैठ गईं। ख़ुदाबख़्श ने उनके पास ही ज़मीन पर बैठकर बुर्क़े के अन्दर से ही मेहरोत्रा और बेगम का सारा क़िस्सा पूरी तफ़सील के साथ उनको सुना दिया। वह माला फेरती

जाती थीं और सारा क़िस्सा भी सुनती जाती थीं। आख़िर सारा क़िस्सा सुनकर फ़रमाया—"सब कुछ उसके इख़्तियार में है। वह जो चाहे करे। लेकिन चूँकि शरा के लिहाज़ से भी यह बात .गलत हो रही है इसलिये मैं अमल पढ़ दूँगी।"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"मुल्लानी जी, बस ऐसा अमल पढ़िये कि उस कमब.ख्त मेहरोत्रा को एड़ियाँ रगड़वा दीजिये। जैसा उसने हमारे सरकार को परेशान किया है, ख़ुदा करे आपका अमल उसको भी चैन से न बैठने दे।"

मुल्लानी जी ने कहा—"बुरी बात है। तुमको तो अपने मालिक के लिये अपनी मालकिन की मुहब्बत वापस चाहिये। ख़ुदा ने चाहा तो वह वापस मिल जायगी। तुम मेहरोत्रा को तकलीफ़ पहुँचाने का ख़याल दिल से निकाल दो। इस तरह नियत में खोट पैदा हो जाती है। हाँ, तो तुमने सारे खर्चे बता दिये हैं अपने मालिक को?"

ख़ुदाब.ख्श ने कहा—"जी नहीं, अब आप ही बतलादें।"

मुल्लानी जी ने कहा—"मैं क्या बतलादूँ। क्या कुछ मुझको लेना है? चालीस दिन तक मुझे रोज़ाना नदी के किनारे जाना होगा और आधी रात के बाद वापसी हुआ करेगी। लेहाज़ा चालीस दिन तक इक्के का किराया। आने-जाने का चालीस रुपया लेती है मेरी इक्के वाली। वहाँ मैं रोज़ाना सवा सेर दूध पढ़-पढ़ कर पीती हूँ। उसकी क़ीमत का अन्दाज़ा करलो। और इस ख़ास मामले में चूँकि दूसरा आदमी मुसलमान नहीं बल्कि हिन्दू है, इसलिये मुझे कुछ रुपया नदी में भी डालना होगा जिसमें कि अगर उधर से कुछ जादू हुआ तो उसका असर भी जाता रहे। इन सब चीज़ों में लगभग सवा सौ रुपये का खर्च होगा और बाद में तुम्हारे मालिक को जो तौफ़ीक़ हो मुझे भिजवादें। .गरीब औरतों में तक़सीम कर दूँगी, अपनी ख़ास निगरानी में।"

हमने ख़ुदाबख़्श को इशारे से बुलाकर कहा—"हटाओ भी इस झगड़े को। मैं रुपये के ख़याल से नहीं कह रहा हूँ बल्कि कुछ ऐसा महसूस हो रहा है, जैसे अपनी क़िस्मत के ख़िलाफ़ मुक़दमा दायर किया जा रहा है।"

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"हुज़ूर, आप मेरे कहने से अमल पढ़वाकर तो देखें। आख़िर इसमें हर्ज ही क्या है। मेरे लड़के के लिये जो अमल पढ़ा था उसमें कोई चार ऊपर पचास रुपये लगे थे। मैंने अपनी ग़रीबी के बावजूद कहीं न कहीं से इन्तज़ाम कर दिया था। इस मामले में वह कहती हैं कि नदी में भी कुछ रुपया डालना है। दूसरे हुज़ूर के लिये, ख़ुदा न करे, कोई दिक़्क़त तो है नहीं, आप तो बस रुपये दे दीजिये, फिर आपसे कोई मतलब नहीं। फिर फ़तेह ही फ़तेह है।"

हमने फिर कुछ ग़ौर करना शुरू कर दिया कि इतने में मुल्लानी जी ने ख़ुदाबख़्श को पुकार कर कहा—"मियाँ ख़ुदाबख़्श! अपने मालिक से कह दो कि रुपये का मामला तो यह है कि जितना गुड़ डालेंगे उतना ही मीठा पायेंगे। मैं तो इनकी बेगम को आज ही बुला सकती हूँ, मगर मैं जानती हूँ कि हज़ार-डेढ़ हज़ार की रक़म इसके लिये निकाली न जा सकेगी इसलिये मैंने यह कम से कम रक़म बतादी है। अब इसमें किसी कमी की गुंजायश नहीं है। और न मुझे इसमें से कुछ लेना है।

ख़ुदाबख़्श ने कहा—"अरे भला आप क्या लेंगी। इस तरह लेती होतीं तो आज रुपये रखने की जगह न होती।"

हमने ख़ुदाबख़्श से कहा—"अच्छा, मेरा सन्दुक़चा उठा लाओ।"

ख़ुदाबख़्श दौड़ कर सन्दुक़चा उठा लाया और हमने यह बला टालने के लिये एक सौ पच्चीस रुपये निकाल कर ख़ुदाबख़्श के हाथ

में गिन दिये कि लो मुल्लानी जी को देकर रुख़्सत कर दो। कहीं बेगम न आ जायें कि और मुसीबत आये।

ख़ुदा बख़्श ने वह रुपया मुल्लानी जी के हवाले कर दिया जिसको अच्छी तरह गिन कर मुल्लानी जी ने कहा—"अब मैं इन्शाअल्लाह आज सारे इन्तज़ाम पूरे करके कल से अमल शुरू कर दूँगी। लेकिन इस बीच में तुम्हारे मालिक गोश्त, अंडा, मछली, प्याज़ और लहसुन बिल्कुल न खायें। और हो सकता है उनको कुछ डरावने ख़्वाब दिखाई दें। इसलिये यह तावीज़ उनके तकिये में रख दो। और उनसे कह दो कि रात को सोते वक़्त तीन बार यह कह लिया करें—भाग सिड़ी दीवाना आया, भाग सिड़ी दीवाना आया, भाग सिड़ी दीवाना आया।"

ख़ुदा बख़्श ने यह अमल भी याद कर लिया और मुल्लानी जी से कहा कि मैं ख़ुद यह पढ़ कर फूँक दिया करूँगा।

मुल्लानी जी ने इस पर कोई ज़ोर न दिया कि यह अमल ख़ुद हमको ही पढ़ना चाहिये बल्कि हिदायत फ़रमाई कि कोई भी पढ़ कर फूँक दिया करे। बस इतना ही काफ़ी है।

मुल्लानी जी तो उधर रवाना हो गईं और इधर हम अजीब कशमकश में पड़ गये। दिमाग़ कहता था कि यह क्या अंधविश्वास है और दिल कहता था कि मेहरोत्रा के फंदे से बेगम को छुड़ाने के लिये सब कुछ जायज़ है।

अट्ठारह

औरतों के दिल पर सौत के सिलसिले में क्या बीतती होगी इसका कुछ न कुछ अन्दाज़ा हमको भी अपनी अकथनीय तकलीफ़ से हो रहा था। किसी काम में जी न लगता था। हर वक्त जैसे एक उलझन सी रहती थी। दिन रात जैसे अंगारों पर लोटा करते थे। जी चाहता था कि हमारे पर लग जायें और हम इस मुल्क से फिर अपने उसी हिन्दुस्तान की तरफ़ उड़ जायें जहाँ से विरक्त होकर यहाँ आ फँसे थे! मगर यहाँ की ज़मीन हिन्दुस्तान की ज़मीन से ज्यादा सख्त थी और यहाँ का आसमान हिन्दुस्तान के आसमान से भी ज्यादा दूर था। आखिर किसी न किसी तरह जमाल बहन अपनी जाँच का नतीजा सुनाने के लिए आईं और हम अपनी क़िस्मत का फ़ैसला सुनने के लिए तैयार हो गये। सिद्दीक़ भाई ने आते ही कहा—"मैं उनको अन्दर ही बुलाये लेता हूँ। तुम खुद सारे हालात सुन लेना।"

हम पर्दे में हट गये तो सिद्दीक़ भाई ने जमाल बहन को अन्दर बुला लिया। उन्होंने आते ही कहा—"तसलीम अर्ज़ करती हूँ भाई साहब।"

अब हम भी आवाज़ का पर्दा जमाल बहन से न करते थे इसलिये हमने कहा—"आदाब अर्ज़ बहन! कहिये आपने क्या सुराग़ लगाया मेरी चोर का?"

जमाल बहन ने कहा—"साहब, अजीब हालात हैं वहाँ के। मैंने बड़ी चालाकियों से सही हालात मालूम करने की कोशिश की। मगर अब तक हालत यह है कि न मैं आपके शक को ग़लत कह सकती हूँ, न मैं यह कह सकती हूँ कि सईदा ने सचमुच मेहरोत्रा के जाल में फँसकर आपसे बेवफ़ाई की है।"

हमने कहा—"यह क्या बात हुई बहन? आप मेरा दिल रखने के लिये कोई बात छिपाने की कोशिश न कीजिये। इसलिये कि मैं तो इस सिलसिले में हर बुरी से बुरी खबर सुनने के लिये भी तैयार हूँ। मेरे दिल पर जितना असर होना चाहिये वह तो हो ही चुका अब इससे ज्यादा क्या होगा?"

जमाल बहन ने कहा—"नहीं, मैं कोई बात छिपा नहीं रही हूँ बल्कि यह बिलकुल सच कह रही हूँ। वहाँ का हाल यह है कि मेहरोत्रा की श्रीमती जी को दिन-रात होश ही नहीं रहता। बस वह कचेहरी तो किसी न किसी तरह चली जाती हैं। वहाँ से आईं, नहाईं धोईं, कपड़े बदले और क्लब चली गईं। अब क्लब में वह हैं और शराब। यहाँ तक कि क़रीब-क़रीब रोज़ रात को कभी एक बजे, कभी दो बजे, क्लब की एकाध मेड उनको कोठी पहुँचाती है, और वह नशे में चूर बिस्तर पर डाल दी जाती हैं। तन-बदन का होश नहीं रहता उनको। सारी रात इसी तरह पीकर, उगल कर, नाच कर, कूद कर बिताती हैं और सुबह को उस वक्त जागती हैं जब खुमार चढ़ा होता है। नहाती हैं और कचेहरी पहुँच जाती हैं। शराब कमबख्त ने न घर का रक्खा न बाहर का। न उसको पति का होश है न किसी का। उधर उनके पति महाराज का यह हाल है कि वह अपना इधर-उधर दिल बहलाना चाहते हैं। आदमी हैं मनचले, दूसरे पत्नी उनके लिए अपरिचित सी होकर रह गई है। इसी

कारण वह भी अपनी सभा गर्म रखते हैं। इसमें शक नहीं कि सईदा से उनको बेहद लगाव है लेकिन मैं आपसे सच कहती हूँ कि अब तक सईदा ने शायद उनको 'लिफ्ट' नहीं दी है।"

हमने कहा—"क्या बातें करती हैं आप बहन, यह 'लिफ्ट' देना नहीं है तो और क्या है कि उनके तोहफे कुबूल करती हैं, उनके ख़त वसूल करती हैं, उनके यहाँ आती जाती रहती हैं। यह सब लिफ्ट देना नहीं तो और क्या है ?"

जमाल बहन ने कहा—"यह सब कुछ तो है, मगर मेरे पास इस बात का लिखित सबूत है कि सईदा उनको इस रंग में देखना नहीं चाहतीं जिस रंग में वह अपने को सईदा के सामने पेश कर रहे हैं। देखिये, सईदा का एक ख़त मैंने रास्ते में ही उड़ा लिया है।

सिद्दीक़ भाई ने जमाल बहन से वह ख़त लेकर हमको दिया और हमने पढ़ना शुरू किया :—

"अच्छे देवर जी, नमस्ते !

मैं तीन चार दिन से क्यों ग़ायब हूँ, मैंने आपके तीन परचों का जवाब क्यों नहीं दिया, इसको शायद मुझसे ज़्यादा आप ख़ुद जानते होंगे। आपकी पत्नी सरला मेरी सहेली है। वही सहेली जिसको बहन का दर्जा प्राप्त है। और इस रिश्ते से आप सिर्फ़ मेरे देवर हो सकते हैं, इससे ज़्यादा और कुछ नहीं मैंने कई बार आपको ज़बानी और लिख कर समझाया है और आज फिर यह बात बताने की कोशिश करती हूँ कि मेरे नज़दीक इन्सानियत का सबसे बड़ा पाप यही है कि किसी के विश्वास को टट्टी बनाकर उसकी आड़ में शिकार खेला जाय। दूसरे, आपको यह मालूम है कि मैं विवाहिता हूँ। मैं ख़ुद भी किसी की विश्वासपात्र हूँ। हो सकता है कि आपके लिये

विश्वासघात कोई बुरी बात न हो, लेकिन मैं उस पाप की कल्पना से ही काँप जाती हूँ। मेरा बेज़बान शौहर मेरी मुहब्बत और मेरी वफ़ा का उम्मीदवार इसलिये नहीं है कि मैं दूसरों के शौहर पर मुहब्बत के खज़ाने लुटाती फिरूँ और उसकी अमानत में खयानत करूँ। आपने जो कुछ मेरी क़द्रदानी फ़रमाई है, उसका शुक्रिया अदा करती हूँ। काश, यह सारी क़द्रदानी और स्नेह निस्वार्थ होती। लेकिन आपने मुझको दोहरे पाप का मार्ग दिखाया है। एक तरफ़ तो मै अपनी सहेली सरला की इज्ज़त लूटूँ, दूसरी तरफ़ अपने शौहर की अमानत में खयानत करूँ। मैंने इस सिलसिले में अपने को जाँचा, परखा, सारे विश्वासो को सामने से हटाकर देखा लेकिन किसी भी हैसियत से मैं आपकी इन इच्छाओं को पूरा करने के लिये तैयार नहीं हूँ। आपने उस दिन मेरा हाथ पकड़कर मुझसे वचन लेना चाहा और खुद वफ़ादारी की क़सम खाई, लेकिन आपको यह सोचना चाहिये था कि बेवफ़ा वफ़ा का वचन दे ही नहीं सकते। आपकी बेवफ़ाई तो सिद्ध है कि आप सरला से बेवफ़ाई कर रहे हैं। और अगर मैं भी अपने पति से बेवफ़ाई करके, वफ़ा करने का वचन दूँ तो वफ़ा के नाम पर धिक्कार है।

मैं आपको पसन्द करती हूँ। आपकी प्रतिभा और बुद्धि की प्रशंसक हूँ। आपकी संगति में अपने सारे दुःख और चिन्ताओं को भूल जाती हूँ। बेशक मैंने यह भी कहा है कि सरला बदनसीब है जो इस साकार शराब को छोड़ कर उस शराब में मस्त है जिसका नशा चढ़ता उतरता रहता है। लेकिन इसके मानी यह तो नहीं हो सकते कि मैंने आपको अपने लिए पसन्द कर लिया था बल्कि मैं तो आपकी निगाहों का मतलब भी अर्से तक न समझ सकी। आपने जब मुझको समझाया तो मैं काँप उठी। और अब मैं हैरान हूँ कि

आपको आख़िर किस तरह समझाऊँ। आप मुझको प्रिय हैं और बहुत ही प्रिय हैं। आपको छोड़ना नहीं चाहती, लेकिन यह भी चाहती हूँ कि आप मुझे छोड़ने पर मजबूर न करें। मुझे उम्मीद है कि आज आप मुझसे वायदा करने में मेरी ख़ातिर अपने दिल पर पत्थर रख लेंगे कि आगे आप हमेशा मुझको अपनी बहन समझकर मिलेंगे नहीं तो मैं अपने दिल पर पत्थर रखकर आपका ख़याल छोड़ने की कोशिश करूँगी। जानती हूँ कि मुश्किल से कामियाबी होगी लेकिन मौत से बचने के लिये परहेज़ के तौर पर अच्छी से अच्छी चीज़ भी रोगिनी को छोड़ना पड़ती है।

आपकी शुभाचिन्तक

—सईदा

इस ख़त को पढ़कर हमारी आँखें खुल गईं। मालूम यह हुआ जैसे सूखे दानों पर पानी पड़ गया। मेरी सईदा मेरी नज़रों में उतनी ही ऊपर उठ गई जितना उसको होना चाहिये था। मुझे क्या पता था कि मेरी बीवी ऐसी नेक और पाकबाज़ है। दिल ही दिल में हमने अपने को धिक्कारा कि ऐसी पाकबाज़ बीवी के बारे में इस तरह के विचार हमारे मन में उत्पन्न हुए। लेकिन कहीं ऐसा तो नहीं कि जमाल बहन ने हमारा दिल-रखने को यह ख़त खुद लिख दिया हो। लेकिन लिखावट सईदा की थी। बिलकुल सईदा की। लेकिन अगर यह ख़त सचमुच सईदा का ही है तो ऐसे उपयोगी ख़त को जमाल बहन ने रास्ते से ही क्यों उड़वा लिया। मेहरोत्रा तक जाने क्यों न दिया? कहीं ऐसा तो नहीं कि इस मामले में जमाल बहन भी सईदा की मेरी हों और सईदा से कहकर यह ख़त लिखाया हो कि हमको भी इत्मीनान हो जाय और सईदा के लिए रास्ता भी साफ़ रहे। सचमुच इन औरतों का क्या भरोसा। क्या

पता कि खुद जमाल बहन का भी इसी तरह का कोई मामला हो जिसका भेद बेगम को मालूम हो इसीलिए बेगम के भेद छिपाये रखना भी इनका फ़र्ज़ हो गया हो। अगर ऐसी कोई बात नहीं है तो फिर जमाल बहन के चेहरे पर यह फ़िक्र और परेशानी क्यों है ? ऐसे ख़त के बाद तो उनका चेहरा खुशी से खिल उठना चाहिए था।

हम इन्हीं भिन्न-भिन्न विचारों में डूबे थे कि सद्दीक़ भाई ने कहा—"इस खत को देखकर तो इत्मीनान हो गया ? मरे जाते थे बेचारे जोरू के लिए।"

हमने रस्मी तौर पर मुस्कराकर कहा "मेरी समझ में तो कुछ आता नहीं। अगर तुम इसको सन्तोषजनक समझते हो तो मुझे भी सन्तोष हो जायेगा"

जमाल बहन ने कहा "सुनिये साहब, साफ़ बात यह है कि खुद मुझे इस खत के बावजूद इत्मीनान नहीं है। इस खत से सिर्फ इतना ही पता चलता है कि सईदा ने ईमानदारी के साथ बचने की पूरी कोशिश की है। मगर इस खत की तारीख़ देखिये। यह आज से तीन महीने तेरह दिन पहले का लिखा है और तब से अब तक के हालात कुछ बहुत ज्यादा इस खत के अनुकूल नहीं हैं।"

हमने कहा—'यह ख़त मेहरोत्रा तक आपने पहुँचने ही न दिया। आप कहती है कि रास्ते ही से उड़ा लिया था।'

जमाल बहन ने कहा—"जी नहीं ! मैं ऐसी कच्ची गोलियाँ बहुत कम खेलती हूँ। यह खत मैंने पहले रास्ते से ही उड़वा कर अच्छी तरह पढ़ा। और हालाँकि मेरा दिल बहुत चाहा कि मैं इसे आपको दिखा दूँ, लेकिन इससे भी ज़रूरी यह मालूम हुआ कि मेहरोत्रा तक जल्द से जल्द यह खत पहुँच जाय, इसलिए मैंने बिलकुल ऐसे ही यह खत उन तक

पहुँचवा भी दिया और जिस जरिये से पहुँचवाया था उसी ज़रिये से फिर उसे ग़ायब करा दिया ताकि आपको दिखा दूँ।"

हमने कहा—"अच्छा तो वह हालात क्या हैं जिनके बारे में आप यह कह रही थीं कि वह इस खत की ताईद (समर्थन) में नहीं है।"

जमाल बहन ने कहा—'वह हालात यह हैं कि जब एक मर्द के बारे में यह मालूम हो चुका कि वह ऐसा आपे से बाहर है कि अपनी बीवी की नाक कटाने को भी तैयार है। जिसने मर्द होकर सारी शर्म-हया को तिलांजलि देकर खुद मुहब्बत की भीख मांगी हो, बल्कि मुहब्बत क्यों कहिये जिसने खुद पाप के लिये दावत दी हो उससे आखिर फिर मिलने की ज़रूरत ही क्या थी। मगर वह रोज़ जाती हैं। आम तौर से रात का खाना वहीं खाती हैं। जब सरला क्लब में होती है तब एक ही कमरे में यह होती हैं और मेहरोत्रा होते हैं यह रग कुछ अच्छे तो नहीं कहे जा सकते।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"हो सकता है इस खत के बाद उसने भी सुधार कर लिया हो और अब दोनों सचमुच भाई-बहन की तरह मिलते हों।"

जमाल बहन ने कहा—"खैर, मिलते हों या न मिलते हों, लेकिन आप किसी को इस तरह की बहन बनाकर मिल सकते हैं?"

सिद्दीक़ भाई ने कुछ शर्माकर कहा "खुदा न करे कि मैं मिलूँ।"

जमाल बहन ने क़ायल करते हुए कहा -"क्यों, आखिर क्यों? अगर यह कोई बुरी बात नहीं है तो फिर इस 'खुदा न करे' के क्या मानी हुए?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"तो फिर क्या यह खत झूठा था?"

जमाल बहन ने कहा—"नहीं, यह खत बिलकुल सच्चा था। एक

एक लफ़्ज़ से सचाई बरस रही है। मगर आख़िर कब तक? क्या यह मुमकिन नहीं है कि इनकी सचाई उसकी धूर्तता के आगे हार गई हो? गुनाह से बचने के लिये बहुत बड़े दिल गुर्दे की ज़रूरत है। और मैं यह भी नहीं कह सकती कि सचमुच ये मुलाक़ातें पाप भरी ही हैं। बहुत मुमकिन है कि दोनों में बड़ा ही पाक-पवित्र प्रेम हो। मगर मैं तो कहती हूँ कि यह तरीक़ा ग़लत है। देखने वालियाँ नाम धरती हैं, आम-तौर पर अब यह मशहूर हो रहा है कि कोतवालिनी साहबा और मेहरोत्रा के बीच कुछ दाल में काला ज़रूर है। बद अच्छा बदनाम बुरा। मैं तो दर असल ऐसे मर्द की सोहबत ही ग़लत समझती हूँ जो इतना बद-हवास हो चुका हो।'

हमने कहा—"तो फिर आपने ख़ाक तहक़ीक़ात की है कि यह भी मुमकिन है और वह भी हो सकता है अगर आपको सच।च कुछ मालूम हो चुका है तो मुझे बता दीजिये। मेरी तरफ़ से आप बिल-कुल बेफ़िक्र रहिये मैंने अपना दिल पत्थर का कर लिया है।'

जमाल बहन ने कहा—"मेरी जाँच अभी दर असल ख़त्म नहीं हुई है। लेकिन बहुत जल्द मुझको असली हाल मालूम हो जायेगा। इसलिये कि मैंने अपना नौकर अल्लाहदिया सबजजिन के यहाँ रखवा दिया है। ज़रा उसका असर बढ़ने दीजिये, फिर वह सारी ख़बरें रोज़ मुझे पहुँचाता रहेगा। अभी इस ख़त को ही बहुत समझिये। कम से कम आपको यह इत्मीनान तो होना ही चाहिये कि आपकी बेगम ने बचाव में कोई कमी नहीं की है।"

जमाल बहन इसी तरह समझा बुझा कर हमको अजीब असमजस में डाल कर चली गईं और हम बराबर सोचते रहे कि सचमुच अगर ख़त सच्चा है तो फिर इस मेल-जोल के क्या मानी और फिर ख़ुद ही यह सोचते कि जो औरत ऐसा ज़बरदस्त ख़त लिखेगी वह बहक कैसे सकती है।

उन्नीस

विधान सभा ने आखिर बहुमत से फख़रुन्निसा बेगम के मुक़ाबिले में मोहिनी देवी को राष्ट्रनेत्री चुन लिया। चुनाव में हर जगह मर्दराज दल को सफलता मिली। केवल एक चौथाई दूसरी पार्टी की स्त्रियाँ सदस्या चुनी गईं। स्वयं फ़ख़रुन्निसा बेगम इसलिये निश्चित हो गई थीं कि उनके मुक़ाबिले के लिये मर्दराज दल ने किसी को खड़ा न किया था। सारांश यह कि अब विधान सभा में मर्दराज दल का प्रबल बहुमत था। पुरुष पर्दा रक्षक दल विरोधी दल था ज़रूर लेकिन बेहद कमज़ोर, न होने के बराबर यह निश्चित था कि मर्दराज दल जो चाहेगा वह होकर रहेगा। जिस दिन विधान सभा पर मूँछ वाला झंडा लहराया गया उसी दिन से सारे देश की हवा बदल गई थी। जो पहले अपराधिनें थी उनके हाथ में अब शासन की बागडोर थी। और नाज़ुकिस्तान हर इन्क़लाब के लिये बिल्कुल तैयार था। चुनांचे यही हुआ कि जिस वक्त खालीकुन्निसा पर्दे के ख़िलाफ़ क़ानून का मसौदा लेकर उठी तो विरोधी दल ने लाख-लाख शोर मचाया, सैकड़ों संशोधन पेश किये 'वाक आउट' हुए लेकिन आखिरकार चार सौ सैंतीस मत पक्ष में और दो सौ तेरह विपक्ष में मत आने पर यह प्रस्ताव इस रूप में पास हो गया कि :-

"नाज़ुकिस्तान के समस्त पुरुषों पर कानूनन पर्दा करने की जो पाबन्दी लगी हुई थी, वह उठाई जाती है और अब पर्दा करना या न करना

उनकी अपनी इच्छा पर निर्भर करेगा। सरकार को इससे कोई मतलब न होगा कि मर्द पर्दा कर रहे हैं या बेपर्दा घूम रहे हैं। न क़ानूनन उनको बेपर्दा होने पर मजबूर किया जाता है, न क़ानून उनको पर्दा करने के लिये मजबूर करता है। ज़ाब्ता फौजदारी के क़ानून १३६ अ ब प और क़ानून क़ाबिल दस्तन्दाज़ी पुलिस ११७ क ख ग जिनके अन्तर्गत पर्दा त्यागने वाले मर्दों को सौ से पाँच सौ रुपये तक जुर्माना या तीन माह से एक साल तक की कैद बामशक्क़त या दोनों की सज़ा हो सकती थी, आज से बिलकुल रद्द समझे जायेंगे।"

इस क़ानून की मंजूरी के बाद मर्दराज दल के समर्थक अखबारों ने बड़े-बड़े अग्रलेख लिखे। खलीकुन्निसा की धूम मचाई और विरोधी अखबारों ने काले बार्डरों में इस खबर को छापकर शोक मनाया सारे देश में जलसे हुए। लेकिन सभी स्त्रियाँ तो समर्थक थीं नहीं कि आम जश्न मनाया जाता। कहीं विरोध हुआ और कहीं समर्थन। लेकिन उस समय वायुमंडल यह था कि क़ानूनी पाबंदी तो खैर उठ गई है लेकिन आम तौर पर मर्दों की ओर से यह कहा जा रहा था कि वे खुद अपनी घुट्टी में पड़ी हुई आदत को मुश्किल ही से छोड़ेंगे। लेकिन फिर भी बहुत से घरानों के मर्दों ने बुर्क़ा उतार फेंका और अपनी-अपनी औरतों के साथ निकल खड़े हुए। बाहर सिनेमा घरों में अब औरतों के बीच बेपर्दा मर्द नज़र आने लगे, मगर बहुत ही कम, इक्का दुक्का। अलबत्ता हमारी भविष्यवाणी बिलकुल सच निकली कि राधानगर में जिस मर्द ने सबसे पहले पर्दा छोड़ा वह मेहरोत्रा था। उस कमबख्त को तो बहाना मिलना चाहिये था पर्दा छोड़ने का। एक दिन सिद्दीक भाई ने हमसे भी कहा—

"क्यों, निकलते हो पर्दे के बाहर ?"

हमने कहा—"हम तो निकला ही करते थे बाहर, हमारे लिये बेपर्दगी नहीं, बल्कि पर्दा नई चीज़ है। हाँ, तुम अपनी कहो।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"भाई सच पूछो तो मुझसे निकला ही नहीं जाता। मुझे तो घर के बाहर निकाल कर देख लो। यों तो मैं अकडा हुआ खड़ा रहूँगा, लेकिन जहाँ कोई औरत सामने आई तो या तो मै बैठ जाऊँगा गड़बडा कर या गिर पड़ूँगा समझ में नहीं आता कि मर्दों से बाहर निकला कैसे जायगा घर के बाहर।"

हमने कहा—"आख़िर निकलने वाले निकले ही घर के बाहर। मेहरोत्रा को देख लो न।"

सिद्दीक़ भाई ने बुरा मानकर कहा—"उस कमबख्त का क्या है। निर्लज, बेशर्म! उसे मर्द कौन कहता है। हज़ार बेशर्म मरी होंगी तो यह मर्द पैदा हुआ होगा। उस कमबख्त ने तो घी के चिराग जलाये होंगे। बिल्ली के भागों छींका टूटा।"

हमने कहा—"सुना है कि अब तो तुम्हारी बहन साहबा के साथ सिनेमा भी तशरीफ़ ले जाते हैं बेपर्दा।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा--"कौन मेहरोत्रा जाता है सईदा बहन के साथ?"

हमने कहा—"हाँ हाँ, कल ही तो मुझको ख़बर मिली है। मैं तो यह कहता हूँ कि अब खुल्मखुल्ला सैर सपाटे भी होने लगे।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"मगर एक बात है अल्लाहदिया ने जो रिपोर्ट पहुँचाई है उससे तो यह मालूम होता है कि सईदा बहन को मेहरोत्रा बड़े आदर से बहन जी कहता है और वह भाई साहब कहती हैं। इसके अलावा अल्लाहदिया ने यह भी बताया है कि कभी उन दोनो को अकेले-दुकेले, अंधेरे-उजियाले भी किसी आपत्तिजनक अवस्था में नहीं

देखा गया। मगर अबतक हमारी बेगम साहब को इत्मीनान नहीं है। वह बराबर अल्लाहदिया को यही समझा रही हैं कि तुम निगरानी में कताही न करना।"

हमने कहा—"कुछ समझ में नहीं आता क्या बात है। अल्लाह-दिया का यह बयान, वह ख़त और बेगम की फ़ितरत (प्रकृति) का जो कुछ अन्दाज़ा खुद मुझको है, उन सारी बातों से हर शक ख़तम हो जाता है। मगर जमाल बहन के कथनानुसार, फिर आख़िर उस कमबख़्त से मिलने की ज़रूरत ही क्या है। और यह कौन सी नेकनामी की बात है कि उस बदनाम मर्द के साथ यों खुल्लमखुल्ला फिरा जाय।"

हम यह बात कर ही रहे थे कि बेगम ने ड्योढ़ी पर आवाज़ दी और सिद्दीक़ भाई एक झपाके के साथ कमरे में घुस गये। हमने बेगम को बुलाया। बेगम ने आते ही कहा—"यानी अब भी भाई साहब पर्दा करते है। जैसे मैं इनके टके हुए लाल तोड़ ही तो लूँगी। बेपर्दगी का क़ानून तक बन चुका है और इनका पर्दा है कि किसी तरह ख़त्म ही नहीं होता।"

सिद्दीक़ भाई ने अन्दर ही से कहा—"बहन, आप मुझे देखकर क्या करेंगी। आप की निगाहें सेंकने के लिये अब तो बहुत से मर्द बाहर निकल आये होंगे।"

बेगम ने कहा—"कुछ न पूछिये क्या हाल है। मैं तो हर वक्त अपने बरख़ास्त होने के हुक्म का इन्तज़ार कर रही हूँ।"

सिद्दीक़ भाई ने घबराकर कहा—'वह क्यों?'

बेगम ने कहा—"मर्दराज दल की हुकूमत भला मुझको रहने देगी? ख़लीकुन्निसा का बस चले तो कच्ची चबा जाय मुझे। मर्द राजिस्टों से

जेलें मैंने भरीं, डंडे बाजियाँ मैंने कीं, गोलियाँ मैंने चलाईं। मैं तो उनकी आँखों में काँटे की तरह खटक रही हूँ।"

सिद्दीक भाई ने कहा—"खुदा न करे कि ऐसा हो। लेकिन मर्दराज पार्टी आखिर किस-किस से बदले लेगी? आपने कोई अपनी मर्जी से तो यह सब किया नहीं। सरकार जो हुक्म देती थी वह आप करती थीं। दूसरे खलीकुन्निसा का आज का बयान आपने अखबार में नहीं पढ़ा?"

बेगम ने कहा—"नहीं, मैंने अखबार नहीं पढ़ा।"

हमने कहा—"यह क्या है।"

बेगम ने कहा—"सुनाओ तो जरा पढ़कर क्या फरमाती हैं।"

हमने अखबार पढ़ना शुरू किया :—

खलीकुन्निसा एम० ए० का महत्त्वपूर्ण वक्तव्य

मुझ तक यह सूचनाएँ पहुँचाई गई हैं और करीने से ये सूचनाएँ सही मालूम होती हैं कि मुल्क में जहाँ मर्द राज पार्टी के सत्तारूढ़ होने से खुशी की एक लहर दौड़ गई है वहाँ एक वर्ग ऐसा भी है जो इन आशंकाओं से परेशान है कि शायद मर्दराज दल अब उनसे उन ज्यादतियों और उन जुल्मों के बदले गिन-गिन कर लेगी जो सरकार के इशारे पर सरकार की पिट्ठुओं ने मर्दराज दल पर किये हैं। मर्दराज दल के लोगों को अपमानित करके जेलों में भरा गया है, चोरी और डाके डालने वालियों का सा व्यवहार देश और जाति की सेविकाओं के साथ किया गया है। उनको साधारण अपराधिनों के साथ रक्खा गया है, उनको मारा पीटा गया, उन पर गोलियाँ बरसाई गईं और उनको हर तरह का आर्थिक नुकसान भी इस तरह पहुँचाया गया कि उनकी ज़मीनें ज़ब्त हुईं, उनके खेतों में आग लगाई गई सारांश यह कि उनको तरह-तरह से आज़माया गया लेकिन वह एक भारी चट्टान की तरह अपने उद्देश्य पर डटी रहीं।

यह सब कुछ सही है लेकिन यह आशंका कि अब मर्दराज दल इन अत्याचारों के बदले उन सबसे लेगी जिनके हाथों ये अत्याचार हुए तो यह ग़लत है और एक झूठी आशंका के सिवाय कुछ और नहीं। हमको पता है कि ये सब तो एक मशीन के कल पुर्जे हैं। जिनको चलाने वाली जिस तरह चलायेगी उसी तरह चलेंगे। मुझे सारे देश का हाल तो ठीक से नहीं मालूम लेकिन राधानगर का व्यक्तिगत अनुभव है कि जिस वक्त खानम बहादुरनी सईदा ख़ातून कोतवालिनी मर्दराज पार्टी पर गोली चलाने आईं, सब से पहले वह मेरे पास आई थीं और मुझसे निजी तौर पर कह दिया था कि मुझे गोली चला कर भीड़ को तितर बितर करने का हुक्म मिल चुका है। अगर आप भीड़ को शान्तिपूर्ण ढंग से हटा दें तो मैं अपनी मर्ज़ी के खिलाफ़ गोली चलाने से बच जाऊँगी। लेकिन मैंने उनसे कह दिया था कि आपको जो हुक्म मिला है उसे पूरा कीजिये। मैं इस भीड़ को, जो शेरनियो की भीड़ है, कायरता की शिक्षा नहीं दे सकती। राधानगर में गोली चली और खानम बहादुरनी सईदा ख़ातून के नेतृत्व में चली। लेकिन मैं जानती हूँ कि उसकी ज़िम्मेदारी उन पर नहीं है। इसी तरह मैं समस्त ज़िम्मेदार अधिकारिणियों को विश्वास दिलाती हूँ कि उनके व्यवहार उनकी अपनी इच्छा पर निर्भर न थे। और इसीलिए हमें व्यक्तिगत रूप से उनसे कोई बैर नहीं और न हमारे मन में किसी प्रतिशोध की भावना है। जिस राज्य और जिस व्यवस्था के इशारे पर यह सब कुछ हो रहा था वह राज्य और वह व्यवस्था हमने कुचल कर रख दी है। अब हम वही मिसालें पेश न करेंगी जिनका सुधार हम करना चाहती थीं और चाहती हैं।"

बेगम ने खुश होकर कहा—"सचमुच इस पार्टी को ताक़त में आना भी चाहिए था। बड़ी कुरबानियाँ की हैं"

हमने कहा—'खुश हो गईं न उसके एक ही बयान पर और अभी बरखास्तगी के हुक्म का इन्तजार हो रहा था।'

बेगम ने कहा—"खैर, वह इन्तजार तो मुझे रहेगा। इसलिए कि यह बयान, ये लेख और भाषण तो सब हाथी के वह दांत होते हैं जो हाथी दिखाता है। चबाने वाले दांतों से खुदा बचाये।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"खैर, यह राजनीतिक चाल सही, तो भी अब आपका नाम लेकर मैं तो यह समझता हूँ कि वह ऐसी ही गधी होगी जो आपको नुकसान पहुँचाये"

हमने कहा—"और आप खुद भी तो बड़ी चालाक हैं। आखिर यह क्या सूझी थी कि गोली चलाने गईं और पहले उनसे सलाह कर ली।"

बेगम ने कहा—"सचमुच मेरा दिल कुछ धुकधुक कर रहा था और गोली चलाने के खयाल से ही रोंगटे खड़े हुए जाते थे। एक बोतल पूरी बेदमुश्क पी ली थी मैंने गोली चलवाने के बाद, तब कहीं हवास ठीक हुए। मैंने तो सचमुच खलीकुन्निसा के आगे हाथ तक जोड़े कि इतनी बेगुनह औरतों का खून मेरी गर्दन पर न डालिये, इनको हटा दीजिये, मगर वह किसी तरह न मानीं तो आखिर मैं करती भी तो क्या करती?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"बहरहाल खलीकुन्निसा के इस बयान से यही मालूम होता है कि वह आपसे खुश हैं।"

बेगम ने मुँह बना कर कहा "जी हाँ मगर इसका मतलब यह भी हो सकता है कि चूँकि वह मुझको नुकसान पहुँचाने वाली हैं इस लिए अपने लिए इस बयान से रास्ता साफ़ किया है। खैर देखा जायगा। इस वक्त तो भूख के मारे बुरा हाल है। जब पेट भर जायगा तब कुछ सूझेगी।"

और हमने जल्दी से उठ कर बेगम के लिए खाने की मेज़ सजा दी।

बीस

शौकिया को ख़ुदा की मेहरबानी से छठा साल ख़त्म होकर सातवाँ साल शुरू हो रहा था कि एक दिन बेगम ने हमसे कहा कि शौकिया का कनछेदन कर दो। हम इसको मामूली सी बात समझकर चुप हो रहे लेकिन फिर दूसरे दिन बेगम ने यही ज़िक्र छेड़ा कि मैंने तुमसे छिपा कर उस रुपये के अलावा, जो तुम्हें मालूम है, शौकिया के कनछेदन के लिए पाँच-छः हज़ार रुपया जमा किया है और मैं सोचती हूँ कि अब तुरन्त शौकिया का कनछेदन कर दिया जाय। अब तो हमको सचमुच ताज्जुब हुआ कि कनछेदन भी कोई ऐसा संस्कार है जिस पर पाँच-छः हज़ार रुपया ख़र्च किया जाय। बेगम ने हमको बताया कि नाज़ुकिस्तान में शादी के बाद जिस संस्कार में सबसे ज्यादा धूम मनाई जाती है वह कनछेदन ही है। ग़रीब से ग़रीब औरत अपनी बच्चियों के कनछेदन पर जी खोल कर ख़र्च करती हैं और यहाँ इस संस्कार को बड़ा महत्व प्राप्त है। लड़कों का ख़तना या मूँडन यहाँ जितना चुपचुपाते और ख़ामोशी से होता है उतना ही धूम-धड़क्का यहाँ लड़की के कनछेदन में किया जाता है। बेगम ने सलाह दी कि तुम अपने सिद्दीक़ भाई से पूछ कर सारा सामान ठीक करा लो तो मैं कोई तारीख़ निश्चित कर दूँ।

हमने दूसरे ही दिन सिद्दीक़ भाई को बुला लिया और उनसे सलाह करके ज़रूरी सामान की एक सूची तैयार करके बेगम के सामने पेश कर दी। वह ठहरीं कोतवालिनी, चुटकी बजाते सब सामान पूरा हो गया

और अन्त में यह तय पाया कि अगली पन्द्रह तारीख को यह काम कर दिया जाय। अतएव, दावतनामे छपे, जनानी और मर्दानी दावतों के इन्तज़ाम हुए। प्रजा के जोड़ों की तैयारियाँ शुरू हो गईं और आखिर देखते ही देखते वह दिन भी आ पहुँचा जब शौकिया का कनछेदन था।

बाहर जनाने में कोतवाली के सारे स्टाफ़ ने कोतवाली को दुल्हन की तरह सजा दिया। अन्दर मर्दों के लिए सिद्दीक़ भाई ने बहुत ही अच्छा इन्तज़ाम कर दिया। बावरचिनियाँ लगा दी गईं काम पर। शौकिया को खूब सजा सँवार दिया गया और अब हम और सिद्दीक़ भाई घर में और बेगम व जमाल बहन बाहर जनाने में मेहमानों का स्वागत करने लगे। बाहर सभी हुक्कामनियाँ जमा हो रही थीं। आखिर एक मोटर पर से काली सफेद साड़ी पहने हुए खलीकुन्निसा बेगम भी उतरीं। बेगम ने बढ़ कर उनका स्वागत किया और उनको लाकर बीच में एक सोफे पर बैठाया और उनकी गोद में शौकिया को दे दिया। पहले से यही तय था कि सूई पर 'बिस्मिल्लाह' वही फूकेंगी। यहाँ का रिवाज यह था कि कनछेदन के मौके र कोई बुज़ुर्ग औरत पहले 'बिस्मिल्लाह' पढ़ कर फूँकती थी. इसके बाद नाइन या लेडी डाक्टरनी, जो भी हो, कान छेद दिया करती थी। फिर भेंट उपहार, जिनमें ज्यादातर कानों के गहने होते थे, दिये जाते थे। जब सभी निमंत्रित महिलाएं जमा हो चुकीं तो बेगम ने कहा "मैं ज़रा अन्दर पूछ लूँ, शायद कोई खास रस्म होत हो। मैं तो यहाँ की रस्मों से वाक़िफ़ नहीं हूँ।"

यह कह कर वह ड्योढ़ी में आईं और हमको बुला कर पूछा—"अब छिदवा दिये जायें कान?"

हमने कहा—"मैं क्या जानूँ? ज़रा ठहरिये, सिद्दीक़ भाई से पूछ कर बताता हूँ।"

यह कह कर हम सिद्दीक़ भाई के पास गये। उन्होंने देखते ही कहा – "अब क्या देर है भई?"

हमने कहा—"बस आपही के हुक्म की देर है"

वह बोले भई हमारा हुक्म कैसा? अपनी बेगम से कहो न कि अब सब रस्में पूरी कर डालें।"

हमने कहा—"मैं इसीलिए तो आपके पास आया हूँ। बेगम पूछती हैं कोई खास रस्म तो नहीं है?"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"है क्यों नहीं। उनसे कहो कि लड़की को पच्छिम की तरफ़ मुँह करके बिठाकर छिदवाये जायें कान और लेडी डाक्टरनी पर तलवारों का साया कर लिया जाय। और हाँ, वह सूई ले ली जाय उससे, उसी की नोक से बाद में डोरे काटे जायेंगे'।"

बेगम "तोबा है" कहती हुई बाहर चली गईं और शौकिया को खलीकुन्निसा बेगम की गोद में पच्छिम की तरफ़ मुँह करके बिठा दिया गया। इसके बाद शहर की सिविल सर्जनी मिस एडल्फ़िस ने एक सूई में धागा पिरोकर पहले तो उसे स्प्रिट से साफ़ किया इसके बाद खलीकुन्निसा बेगम को दे दिया. खलीकुन्निसा बेगम ने बिस्मिल्लाह पढ़ कर फूँकी। सिविल सर्जनी पर तलवारों का साया किया गया और उसने शौकिया के दोनों दुर बड़ी सफ़ाई से छेद दिये। शौकिया ने सचमुच कमाल कर दिया। ज़रा बस नाक तो चढ़ाई थी, इसके अलावा तो यह मालूम हुआ जैसे कुछ हुआ ही नहीं। कनछेदन के बाद ही वहाँ तो ज़नानी महफ़िल मे शौकिया के सामने उपहार आने शुरू हो गये। खुद खलीकुन्निसा बेगम ने हीरे की दो जड़ाऊँ बालियाँ दीं। किसी ने बुन्दे दिये, किसी ने करनफूल, किसी ने झुमके, किसी ने सिर्फ़ रुपये। जमाल बहन ने पत्ते

बालियों का सेट दिया। इसके बाद ही वहाँ औरतें खाने पर जाने लगीं और यहाँ मर्दाने में एक खास क़िस्सा यह पेश आया कि खुदाबख्श ने हमारे कान में आ कर कहा—"सरकार यही है मेहरोत्रा, जो ज़ामिन अब्बास साहब से बातें कर रहा है।"

हमने अभी कुछ ध्यान भी न दिया था कि ज़ामिन अब्बास साहब ने हमको आवाज़ देकर कहा—"अपने एक नये बहनोई से तो मिलो। मेहरोत्रा साहब सब जजिन सरलादेवी के शौहर।"

हमने अनिच्छा से सलाम कर लिया तो वह अब हमारे सर हो गये कि हम पाँच सौ रुपये के नोट लेकर शौकिया को भेज दें।

हमने पहले तो बहुत टाला आखिर सिद्दीक़ भाई को बुलाकर कहा—"सिद्दीक़ भाई, आपसे मिलिये आप ही हैं मेहरोत्रा साहब। और मेहरोत्रा साहब आप हैं सिद्दीक़ साहब, जमाल आरा बेगम डिप्टी कलक्टरनी के शौहर। सिद्दीक़ भाई! आप ये रुपये दे रहे हैं कि मैं शौकिया को तोहफ़ा अभी भेजवा दूं। अब आप ही इनको समझाइये कि मैंने किसी मर्द का कोई तोहफ़ा अभी तक नहीं लिया है, और अगर लेता तो सबसे पहले सिद्दीक़ भाई का तोहफ़ा लेता"

मेहरोत्रा साहब ने कहा—"वह कैसे? सिद्दीक़ भाई अगर आपके भाई हैं तो सईदा बहन मेरी बहन हैं। आपको मालूम नहीं कि सईदा बहन मुझको सगे भाई के बराबर समझती हैं। और मैं भी उनको सगी बहन समझता हूँ। शौकिया मेरी भानजी है और मुझको हक़ है कि मैं उसे जो चाहूँ दूं। आपको इस सिलसिले में बोलने का कोई हक़ नहीं है।"

सिद्दीक़ भाई ने कहा—"ताज्जुब है कि आपसे और सईदा से

इतना गहरा रिश्ता भी क़ायम हो चुका है, और हम लोग अब तक इस सिलसिले में बिलकुल बेख़बर हैं। अगर आपके ऐसे संबन्ध होते तो सईदा बहन कभी तो आपका ज़िक्र भी करतीं ”

मेहरोत्रा साहब ने कहा—‘यह क़ुसूर मेरा तो नहीं है कि इसकी सज़ा आप मुझको दें। मेरे बयान की सचाई का अन्दाज़ा करना हो तो खुद बहन सईदा को बुलाकर पूछ लीजिये। और फिर यह भी उनसे ही पूछिये कि वह मर्दों का एक मर्द से क्यों पर्दा कराती रहीं। कुछ भी हो, यह चन्द रुपये मैं अपनी बच्ची को भेज रहा हूँ इससे आपकी कोई मतलब नहीं है ”

सिद्दीक़ भाई ने कहा—“यह तो कीजिये न, मैं सईदा बहन को बाहर से बुलवाये देता हूँ। आप ही उनको दे दीजिये।”

मेहरोत्रा साहब ने कहा—“अच्छी बात है। मुझे इसमें कुछ उज्र नहीं। उनकी मजाल नहीं है कि वह इनकार कर सकें।”

सिद्दीक़ भाई ने बाहर से बेगम को बुलवा भेजा। जब वह ड्योढ़ी में आगईं तो हम और सिद्दीक भाई मेहरोत्रा साहब को लेकर ड्योढ़ी तक आये। सिद्दीक़ भाई तो उसी तरफ़ रह गये, हमने आगे बढ़कर कहा—“मेहरोत्रा साहब शौकिया को पाँच सौ रुपया देना चाहते है।”

बेगम ने कहा—“क्यों भाई जान! यह क्या हरकत है? मैं आप को न मना करती हूँ न मना करने का हक़ रखती हूँ। मगर इतनी सी बच्ची इतने बहुत से रुपये लेकर क्या करेगी? दो चार रुपये बहुत हैं।”

मेहरोत्रा साहब ने कहा—“अच्छा, अब आप भी गैरों की तरह मुझसे तकल्लुफ़ कर रही हैं? एक तो आपकी यही ज्यादती है कि आपने मुझे ऐन वक्त पर बताया कि कनछेदन है, ताकि मैं कानों का कोई ज़ेवर न बनवा सकूँ, और मुझे शर्मिन्दा होना पड़े। दूसरे अब

इस वक्त भी अड़ंगा लगा रही हैं। इसका मतलब तो हुआ कि आप सचमुच मुझको भाई नहीं समझतीं।''

बेगम ने कहा—"भाई न समझती तो जरूर यह रकम ले लेती। मेरी बला से आपका नुकसान होता। लेकिन चूँकि भाई समझती हूँ इसीलिए किफ़ायतशआरी (मितव्ययता) की तालीम दे रही हूँ और खुद आपका नुकसान नहीं चाहती। हालाँकि मेरा नुकसान हो रहा है"

मेहरोत्रा साहब ने कहा—"खैर, अब बातें तो बनाइये नहीं, यह रुपया लीजिये चुपके से। अभी आपको एक दूसरी जवाबदही भी करनी है। मेरे बहनोई और सिद्दीक साहब, दोनों को हैरत है कि मैं आपका भाई हूँ। मगर ये दोनों मुझे जानते तक नहीं। अब आप खुद सच-सच बताइये कि मैंने कितनी बार आपसे कहा कि मेरे बहनोई से मिला दीजिये। मगर आप हमेशा टाल गईं।"

बेगम ने कहा - "बात यह है कि आप ठहरे उस रिश्ते से इनके ससुराली रिश्तेदार, और रिश्तेदार भी कौन, साले। ये आप से मिलकर क्या खुश होते। ये तो जलने के रिश्ते हैं। साले और ससुरे की जलन तो मशहूर है नाजुकिस्तान में जैसे इनके हिन्दुस्तान में सास नन्द की दुश्मनी मशहूर है। दूसरे शुरू-शुरू में आपने मुझसे ऐसा इश्क़ फ़रमाया था कि मेरा दिल चूर होकर रह गया था। और सच्ची बात तो यह है कि मुझे बहुत दिनों तक यक़ीन न आ सका कि आपने बहन-भाई का जो रिश्ता क़ायम किया है वह किस हद तक टिकाऊ है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह भी जनाब के इश्क़ का एक करिश्मा हो। अब जब यक़ीन आगया कि नहीं हम सचमुच भाई-बहन हैं, तो देख लीजिये, आपको मिला दिया।"

बेगम के इस साफ़ बयान पर मेहरोत्रा के चेहरे पर एक रंग आरहा था, एक जा रहा था। मगर वह घबराया हुआ बिलकुल न था। आख़िर उसने हमको सम्बोधित कर कहा—"दर असल यह मेरी बहन भी हैं और एक किस्म की देवी भी, जिन्होंने मुझे बहुत से पापों से बचा कर नर्क से बचाया और स्वर्ग की राह दिखाई। मज़ा तो देखिये कि मैं इन पर आशिक़ था।" यह कह कर मेहरोत्रा हँसते-हँसते लोट गया और बेगम भी मुस्कराती रहीं।

उस वक्त हमारा चेहरा भी यक़ीनन ख़ुशी से खिल उठा होगा, इसलिये कि दिल का गुबार एक दम छट गया था और अब हमको सच-मुच दिल से यक़ीन हो गया था कि बेगम के जिस रोमान्स के सिलसिले में हम अन्दर ही अन्दर जले जाते थे, घुले जाते थे, उसकी असलियत अब खुल चुकी थी। लेकिन इस सिलसिले में हमको पूरा इत्मीनान तो बेगम तफ्सीली बातें करने के बाद ही हासिल हो सकता था, फिर भी एक बोझ सर से उतर गया था, एक ठंडक सी दिल मेंमहसूस होने लगी थी।

बेगम ने रुपये लेते हुए कहा—"अच्छा भाई साहब, आप नहीं मानते तो मैं आपका दिल दुखाना भी नहीं चाहती। अब आप जाइये अपने साबिक़ (भूतपूर्व) रक़ीब और हाल (वर्तमान) के बहनोई के साथ ताकि मै बाहर जाकर देखूँ कि कुछ गड़बड़ तो नहीं है।"

हम मेहरोत्रा साहब को लेकर घर में आगये और उनको एक जगह बिठाकर सिद्दीक़ भाई के साथ इन्तजाम में लग गये। सिद्दीक़ भाई को भी अब इत्मीनान था और उन्होंने तो यहाँ तक कहा कि अब एक दम से दिल को यक़ीन आ गया कि जो सच्ची बात होती है उसके लिये किसी सबूत या दलील की ज़रूरत नहीं हुआ करती। दिल फ़ौरन उसको मान लेता है।

हमने कहा—"हाँ अब मेरे दिल पर भी कुछ बोझ नहीं है। और मालूम होता है जैसे क़िस्मत पर से बादल छट गये।"

बाहर ज़नाने में खाने के बाद नाच-गाने की महफ़िल गर्म हो गई। अन्दर डोम गाते बजाते रहे। और आख़िर आधी रात तक मेहमान विदा होते रहे। जब सब जा चुके और मेहरोत्रा साहब ने इजाज़त चाही तो हमने उनको यह कह कर रोक लिया कि "आप भी मेहमान हैं जो जाना चाहते हैं? सुबह चले जाइयेगा।"

मेहरोत्रा साहब ने कहा - "भाई साहब मैं जरूर ठहर जाता। मगर आपको मालूम नहीं मेरे घर का नक्शा। इस वक्त तशरीफ़ लाई होंगी आपकी भाभी साहबा और वह भी ऐसे कि उन्हें दूसरों ने क्लब में मोटर पर सवार कराया होगा और दूसरे ही उन्हें मोटर से उतारेंगे। क्योंकि वह शराब के नशे में चूर होंगी। अब मैं जाकर उनको ढंग से लिटाऊँगा और रात भर उनकी निगरानी रक्खूँगा कि तोड़-फोड़ न करें, अपने को कोई नुकसान न पहुँचायें। नहीं तो उनका क्या है, न जाने अपने को कहाँ फेंक दें। एक दिन ज़रा सी मेरी आँख लग गई थी तो सिग्रेट से सारे बिस्तर में आग लगा ली थी। मैं क्या बताऊँ आपसे कि मेरी जान कैसी मुसीबत में है। न कहीं आने का रहा हूँ न कहीं जाने का, ख़ासकर रात को तो घर से बाहर रह ही नहीं सकता।"

उनकी दलील सही थी, इसलिए हमने उनको विदा कर दिया। और उनके जाने के बाद ख़ुद भी हारे पड़कर सो रहे। सुबह उठकर जब सब काम से छुट्टी पा चुके और बेगम भी नाश्ता आदि कर चुकीं तो हमने उनसे पूछा—"क्यों सरकार, यह क्या किस्सा था मेहरोत्रा वाला?"

बेगम ने कहा—"क़िस्सा कह रहे हो, इसको हादिसा (दुर्घटना)

कहो। खुदा ने बड़ी मेहरबानी की कि सभल गया नहीं तो वह तो ले उड़ा होता तुम्हारी बीवी को।"

हमने कहा—"खैर, मेरी बीवी ऐसी नन्हीं नादान नहीं है कि कोई उसे ले उड़े, मगर आपने आखिर उनसे मुझे अब तक मिलाया क्यों न था ?"

बेगम ने कहा—"मुझे उस आदमी पर कोई भरोसा न था और अब भी मैं उसे इस क़ाबिल नहीं समझती कि भले घरानों के बेटे दामादों से उसको मिलने दिया जाय। इसमें शक नहीं कि अब वह बड़ी हद तक सुधर चुका है और देखने में बड़े भले आदमियों की तरह ज़िन्दगी बिता रहा है लेकिन सरला ने ऐसी आज़ादी दे रक्खी है उसे कि जो भी न कर डाले थोड़ा है।"

हमने कहा—"तो क्या सचमुच उनको आपसे इश्क था ?"

बेगम ने हँस कर कहा—"ऐसा वैसा इश्क़! मेरे साथ भागने तक को तैयार था। जान दिये देता था। अजीब हाल बना रक्खा था उसने।"

हमने कहा—"मगर आपने कभी इसका ज़िक्र क्यों न किया ?"

बेगम कहा—"ज़िक्र करके मैं अपने सर मुसीबत लेती। तुमको यक़ीन थोड़े ही आता कि मैं उसका सुधार करना चाहती हूँ। तुम तो बस जलने लगते। तरह-तरह के शक करते, मेरा उससे मिलना-जुलना बन्द कराना चाहते। और तुमको खुद मुझपर भरोसा न रहता। मर्दों के लिए मोम का बना हुआ रक़ीब (प्रतिद्वन्द्वी) ही जल मरने को काफ़ी है। मैं तो अब भी न बतलाती। वह तो कहो कि खुद तुमको मालूम हो गया इसलिए कि इस मौके पर मेहरोत्रा को बुलाना भी ज़रूरी था।"

हमने कहा—"तो आप क्या यह समझती हैं कि मुझे कुछ मालूम नहीं था। मुझे एक-एक बात मालूम थी। मैंने उसके खत आपके नाम

और आपके खत उसके नाम देखे थे। उसके तोहफ़े मेरी नज़र से गुज़रे और उसके साथ आप कब सिनेमा गईं, मुझे इसका पता था।"

बेगम ने कहा—"सिनेमा गई? सिर्फ़ एक बार। और वह भी सरकारी मजबूरी से। मौजूदा हुकूमत का एक हुक्म निकला था कि जो मर्द पर्दा छोड़ रहे हैं उनके साथ सार्वजनिक जगहों पर सरकारी हुक्कामनियों को जाना चाहिए। जिसमें कि जनता को यह अन्दाज़ा हो सके कि उनका बेपर्दा होना कोई कानून के खिलाफ़ बात नहीं है। मेहरोत्रा के लिये मेरे पास हुक्म आया था कि वह पर्दा छोड़ चुके हैं, आप उनके साथ किसी आम मजमे में जायें जिसमें कि देखने वालियों को यह अन्दाज़ा हो सके कि पुलिस की एक ज़िम्मेदार अफ़सरनी एक बेपर्दा मर्द को गिरफ़्तार नहीं कर रही है बल्कि उसके साथ खुद घूम-फिर रही है।"

हमने कहा—"खैर कुछ भी हो, लेकिन मुझे इसकी भी खबर थी।"

बेगम ने कहा—"अच्छा तो तुमने मुझसे कभी कहा क्यों नहीं?"

हमने कहा—"क्या करते कह कर। थोड़ी बहुत जो शर्म बाक़ी थी कि तुम मुझसे छिपकर उनसे मिल रही थीं, क्या वह भी मैं उठा देता ताकि तुम खुल्लमखुल्ला उनसे मिलती रहो।"

बेगम ने प्यार से एक तमाचा मार कर कहा—"अरे बड़ा चलता हुआ है मेरा मियाँ—बेवकूफ़ कहीं का, जैसे मैं ऐसे प्यारे प्यारे मियाँ को छोड़ कर किसी और को भी अपना सकती थी। अच्छा अब तो इत्मीनान हो गया।"

हमने कहा—"हाँ अब मुझे इत्मीनान है।"

बेगम ने बाहर जाते हुए कहा—"अच्छा अब मैं बाहर जा रही हूँ

आज दो तीन बेगमें मेरे साथ चाय पियेंगी जरा इन्तज़ाम ठीक रखना। केक और समोसे मै मँगाये लेती हूँ।"

यह कह कर उधर तो बेगम रवाना हुई और इधर खुदाबख्श दरवाज़े की आड़ से निकल कर बोले—"देख लिया हुजूर आपने मुल्लानी जी के अमल का असर। अभी अमल खत्म भी नहीं हुआ और नतीजा निकल आया।"

हमने कहा—"अच्छा खैर, वह अमल ही का नतीजा सही, मगर यह तुम्हारी क्या हरकत है कि तुम छिप कर हम लोगों की बातें सुना करते हो। मैं इसको पसन्द नहीं करता।"

खुदाबख्श ने कहा—"हुजूर गलती तो हुई। लेकिन चूँकि मेरा दिल लगा हुआ था उस मेहरोत्रा वाले किस्से में इसलिये मैंने इस पर ग़ौर भी न किया कि मै यह नामुनासिब बात कर रहा हूँ और यही जिक्र सुनकर दरवाजे की आड़ में खड़ा हो गया। माफ़ी चाहता हूँ, मगर हुजूर को भी अब तो मुल्लानी जी के अमल का क़ायल होना चाहिये। मैंने तो आज तक मुल्लानी जी के अमल को बेअसर देखा नहीं।"

हमने कहा—"मुल्लानी जी के अमल का तो मै उस वक्त क़ायल होता जब दरअसल कुछ क़िस्सा भी होता। मगर यहाँ तो कोई क़िस्सा था ही नहीं एक सिरे से।

खुदाबख्श ने कहा - "सरकार मतलब तो यह है कि आपके बेक़रार दिल को करार आ गया। यही अमल का असर है।"

हमने कहा—"अच्छा भई अच्छा यही सही। अब तुम जरा काम में लग जाओ। बेगम की कुछ सहेलियाँ चाय पर आ रही हैं। कुछ पकवान का इन्तज़ाम करलो।"

इक्कीस

मर्दों की बेपर्दगी के नतीजे आखिर सामने आने लगे। कल ही खातून पिक्चर पैलेस में कुछ मर्दों के बीच मारपीट हो गई और पुलिस ने जो हस्ताक्षेप किया तो दोनों तरफ़ के मर्दों ने कॉनिस्टिबिलनियों को उठा-उठा कर एक तरफ़ उछाल दिया और जो औरतें बीच में पड़ीं उनमें से भी किसी की कलाई मरोड़ी, किसी को धक्का देकर गिरा दिया। क़िस्सा यह बयान किया जाता है कि किसी औरत के पास एक मर्द था जिसकी तलाश में उस औरत का शौहर रहता था। मगर चूँकि वह पर्दे में था इसलिए उसे अब तक ढूँढ न सका था। लेकिन अब बेपर्दगी के क़ानून से फ़ायदा उठा उसने पर्दा उठा दिया और एक दिन किसी बाज़ार में उस मर्द को देख कर वहीं उससे एक-एक पानी चाहा मगर वह मर्द भाग गया और लड़ाई की नौबत न आ सकी। कल संयोग से सिनेमा में दोनों की मुठभेड़ हो गई और फिर जो झगड़ा हुआ है तो अच्छे-खासे बलवे का रूप धारण कर लिया। उस मर्द की तरफ़ से भी कुछ मर्द और कुछ औरतें थीं और इधर से भी कुछ मर्द और कुछ औरतें थीं। दोनों पार्टियों में खूब लड़ाई हुई और घायल हुईं पुलिस वालियाँ। बल्कि एक पुलिस कॉनिस्टिबिलनी तो इतनी ज़ख्मी हुई कि बेचारी अस्पताल में पहुँचते ही मर गई। बेगम को जब खबर मिली तो वह भी मौके पर पहुँची, मगर उस वक़्त तक झगड़ा करने वाले भाग चुके थे और

सिर्फ़ घायल पुलिस वालियाँ पड़ी सिसक रहीं थीं। इस झगड़े की सारे शहर में चर्चा थी, बल्कि आज पुरुष पर्दा रक्षक दल की ओर से एक जलसा भी था, वर्त्तमान सरकार के खिलाफ़ अविश्वास का प्रस्ताव पास करने के लिये। और सारे शहर में सचमुच बड़ा जोश फैला हुआ था कि इन जानवरों को घरों से निकाल कर अच्छी खासी शान्ति भंग की गई है और अब इस तरह की घटनाएँ रोज़ होती रहेंगी जिनकी कोई रोक-थाम पुलिस से इसलिए न हो सकेगी कि औरतों की पुलिस मर्दों को क़ाबू मे लाने में असमर्थ है। बेगम खुद भी परेशान थीं इसलिये कि आज शहर में आम हड़ताल मनाई गई थी और डर था कि कहीं जलसे में बेपर्दा मर्द पहुँच कर फिर कोई झगड़े की सूरत न पैदा करें। इसलिये हथियार बन्द पुलिस का पूरा इन्तजाम था और बेगम उनको आदेश दे रही थीं कि खलीकुन्निसा बेगम खुद कोतवाली आईं और बेगम को अलग ले जाकर कहा—"पुरुष पर्दा रक्षक दल के जलसे को अमन शान्ति के साथ हो जाना चाहिये। मैं यह नहीं चाहती कि जिस तरह पिछली हुकूमत ने हमारे जलसों को भंग करने की कोशिश की है और जिस तरह हमारे जलसों को पुलिस के ज़रिये नाकाम बनाने की कोशिश की है, वैसा ही हम भी करें। मैं कल ही पार्लीयामेन्ट के जलसे में शिरकत के लिए जा रही हूँ। इस बार वहाँ हंगामे को नज़र में रख कर काम रोको प्रस्ताव ज़रूर पेश होगा। सुना है साहबज़ादीपुर, दुख्तराबाद, नारीनगर में भी इस क़िस्म के हंगामे हुए हैं। हर इन्क़लाब के बाद इस तरह के तमाशे तो हुआ ही करते है। आप इसका पूरा खयाल रखियेगा कि जलसे में कुछ गड़बड़ न हो।"

बेगम ने उनसे वायदा कर लिया कि जलसा पूरी शान्ति के साथ हो जायगा। और उनके जाने के बाद अपने इन्तज़ाम में लग गईं। यह जलसा कोतवाली के सामने उसी मैदान में होने वाला था जिसमें

चुनाव में पोलिंग स्टेशन बनाया गया था। दिन ही से हर तरफ़ लाउड स्पीकर लगा दिये गये थे और ऊँचे से प्लेटफार्म पर पुरुष पर्दा रक्षक दल का झण्डा, जिस पर बुर्के की तस्वीर थी, लहरा रहा था। आख़िर तीसरा पहर होते-होते हजारों औरतें उस मैदान में जमा हो गईं। लेकिन शुक्र है कि कोई मर्द वहाँ नजर न आता था। हालाँकि डर था कि कहीं बेपर्दा मर्द भी उस जलसे में न चले आयें और झगड़ा करने की कोशिश करें। आख़िर ठीक चार बजे नारे लगने शुरू हो गये और हम दौड़ कर कोठे पर पहुँच गये कि जरा सैर ही करें जलसे की। हमारे पहुँचने के बाद लाउड स्पीकर से आवाज़ गूंजी :—

"मैं इस जलसे की सदारत के लिये अख्तर ज़मानी बेगम साहबा का नाम पेश करती हूँ।"

और सारा मजमा "अख्तर ज़मानी बेगम ज़िन्दाबाद" के नारों से गूँज उठा।

अख्तर ज़मानी बेगम जार्जट की निहायत ख़ूबसूरत साड़ी बाँधे जूड़े में फूल लपेटे सदारत की कुर्सी पर तशरीफ़ लाईं और फ़ौरन ही जलसे की कार्रवाई अपने जोशीले भाषण के साथ शुरू कर दी। इसमें शक नहीं कि अख्तर जमानी बेगम बहुत ही ज़ोरदार बोलने वाली हैं। बड़ा दबंग भाषण दिया और हद यह है कि भाषण करते करते यहाँ तक कह गईं कि :—

"कहाँ हैं आज मर्दों के इश्क़ में सबसे बड़ी दीवानी बी ख़ली कुन्निसा? अब आयें और संभालें अपने मर्दों को, उन मर्दों को जिनको देखकर आँखें सेंकने के शौक़ में पर्दे से बाहर तो निकलवाया है मगर अब उनके प्यारे उनकी सरकार के सँभाले नहीं सँभलते। उनके क़ातिलों ने क़त्ले-आम मचा रक्खा है। हमारी पार्टी ने इसी दिन के लिए मर्दों का

पर्दा उठाने का विरोध किया था और आज तक हम मर्दों का पर्दा उठाने का विरोध कर रही हैं। लेकिन इस सरफिरी मर्दराज सरकार ने अपनी हविस पूरी करने के पीछे सारे देश की तबाही मोल ली है तो अब यही सरकार उस सारी खूँरेज़ी की जिम्मेदार होगी जिसने पर्दे के क़ानून को खत्म करके मर्दों के बुर्के उतरवाये हैं। अभी क्या है, अभी तो देख लीजियेगा कि यह मर्द खुद इस सरकार की ईंट से ईंट बजा देंगे और किसी के सँभाले न सँभलेंगे। और मर्द राज दल की पगलियों को उस वक्त होश आयेगा जब मर्दों का पूरा क़ब्जा हो चुकेगा और नाज़ुकिस्तान मर्दिस्तान बन चुकेगा। मैं सरकार को चैलेंज देती हूँ कि वह आज भी पर्दा छोड़ने का क़ानून खत्म करने के सिलसिले में मुझसे नहीं बल्कि किसी पुरुष पर्दा रक्षक दल की जाहिल से जाहिल स्वयं सेविका से बहस करके पर्दे के खिलाफ़ किसी दलील में कामियाब हो जाय तो मैं पहली औरत होऊँगी जो अपने घर के मर्दों को बाज़ार में बेपर्दा ले आयेगी। लेकिन मुझे मालूम है कि पर्दे के खिलाफ़ दलील और बहस से जीता ही नहीं जा सकता। अलबत्ता अगर बेउसूली को उसूल बना लिया जाय तो बात ही दूसरी है।"

इस भाषण के बाद एक आध भाषण और हुए। अन्त में एक निन्दा का प्रस्ताव पास हुआ जिसमें वर्त्तमान सरकार के खिलाफ़ निंदात्मक शब्दों की भरमार थी। प्रस्ताव तालियों की गूँज में पास हो गया और सबसे अच्छी बात यह हुई कि जलसा अमन शान्ति के साथ खत्म हो गया।

दूसरे दिन के अखबारों में जलसे की पूरी कार्रवाई के साथ लेख भी थे और बड़ी-बड़ी नेत्रियों के वक्तव्य भी। मगर दैनिक 'सहेली' ने अपने अग्रलेख में यह इशारा किया था कि जिस पार्टी ने इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी लेकर मर्दों को पर्दे के बाहर निकलवाया है वही इस झगड़े

के सिलसिले में भी अपनी एक स्थायी योजना रखती है। और हमको आशा है कि इस योजना के सामने आते तक हम ख़्वाहमख़ाह सरकार की तरफ़ से लोगो के मन में बुराई पैदा न होने देंगी।

चुनांचे तीसरे ही दिन इस योजना की ख़बर भी आ गई। बेगम ने अख़बार लाकर हमको देते हुए कहा—"देख लो तुम, मैंने जो कहा था कि अब मर्दों को ज़िम्मेदारियाँ दिये बिना काम नहीं चल सकता, वही हुआ। विधान सभा ने तय किया है कि मर्दों को इन्तज़ामी मामलों में बराबर का हिस्सा दिया जाय और वह फ़िलहाल औरतों की निगरानी में काम सीखें इसके बाद मर्दों के सारे मामले इन्हीं मर्द हाकिमों के हवाले कर दिये जायें। इसके अलावा यह भी मंजूर हुआ है कि क़ाबिल और काम करने योग्य मर्दों को नाज़ुकिस्तान से बाहर भेजा जाय जिसमें कि वह नाज़ुकिस्तान से बाहर जाकर दूसरे देशों में राज-काज के इन्तज़ाम की ट्रेनिंग हासिल करें। और फिर नाज़ुकिस्तान आकर यहाँ का इन्तज़ाम सँभाल लें"

हमने कहा—"फिर अब क्या होगा?"

बेगम ने कहा—"मेरे साथ अगर किसी मर्द कोतवाल को भी लगा दिया तो मैं लम्बी छुट्टी ले लूँगी। मेरी छुट्टी बाक़ी भी है और काम करते-करते थक भी गई हूँ। मगर यही सोचती हूँ कि क्या करूँगी छुट्टी लेकर। लेकिन ऐसी सूरत में छुट्टी लेनी ही पड़ेगी. मैं इस दोरङ्गी में न रह सकूँगी।

हमने कहा—"मेरे ख़याल में तो आप यह कीजिये कि ख़लीक़ुन्निसा बेगम से सलाह किये बिना आप कुछ न कीजिये। वह सरकार की अधिकारिणी भी हैं और आप पर बेहद मेहरबान भी। इसलिये आप अपना मामला उन्हीं को सौंप दीजिये।"

बेगम उस वक्त तो टाल गईं लेकिन दूसरे दिन वह एक लम्बा सा

लिफाफ़ा लिये हुये हमारे पास आईं और हँसते हुए कहा—"मैंने कहा, सुनते हो ? लो यह तुम्हारे नाम सेन्ट्रल गवर्नमेन्ट की चिट्ठी आई है।"

हमने ताज्जुब से कहा—"हमारे नाम ? लो भला मुझको सरकारी चिट्ठी से क्या मतलब ?"

बेगम ने कहा—"देखो तो सही सचमुच तुम्हारे ही नाम है। लो पढ़ो।"

सचमुच वह तो हमारे ही नाम था। हमने और बेगम ने खामोशी से पढ़ना शुरू किया :—

"आदरणीय खानम बहादुरनी सईदा ख़ातून साहबा, कोतवालिनी राधानगर के श्रीमान् पति देव जी ! तसलीम !

ना़ज़ुकिस्तान सरकार को मर्दों का पर्दा उठा देने के बाद से अपने अमन क़ानून की रक्षा और इन्तजाम के लिये मर्द हाकिमों की ज़रूरत बड़ी तेजी से महसूस हो रही है और इस सिलसिले में सरकार ने तय किया है कि योग्य मर्दों को सरकारी खर्च पर ना़ज़ुकिस्तान के बाहर भेजकर ख़ास-ख़ास विभागों की ट्रेनिंग दी जाय जिसमें कि वह वापस आकर देश की अच्छी तरह सेवा कर सकें। सरकारी कागज़ों की जाँच-पड़ताल से मालूम हुआ है कि आपका सम्बन्ध हिन्दुस्तान से है और आप यहाँ की नागरिकता स्वीकार करने से पहले खुद अपने मुल्क में बेपर्दा थे। आपकी शिक्षा भी अच्छी है और आपमें इसकी काफ़ी क्षमता है कि आप ज़िम्मेदारी से काम कर सकेंगे। इसलिये सरकार ने आपका चुनाव किया है कि आप जल्दी से जल्दी हिन्दुस्तान जाकर पुलिस की ट्रेनिंग हासिल करें और फिर नाज़ुकिस्तान वापस आकर मर्दाना पुलिस की कमान अपने हाथ में लें। इस सिलसिले में नाज़ुकिस्तान के

कानूनों के अनुसार आपके लिये इनकार की कोई गुंजायश नहीं है आप जल्द जवाब दें कि आप कब रवाना हो सकेंगे।

दस्तख़त-
मोहिनी देवी
राष्ट्रनेत्री
नाज़ुकिस्तान"

हम और बेगम दोनों इस पत्र को पढ़कर सन्नाटे में आ गये। हमारे लिये इतनी लम्बी यात्रा कोई आसान बात न थी। शौकिया को कम से कम तीन साल के लिये छोड़ना हम पसन्द न करते। उसको साथ ले जाते भी न बन पड़ता था, यह ख़याल था कि बेगम परेशान होंगी। आखिर हमने सोचते-सोचते कहा—"सुनिये तो सही। आप खुद भी तो छुट्टी लेना चाहती थीं।"

बेगम ने कहा—"अच्छा, तो फिर?"

हमने कहा—"इस तरह सभी चल सकते हैं। मैं, आप और शौकिया।"

बेगम ने कहा—"मैं तो एक दूसरी बात सोच रही हूँ। क्या सच-मुच अब तुम्हारा पर्दा भी मुझको उठाना पड़ेगा? ट्रेनिंग हासिल करके जब तुम आओगे तो पर्दे में कैसे रह सकोगे?"

हमने कहा—"जब की बात जब के साथ है। पहले तो चलने या न चलने का फैसला करना है।"

बेगम ने कहा—"फैसला ही अब क्या हो सकता है। यह तो हुक्म है। आपको तो जाना ही पड़ेगा।"

हमने कहा—"और मैं बगैर तुम्हारे जा ही नहीं सकता, यह कान खोल कर सुन लो।"

बेगम तो न जाने क्या सोच रही थीं मगर हम सिर्फ यह सोच रहे थे कि इसी बहाने से हिन्दुस्तान तक पहुँचने का मौक़ा मिल रहा है। अगर सब को लेकर चले गये तब फिर निजात (मुक्ति) ही निजात है।

बाईस

यों तो लगभग बीस दिन से हमारे यहाँ सफ़र का सामान दुरुस्त हो रहा था लेकिन आज ख़ास तौर से बड़ी हलचल थी। बाहर जमाल बहन और घर में सिद्दीक़ भाई और मेहरोत्रा सामान दुरुस्त करने में लगे थे। बेगम बराबर दस दिन से दावतें खा रही थीं। एकाध हमारी भी दावत हुई। कल रात ही खलीकुन्निसा बेगम ने बेगम की दावत की थी और उनके शौहर ज़ाहिद अली खाँ साहब ने हमको भी बुलवाया था। दर असल बेगम को छुट्टी पर हमारे साथ जाने की इजाज़त ही खलीकुन्निसा बेगम की कोशिशों से मिली थी। नहीं तो यहाँ यह सवाल बड़ी आसानी पैदा हो सकता था कि कहीं हम दोनों बच्ची सहित इसी बहाने हिन्दुस्तान जाकर हिन्दुस्तान ही के न हो रहें। आज कोतवाली के स्टाफ़ ने बेगम को बड़ा ऐट-होम दिया था। इधर ये दावतें, उधर हमको यह फ़िक्र कि सामान में कोई चीज़ रह न जाय। आज शाम ही की गाड़ी से हमको बेगमाबाद रवाना होकर दूसरे दिन राष्ट्रनेत्री मोहिनी देवी के सामने पेश होना था और उसी शाम को हमारा जहाज़ बेगमाबाद के बन्दरगाह से लंगर उठाने वाला था। यह जहाज़ विशेष रूप से हमारे लिये ही मगवाया गया था। जहाज़ का यह रास्ता न था। उसको अदन से सीधा बम्बई जाना था। लेकिन यहाँ से ख़ास सरकारी आदेश गया कि जहाज़ इस तरफ़ से होता हुआ जाय। सारांश यह कि अब हमको किसी

न किसी तरह आज ही रात को यहाँ से रवाना होकर कल बेगमाबाद पहुँचना था। सामान तो सब ठीक हो ही चुका था। लेकिन कोई न कोई चीज़ बराबर याद आती चली जाती थी। मसलन यहाँ का खास तोहफ़ा था वह पत्थर जिस पर अपने आप तस्वीर उतर आती है, या यहाँ का खुर्मा मशहूर था। अमरूद के बराबर का खुर्मा, और ऐसा स्वादिष्ट कि हिन्दुस्तान वाले आम का मज़ा भूल जायें। ठीक समय पर ये दोनों चीज़ें याद आईं और तुरन्त मुहैया की गईं। सिद्दीक़ भाई का बुरा हाल था। रोते-रोते आँखें सूज गई थीं। हम उनके सामने जाने का साहस मुश्किल से कर पाते थे। आँखें चार होते ही खुद हमारा भी अजीब हाल होता था। बाहर यही हाल जमाल बहन का था। 'ऐट-होम' में सुना है कि बोलते-बोलते बेहोश हो गईं और बड़ी मुश्किल से उनको होश आया। हद यह है कि खलीकुन्निसा ऐसी मज़बूत दिल वाली महिला भी रो दीं। हालाँकि सबको यह मालूम था कि हम लोग कुछ दिनों के लिए ही जा रहे हैं मगर यहाँ इस हद तक सम्बन्ध बढ़ गये थे कि स्वदेश से जिस वक्त हमारी बेकस किश्ती रवाना हुई थी, हमको विदा करने वाला कोई न था और इस परदेश में यह गैर अपनों से बढ़कर अपनत्व के सबूत इच्छा से नहीं बल्कि अनायास दे रहे थे।

शाम को हम स्टेशन रवाना हुए। स्टेशन पर कहीं तिल धरने की जगह न थी। मालूम होता था कि सारा शहर सिमट कर आ गया है। बेगम के पहुँचते ही उन पर हारों और फूलों की बारिश शुरू हो गई और थोड़ी ही देर में वह फूलों में बिलकुल छिप कर रह गईं। बार-बार उनके गले से हार उतारे जाते थे और फिर उतने ही हो जाते थे। हम बुर्के में थे और हमको उस फ़र्स्ट क्लास के डिब्बे में पहुँचा दिया गया जो हमारे लिए सरकारी तौर पर 'रिजर्व' था। हमको पहुँचाने सिद्दीक़ भाई, मेहरोत्रा और खलीकुन्निसा बेगम के शौहर ज़ाहिद अली खाँ साहब आये थे।

सद्दीक़ भाई और जमाल बहन तो बेगमाबाद तक साथ जा रही थी। बाक़ी सब यहीं तक आये थे। आख़िर इन्जन ने सीटी दी और बेगम ने डिब्बे में क़दम रख कर रो रोकर औरतों से हाथ मिलाने शुरू कर दिये। मगर कहाँ तक ? हज़ारों औरतें तो थीं। आख़िर सब को वहीं से हाथ जोड़कर सलाम किया और ट्रेन रवाना हो गई।

बेगमाबाद के स्टेशन पर भी बेगम की बहुत सी सहेलियाँ उनको लेने आ गई थीं। यही निश्चय हुआ कि सारा सामान इसी वक्त जहाज़ पर पहुँचा दिया जाय और बेगम ख़ुद राष्ट्रनेत्री मोहिनी देवी की सेवा में चली जायें। हम लोगों ने भी यही उचित समझा कि जहाज़ पर ही ठहरें। दिन भर बेगम की दोस्त जो बेगमाबाद की डिप्टी कमिशनरिन थीं, इस बात का आग्रह करती रहीं कि भोजन उनके साथ किया जाय। लेकिन तय यही पाया कि इसमें झगड़ा है, खाना जहाज़ पर ही पहुँचा दिया जाय। अतएव बेगम तो स्टेशन के 'वेटिंग-रूम' में ही राष्ट्रनेत्री के पास जाने की तैयारियाँ करने लगीं और हम लोग जमाल बहन के साथ जहाज़ में आ गये जिसमें हमारे लिए दो फ़र्स्ट क्लास कमरे 'रिज़र्व' थे। उस जहाज़ के बाक़ी सारे मुसाफ़िरों को कड़ी मनाही थी कि वह क़िनारे पर क़दम न रक्खें। इसलिये नहीं कि वे बेपर्दा थे बल्कि इसलिये कि यहाँ के रहन सहन के तरीक़ों से वे परिचित न थे और मुमकिन था कि उनसे किसी को या किसी से उनको कोई शिकायत पैदा हो जाती। यहाँ की कुछ सौदागरनियाँ जहाज पर ही अपना माल बेचने के लिये गईं तो मालूम यह हुआ कि उनको अक्सर मुसाफ़िरों ने छेड़ा और उनको सख़्त ताज्जुब हुआ कि ये मर्द कैसे बेशर्म हैं जो ग़ैर औरतों से पर्दा तो ख़ैर करते ही नहीं, मगर उनको छेड़ते भी हैं। सारांश यह कि हम लोग जिस वक्त पहुँचे उस वक्त हमको सब मुसाफ़िर तमाशे की तरह देख रहे थे और हमारे बुर्क़ों पर हँस रहे थे, लेकिन जमाल बहन ने कप्तान से

इस सम्बन्ध में शिकायत की कि ये मुसफ़िर हालाँकि मर्द हैं और मर्दों का मर्दों से पर्दा कोई मानी नहीं रखता लेकिन ये हमारे मर्दों को इस तरह तमाशा बनाये रहेंगे, तो अच्छा न होगा।

कप्तान ने मुसाफ़िरों को वहाँ से हटा दिया और फिर हम चैन से बैठ सके। शौकिया किसी तरह जमाल बहन को नहीं छोड़ रही थी। वह भी उसे कलेजे से लगाये लगाये फिर रही थीं। उसका सारा बाजू तावीजों से लदा हुआ था और नन्हें-नन्हें गजरे उसके गले में पड़े थे। वह एक-एक चीज को हैरत से देख रही थी कि आखिर यह तमाशा क्या है। और यह क्या हो रहा है। थोड़ी-थोडी देर के बाद जमाल बहन उसको गले से लगा कर रोना शुरू कर देती थीं। और सिद्दीक़ भाई के सर पर तो रूमाल तक बंध चुका था। सर में दर्द होने लगा था बेचारे के रोते-रोते। अगर बुखार भी हो गया हो तो कोई ताज्जुब की बात नहीं। आखिर तीन बजे के क़रीब बेगम भी राष्ट्रनेत्री से भेंट करके और अपनी सारी सहेलियों से मिल-मिलाकर आ गईं। उनके साथ एक बड़ा सा थाल लिये, जिसके ऊपर ज़री का काम किया हुआ कपड़ा पड़ा था, एक सरकारी सन्तरिन थी।। बेगम ने आते ही कहा—"लीजिये साहब, मोहिनी देवी ने आपके लिये यह तोहफ़े भेजे हैं और शौकिया को यह दस हज़ार की थैली दी है। इसके अलावा मुझको एक जड़ाऊ तलवार प्रदान की है।'

जमाल बहन ने कहा—"बड़ी भाग्यशालिनी हो तुम। यहाँ यह तलवार सिवाय वज़ीरियों के और किसी को नहीं भेंट की जाती।"

बेगम ने कहा—"जी हाँ, इसी हैसियत से यह तलवार मिली है। मुझे पुलिस की वज़ारत का परवाना भी मिला है।"

जमाल बहन ने खुशी से उछल कर कहा—"तुझे खुदा की क़सम, देखूँ तो सही।'

और जब बेगम ने उनको वह परवाना दिखाया है तो वह दौड़ कर बेगम से लिपट गईं और भर्राये हुए स्वर में बोलीं—"यह हुई है एक बात। कोतवालिनी के बाद अभी तुम को तीन ग्रेड और तय करने थे तब कहीं यह पद मिल सकता था। लेकिन बात तो यह है कि खलीकुन्निसा बेगम ने तुम्हारे लिये बड़ा काम किया है।"

बेगम ने कहा—"खलीकुन्निसा बेगम के बारे में अगर मुझे यह मालूम होता तो मैं उनको उस ज़माने में कुछ और ठोक पीट लेती। यह सब करामात सिर्फ एक डंडे की है जो जलसा भंग करते वक्त मैंने उनकी पीठ पर जमा दिया था। कुछ भी हो, इसमें शक नहीं कि नाज़ुकिस्तान ने मुझको खरीद लिया।"

हम अपना यह उपन्यास यहीं तक लिखने पाये थे और इरादा था कि अब जहाज़ का लंगर उठवा देंगे कि बेगम ने कधे की तरफ़ से झाँक कर कहा—"खुदा करे ऐसा ही हो जाय।'

हमने क़लम रोक कर कहा—"खुदानख्वास्ता।"

बेगम ने कहा—"आहा। लीजिये इसका नाम भी मिल गया। इस उपान्यास का नाम रखिये खुदा करे या ए काश।'

हमने कहा—"जी नहीं, इससे अच्छा नाम आपने और आपकी बात-चीत ने हमको दे दिया है।"

"वह क्या?"

हमने कहा—"खुदानख्वास्ता।"